अक्तूबर, 2021
I.S.S.N. : 2457-0478

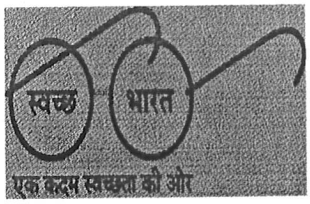

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक (प्रभारी)

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री कमला कान्त
श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2021 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अक्तूबर, 2021 अंक - 10

प्रधान संपादक (प्रभारी)
श्री कमला कान्त

संपादक
असलम खान

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2021) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ **https://bharatkosh.gov.in/product/product**

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

"माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम 2007" (2007 का अधिनियम संख्यांक 56) को इस अंक में प्रकाशित किया जा रहा है जिसका उद्देश्य भारत में माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण को सुनिश्चित करना है । इसमें कुछ महत्वपूर्ण बिंदु हैं जिनके अंतर्गत बच्चों और उत्तराधिकारियों को अपने बुजुर्ग माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल प्रदान करना अनिवार्य है । यह अधिनियम सभी नागरिकों पर लागू है जिसमें विभिन्न धर्मों के लोग शामिल हैं । इस अधिनियम के अधीन देखभाल और कल्याण के संबंध में विवादों को सुलझाने के लिए ट्रायब्यूनल स्थापित किए गए हैं । इस अधिनियम के अधीन ट्रायब्यूनल भरणपोषण की राशि का भुगतान मासिक रूप से किए जाने का आदेश कर सकता है, जिसमें भुगतान करने वाले की आय, संपत्ति और वित्तीय क्षमता जैसे कारकों को दृष्टिगत किया जा सकता है । इस अधिनियम के अधीन वरिष्ठ नागरिकों का सम्मानपूर्ण जीवन और स्वास्थ्य की पर्याप्त देखरेख सुनिश्चित की गई है ।

इस अधिनियम के अधीन वे अभिभावक और वरिष्ठ नागरिक जो कि अपनी आय अथवा अपनी संपत्ति द्वारा होने वाली आय से अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हैं, अपने वयस्क बच्चों अथवा संबंधियों से भरणपोषण प्राप्त करने के लिए आवेदन कर सकते हैं । "अभिभावक" में सगे और दत्तक माता-पिता और सौतेले माता और पिता सम्मिलित हैं । प्रत्येक वरिष्ठ नागरिक जो 60 वर्ष या उससे अधिक आयु का है, वह अपने संबंधियों से भी भरणपोषण की मांग कर सकता है, जिनका उनकी सम्पत्ति पर स्वामित्व है अथवा जो कि उनकी संपत्ति के उत्तराधिकारी हो सकते हैं । वरिष्ठ नागरिकों की उपेक्षा एवं परित्याग एक गंभीर अपराध है, जिसके लिए रुपये 5,000/- का जुर्माना या तीन माह का कारावास या दोनों हो सकते हैं । अधिकरण द्वारा मासिक भरणपोषण हेतु अधिकतम राशि 10,000/- रुपए प्रतिमाह तक का, आदेश किया जा सकता है । सभी शासकीय चिकित्सालयों में वरिष्ठ नागरिकों को बिस्तर

उपलब्ध कराया जाएगा । यह अधिनियम बच्चों या उत्तराधिकारियों द्वारा वरिष्ठ नागरिकों को उनकी संपत्ति से निष्कासित करने से रोकता है । जिन वरिष्ठ नागरिकों को समर्थन की आवश्यकता है, उनके लिए वृद्धाश्रम स्थापित करने का प्रावधान किया गया है । इसका उद्देश्य सामाजिक जिम्मेदारी के प्रति खरा उतरना और वरिष्ठ नागरिकों के स्वर्णिम वर्षों में उनका कल्याण सुनिश्चित करना है ।

यह अधिनियम वरिष्ठ नागरिकों को शारीरिक और मानसिक सुरक्षा प्रदान करने के उपाय उपलब्ध कराता है, उन्हें शोषण से बचाता है और उन्हें उचित स्वास्थ्य सुनिश्चित कराता है और समाज में सामाजिक समृद्धि बनाए रखता है वरिष्ठ नागरिकों को बल मिलता है । इस अधिनियम से सामाजिक सामंजस्य, दया, और सामाजिक सरोकार स्थापित किए जाने का प्रयास किया गया है ताकि हमारे वृद्ध अनुभवी सदस्यों को उचित सम्मान और समर्थन मिले ।

इस अंक में माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 की महत्ता को **सिंधु बी.** बनाम **बालाचन्द्रन और अन्य** (2021) 2 सि. नि. प. 486 वाले मामले में बखूबी दर्शाया गया है । इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालयों के महत्वपूर्ण निर्णयों के रूप में अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । इस अंक में सामाजिक कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि-विद्यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अक्तूबर, 2021

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अनुज कुमार **बनाम** बिहार राज्य	546
क्यूटिस बायोटेक सोल प्रोप्राइटरशिप कन्सर्न **बनाम** सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ़ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड	560
कुणाल विनय कुमार रेलॉन **बनाम** धनसुख हरजीभाई पटेल	500
प्रियंका चौहान **बनाम** प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय और अन्य	445
पी. सुधा **बनाम** राजेश	473
भारती आर्य **बनाम** राकेश आर्य	586
मोहम्मद अमीन बट **बनाम** जम्मू-कश्मीर स्कूल शिक्षा बोर्ड और अन्य	531
सिंधु बी. **बनाम** वी. बालाचन्द्रन और अन्य	486

संसद् के अधिनियम

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 17

जम्मू-कश्मीर राज्य शिक्षा बोर्ड अधिनियम, 1975 (1975 का 28)

– धारा 13 [सपठित जम्मू-कश्मीर राज्य शिक्षा बोर्ड विनियम, 1992 का विनियम-17] – जन्मतिथि में सुधार – आवेदन की परिसीमा – परिसीमा अवधि के बीत जाने पर याची द्वारा जन्मतिथि में सुधार हेतु आवेदन किया जाना – शिक्षा बोर्ड द्वारा आवेदन का विलंबित पाकर ख़ारिज किया जाना – याची के पक्ष में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र वर्ष 1980 में जारी किया गया था और जन्मतिथि में संशोधन की मांग का आवेदन वर्ष 2009 में अर्थात् 29 वर्ष बाद किया गया जोकि युक्तियुक्त प्रतीत होता है, अतः संशोधन की मांग करने वाले आवेदन को खारिज करने सम्बन्धी शिक्षा बोर्ड के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

मोहम्मद अमीन बट बनाम **जम्मू-कश्मीर स्कूल शिक्षा बोर्ड और अन्य** 531

बिहार पंचायत राज अधिनियम, 2006 (2006 का 6)

– धारा 18(5) – मुखिया का हटाया जाना – वित्तीय अनियमितताएं और रिश्वत – कर्तव्य की अवहेलना तथा पदीय शक्ति का दुरुपयोग – जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत – बी. डी. ओ. और डी. डी. सी. के माध्यम से जांच रिपोर्ट का मुख्य सचिव पंचायती राज विभाग को भेजा जाना और साथ ही सतर्कता पुलिस थाने में मामला दर्ज किया जाना – विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के समक्ष मामला लंबित पाया जाना किंतु मुख्य सचिव द्वारा जांच में याची का दोषी पाया जाना – यदि विशेष न्यायालय (सतर्कता) के समक्ष मामला लंबित

पृष्ठ संख्या

है तब भी मुख्य सचिव, पंचायतीराज विभाग द्वारा चलाई गई याची को मुखिया के पद से हटाए जाने की प्रक्रिया को अवैध और निराधार नहीं कहा जा सकता ।

अनुज कुमार बनाम **बिहार राज्य** 546

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 (2007 का 56)

– धारा 4 – पिता द्वारा पुत्री के पक्ष में समझौता विलेख निष्पादित किया जाना – पुत्री द्वारा पिता का भरणपोषण किया जाना – तत्पश्चात् भरणपोषण में व्यतिक्रम किया जाना – पिता द्वारा समझौता विलेख रद्द किया जाना – अपील के लंबित रहने के दौरान अपर मुंसिफ न्यायालय द्वारा रद्दकरण विलेख शून्य ठहराया गया है, इसलिए याची-पुत्री यह अभिवाक् नहीं कर सकती कि समझौता विलेख रद्द कर दिया गया था अर्थात् वह समझौता विलेख के अंतर्गत अपने प्रत्यर्थी-पिता का भरणपोषण करने के लिए बाध्य है ।

सिंधु बी. बनाम **वी. बालाचन्द्रन और अन्य** 486

– धारा 4 और 32 [सपठित केरल माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण नियम, 2009 का नियम 13(2), (3)] – पिता को भरणपोषण दिया जाना – पुत्री द्वारा यह वचन दिया गया है कि वह अपने पिता को 4,000/- रुपए प्रति माह का संदाय करने को तैयार है, ऐसी स्थिति में पुत्री की आय का कोई स्रोत न होने जैसे अन्य कोई भी कारक सुसंगत नहीं हैं, इसलिए पुत्री भरणपोषण का संदाय करने के लिए बाध्य है ।

सिंधु बी. बनाम **वी. बालाचन्द्रन और अन्य** 486

पृष्ठ संख्या

व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 (1999 का 47)

– धारा 15, 23, 29 और 31 – व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' – व्यादेश – प्रत्यर्थी द्वारा व्यापार चिह्न प्रयोग किए जाने पर अपीलार्थी की ओर से आक्षेप किया जाना – प्रत्यर्थी-सीरम इंस्टीट्यूट में व्यापार चिह्न अर्थात् 'कोविशील्ड' शब्द का सृजन किया है और इसके अंतर्गत वैक्सीन के विकास और विनिर्माण की दिशा में पर्याप्त कदम उठाए हैं, इस प्रकार प्रत्यर्थी द्वारा इस चिह्न का प्रयोग पूर्व में किए जाने से संबंधित अभिलेख पर यथोचित और विश्वसनीय सामग्री उपस्थित है, अत: निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

क्यूटिस बायोटेक सोल प्रोप्राइटरशिप कन्सर्न बनाम **सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ़ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड** 560

– धारा 15, 23, 29 और 31 – प्रत्यर्थी द्वारा व्यापार चिह्न का अतिक्रमण किए जाने से संबंधित अपीलार्थी की ओर से आरोप लगाया जाना – व्यादेश की प्रार्थना – सुविधा का संतुलन प्रत्यर्थी के पक्ष में पाया जाना – प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा भारत सरकार को पहले ही वैक्सीन की खुराक की पूर्ति की जा चुकी है और पुन: 10 करोड़ खुराक का क्रय किए जाने हेतु आर्डर दिया गया है और साथ ही प्रत्यर्थी ने यह भी साबित किया है कि इस दौरान वैक्सीन के विकास और अनुसंधान पर 28 करोड़ रुपए खर्च किए गए हैं, इस प्रकार सुविधा का संतुलन प्रत्यर्थी के पक्ष में है क्योंकि प्रत्यर्थी के विरुद्ध व्यादेश पारित करने में उसके कारबार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, अत: निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

क्यूटिस बायोटेक सोल प्रोप्राइटरशिप कन्सर्न बनाम **सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ़ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड** 560

पृष्ठ संख्या

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 1, नियम 10, आदेश 8, नियम 6क और आदेश 22, नियम 10 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – वाद लंबित रहने के दौरान अंतरिती/प्रतिवादियों को पक्षकार बनाना – प्रतिवादियों का पहले से ही प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार होना – याची पहले से ही वाद के प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार है और उसकी प्रतिरक्षा के अधिकार को किसी भी प्रकार से कम नहीं किया गया है और यह कि जब प्रत्यर्थियों का यह कहना है कि मूल वादी और याची एक-दूसरे के नातेदार हैं और इन्हीं के मध्य विक्रय संव्यवहार हुआ है, तब याची को पुनः पक्षकार नहीं बनाया जा सकता, अतः निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

कुणाल विनय कुमार रेलॉन बनाम **धनसुख हरजीभाई पटेल** 500

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1)(i-क) – विवाह-विच्छेद – पति द्वारा क्रूरता कारित किया जाना – पत्नी द्वारा पति पर विवाहेत्तर सम्बन्ध बनाने का आरोप लगाया जाना – पति द्वारा दी गई मानसिक यातना से पत्नी का गर्भपात हो जाना – पति की ओर से किसी भी आरोप का खंडन न किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई क्रूरता के सम्बन्ध में अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का खंडन प्रत्यर्थी-पति की ओर से नहीं किया गया है, ऐसी स्थिति में "युक्तियुक्त संदेह के परे" वाले सिद्धांत के बजाय "अधिसंभाव्यता की प्रबलता" वाला सिद्धांत लागू होगा, अतः पत्नी विवाह-विच्छेद की हकदार

पृष्ठ संख्या

है और कुटुंब न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

पी. सुधा बनाम **राजेश** 473

– धारा 13ख(2) – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – शीतलन (प्रतीक्षा) अवधि का अधित्याग – शीतलन अवधि को तब तक अधित्यजित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि पक्षकारों के पुनर्वास की दृढ़ संभावना हो ।

भारती आर्य बनाम **राकेश आर्य** 586

– धारा 13ख(2) – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – छह मास की अवधि का अधित्यजन – पति-पत्नी का एक वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रहना – वैवाहिक संबंधों के पुनर्जीवित न होने की संभावना – पति-पत्नी अपने विवाह के अनुष्ठापित होने के चार दिन के भीतर ही अलग-अलग हो गए थे और उनके बीच विवाहेत्तर सम्भोग भी नहीं हुआ था, दोनों पक्षकार साक्षर हैं और उन्होंने पूरे भान मन से तय किया है कि उन्हें अलग होना है, ऐसी स्थिति में प्रतीक्षा अवधि पूरी करने से उनकी पीड़ा बढ़ेगी ही, अतः छह मास की कानूनी अवधि का अधित्यजन किया जाना न्यायोचित है और कुटुंब नयायालय का निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

प्रियंका चौहान बनाम **प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय और अन्य** 445

(2021) 2 सि. नि. प. 445 **इलाहाबाद**

प्रियंका चौहान

बनाम

प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय और अन्य

(2021 की प्रथम अपील सं. 32)

तारीख 10 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र त्रिपाठी और न्यायमूर्ति संजय कुमार पचोरी

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13ख(2) – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – छह मास की अवधि का अधित्यजन – पति-पत्नी का एक वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रहना – वैवाहिक संबंधों के पुनर्जीवित न होने की संभावना – पति-पत्नी अपने विवाह के अनुष्ठापित होने के चार दिन के भीतर ही अलग-अलग हो गए थे और उनके बीच विवाहेत्तर सम्भोग भी नहीं हुआ था, दोनों पक्षकार साक्षर हैं और उन्होंने पूरे भान मन से तय किया है कि उन्हें अलग होना है, ऐसी स्थिति में प्रतीक्षा अवधि पूरी करने से उनकी पीड़ा बढ़ेगी ही, अतः छह मास की कानूनी अवधि का अधित्यजन किया जाना न्यायोचित है और कुटुंब नयायालय का निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

इस मामले में 2020 की विवाह-विच्छेद अर्जी सं. 592 (श्रीमती प्रियंका चौहान बनाम सौरभ चौहान) में भारसाधक प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, गौतमबुद्ध नगर द्वारा तारीख 12 जनवरी, 2021 को पारित किए गए उस आदेश की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए प्रथम अपील फाइल की गई है जिसके अनुसार विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा कोई कारण दिए बिना आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को नामंजूर कर दिया गया था । पारस्परिक विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करने से पूर्व द्वितीय

समावेदन के लिए छह माह की कानूनी अवधि के अधित्यजन के लिए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी द्वारा संयुक्त शपथपत्र (प्रदर्श-18/सी) का अवलंब लेते हुए आवेदन (प्रदर्श-17/सी) फाइल किया गया है । कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1955 की धारा 19 के अधीन वर्तमान अपील पर विचार करने के लिए यह प्रश्न उठता है कि क्या हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख(2) के अधीन पारस्परिक सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री को पारित करने के समावेदन पर नियत छह माह की न्यूनतम अवधि में किसी भी असाधारण अवस्थिति में छूट प्रदान की जा सकती है या नहीं । जिन तथ्यों के आधार पर वर्तमान अपील फाइल की गई है वे संक्षेप में इस प्रकार हैं कि पारस्परिक सहमति से विवाह के विघटन की डिक्री के लिए विवाह-विच्छेद अर्जी अपीलार्थी और दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा अधिनियम की धारा 14 के अधीन फाइल की गई थी जिसे प्रारंभ में 2020 का प्रकीर्ण मामला सं. 89 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था तथा विवाह की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात् उसे मूल वाद के रूप में रजिस्ट्रीकृत कर दिया गया । अधिनियम की धारा 13ख की उपधारा (2) के अधीन एक संयुक्त आवेदन (प्रदर्श-17/सी) संयुक्त शपथपत्र (प्रदर्श-18/सी) के साथ पक्षकारों द्वारा यह कथन करते हुए फाइल किया गया कि अपीलार्थी (पत्नी) और द्वितीय प्रत्यर्थी पति का विवाह तारीख 11 दिसंबर, 2019 को हिन्दू रीति-रिवाजों के साथ अनुष्ठापित हुआ था । अपीलार्थी रोहिणी दिल्ली की जबकि द्वितीय प्रत्यर्थी नोएडा, गौतमबुद्ध नगर का निवासी है । यह दलील दी गई कि विवाह की तारीख से अपीलार्थी ने अपने दाम्पत्य गृह में केवल चार दिन ही वास किया था और तारीख 16 दिसंबर, 2019 से अपीलार्थी नई दिल्ली में अपने पैतृक गृह में रहने लगी थी । स्वभाव और सैद्धांतिक मतभेदों के कारण उनका विवाह के पश्चात् उनके बीच सहवास नहीं हो सका और दोनों तारीख 16 दिसंबर, 2019 से अलग-अलग रह रहे हैं । यह दलील दी गई है कि दोनों पक्षकारों के कुटुंब के सदस्यों और शुभचिंतकों द्वारा कई प्रयास किए गए किन्तु वे सुखद वैवाहिक जीवन का एक साथ निर्वाह करने हेतु समझौता करने में सफल नहीं हो सके । जब समाधान के सभी प्रयास विफल हो गए, तब अंततः

उन्होंने पारस्परिक विवाह-विच्छेद के लिए तारीख 24 जुलाई, 2020 को लिखित रूप में एक समझौता निष्पादित किया । इसके मद्देनजर, पारस्परिक समझौता तारीख 27 जुलाई, 2020 की अनुसूची-क में उल्लिखित वस्तुओं के विवरण को सभी शुभचिंतकों की उपस्थिति में अपीलार्थी को सौंप दिया गया था । तारीख 24 जुलाई, 2020 के पारस्परिक समझौते के माध्यम से यह भी सहमति हुई कि समझौते की अनुसूची-ख में उल्लिखित वस्तुओं को श्री झंडा सिंह के पुत्र सुधीर की अभिरक्षा में रखा जाएगा जो दोनों पक्षकारों के निकट नातेदार और शुभचिंतक हैं और इन वस्तुओं को विवाह-विच्छेद की अर्जी के द्वितीय समावेदन के पश्चात् अपीलार्थी को सौंप दिया जाएगा तथा विवाह-विच्छेद की अर्जी में अपीलार्थी का कथन पारस्परिक सहमति से फाइल किया जाएगा । यह दावा किया जा रहा है कि बिना किसी असम्यक् प्रभाव, धमकी या प्रपीड़न के, दोनों पक्षकारों ने विवाह-विच्छेद की डिक्री के माध्यम से अपने विवाह को विघटित करना विनिश्चित किया है । कुटुंब न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि मामले के विशिष्ट तथ्यों पर विचार किए बिना न्यायालय ने आज तक पक्षकारों के मध्य सुलह और मध्यस्थता के लिए कोई प्रयास नहीं किया है । कुटुंब न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर यह अपील फाइल की गई है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में सुनवाई के दूसरे दिन दोनों पक्षकार उपस्थित थे और उन्होंने अलग-अलग सुस्पष्ट कथन किया है कि उनके विवाह के अनुष्ठापित होने के चार दिनों के भीतर ही वे अलग हो गए थे और यहां तक कि विवाहोत्तर संभोग भी नहीं हुआ था । दोनों साक्षर हैं और उन्होंने पूरे भान मन से तय किया है कि उन्हें अलग होना है । हमने यह जानने का भी प्रयास किया कि पक्षकारों का उक्त कथन स्वेच्छा से दिया गया है या नहीं । उन्हें यह जवाब देने में कोई संकोच नहीं था कि इस तरह के विनिश्चय के दौरान उन पर कोई भी बल, कपट या अनुचित प्रभाव कारित नहीं किया गया है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, न्यायालय का यह मत है कि न्यायालय ऐसे प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपने विवेक

का प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा जहां पक्षकारों के बीच सहवास को पुन: प्रारंभ करने की कोई भी संभावना न हो अपितु अनुकल्पी पुनर्वास की संभावना हो । वर्तमान मामले में पत्नी अपने दांपत्य निवास में केवल चार दिन ही रही थी और एक वर्ष से अधिक समय से पक्षकार अलग-अलग रह रहे हैं । विवाहोत्तर संभोग कभी भी नहीं हुआ हैं । उन्होंने न्यायालय के समक्ष कथन भी किया है कि वे साथ नहीं रहना चाहते हैं और उनके बीच सुलह का कोई अवसर नहीं है, तथा प्रतीक्षा अवधि केवल उनकी पीड़ा को ही बढ़ाएगी । उन्होंने कथन किया है कि यदि विवाह-विच्छेद को मंजूरी दे दी जाती है तो उनके भविष्य बेहतर हो सकता है । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि विद्वान् भारसाधक प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने मामले के तथ्यों के साथ उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि पर विचार किए बिना ही आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को खारिज कर दिया था, इसलिए अपेक्षित आदेश अपास्त किया जाता है । आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को मंजूर किया जाता है । तद्नुसार वर्तमान प्रथम अपील मंजूर की जाती है । विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय को निदेश दिया जाता है कि वे 2002 के मूल वाद सं. 592 पर शीघ्रता से या इस निर्णय की कम्प्यूटरीकृत प्रति प्रस्तुत करने के अधिमानत: 7 दिनों के भीतर विनिश्चय करे । (पैरा 31, 32 और 33)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	2019 (134) ए. एल. आर. 488 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 ए. एल. एल. 560 : **आर्ची अग्रवाल** बनाम **प्रधान न्यायाधीश** ;	21
[2019]	(2019) 9 एस. सी. सी. 409 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 4914 : **आर. श्रीनिवास कुमार** बनाम **शामेथा** ;	20
[2017]	(2017) 8 एस. सी. सी. 746 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 4417 : **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर** ;	18, 19

[2012] (2012) 8 एस. सी. सी. 580 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2890 : **देविंदर सिंह नरूला** बनाम **मीनाक्षी नांगिया** ; 27

[2009] (2009) 10 एस. सी. सी. 415 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 229 : **अनिल कुमार जैन** बनाम **माया जैन** ; 25

[2009] (2009) 81 ए. आई. सी. 599 बम्बई : **सुषमा** बनाम **प्रमोद** ; 30

[2008] (2008) 5 महाराष्ट्र ला जर्नल 27 : **मितेन** बनाम **भारत संघ** ; 29

[2007] (2007) 5 सी. टी. सी. 870 = ए. आई. आर. 2008 मद्रास 76 : **के. तिरूवेंगदम** बनाम **कोई नहीं** ; 28

[2007] (2007) 2 एस. सी. सी. 564 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 2083 : **जगराज सिंह** बनाम **बीरपाल कौर** । 16

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की प्रथम अपील सं. 32.

भारसाधक प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, गौतमबुद्ध नगर द्वारा तारीख 12 जनवरी, 2021 को पारित किए गए आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री पंकज अग्रवाल

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री उत्कर्षिनी सिंह

निर्णय

अपीलार्थी-पत्नी के विद्वान् काउंसेल श्री पंकज अग्रवाल और द्वितीय प्रत्यर्थी-पति के विद्वान् काउंसेल सुश्री उत्कर्षिनी सिंह को सुना ।

2. छूट के लिए आवेदन को मंजूर किया जाता है । अपील को नियमित संख्या दी जाए ।

3. वर्तमान प्रथम अपील 2020 की विवाह-विच्छेद अर्जी सं. 592 (श्रीमती प्रियंका चौहान बनाम सौरभ चौहान) में भारसाधक प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, गौतमबुद्ध नगर द्वारा तारीख 12 जनवरी, 2021 को पारित किए गए उस आदेश की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए फाइल की गई है जिसके अनुसार विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा कोई कारण दिए बिना आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को नामंजूर कर दिया गया था । पारस्परिक विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करने से पूर्व द्वितीय समावेदन के लिए छह माह की कानूनी अवधि के अधित्यजन के लिए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी द्वारा संयुक्त शपथपत्र (प्रदर्श-18/सी) का अवलंब लेते हुए आवेदन (प्रदर्श-17/सी) फाइल किया गया है ।

4. कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1955 की धारा 19 के अधीन वर्तमान अपील पर विचार करने के लिए यह प्रश्न उठता है कि क्या हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख(2) के अधीन पारस्परिक सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री को पारित करने के समावेदन पर नियत छह माह की न्यूनतम अवधि में किसी भी असाधारण अवस्थिति में छूट प्रदान की जा सकती है या नहीं ।

5. जिन तथ्यों के आधार पर वर्तमान अपील फाइल की गई है वे संक्षेप में इस प्रकार हैं कि पारस्परिक सहमति से विवाह के विघटन की डिक्री के लिए विवाह-विच्छेद अर्जी अपीलार्थी और दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा अधिनियम की धारा 14 के अधीन फाइल की गई थी जिसे प्रारंभ में 2020 का प्रकीर्ण मामला सं. 89 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था तथा विवाह की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात् उसे मूल वाद के रूप में रजिस्ट्रीकृत कर दिया गया । अधिनियम की धारा 13ख की उपधारा (2) के अधीन एक संयुक्त आवेदन (प्रदर्श-17/सी) संयुक्त शपथ-पत्र (प्रदर्श-18/सी) के साथ पक्षकारों द्वारा यह कथन करते हुए फाइल किया गया कि अपीलार्थी (पत्नी) और द्वितीय प्रत्यर्थी पति का विवाह तारीख 11 दिसंबर, 2019 को हिन्दू रीति-रिवाजों के साथ अनुष्ठापित हुआ था । अपीलार्थी रोहिणी दिल्ली की जबकि द्वितीय प्रत्यर्थी नोएडा,

गौतमबुद्ध नगर का निवासी है । यह दलील दी गई कि विवाह की तारीख से अपीलार्थी ने अपने दाम्पत्य गृह में केवल चार दिन ही वास किया था और तारीख 16 दिसंबर, 2019 से अपीलार्थी नई दिल्ली में अपने पैतृक गृह में रहने लगी थी । स्वभाव और सैद्धांतिक मतभेदों के कारण उनका विवाह के पश्चात् उनके बीच सहवास नहीं हो सका और दोनों तारीख 16 दिसंबर, 2019 से अलग-अलग रह रहे हैं । यह दलील दी गई है कि दोनों पक्षकारों के कुटुंब के सदस्यों और शुभचिंतकों द्वारा कई प्रयास किए गए किन्तु वे सुखद वैवाहिक जीवन का एक साथ निर्वाह करने हेतु समझौता करने में सफल नहीं हो सके । जब समाधान के सभी प्रयास विफल हो गए, तब अंततः उन्होंने पारस्परिक विवाह-विच्छेद के लिए तारीख 24 जुलाई, 2020 को लिखित रूप में एक समझौता निष्पादित किया । इसके मद्देनजर, पारस्परिक समझौता तारीख 27 जुलाई, 2020 की अनुसूची-क में उल्लिखित वस्तुओं के विवरण को सभी शुभचिंतकों की उपस्थिति में अपीलार्थी को सौंप दिया गया था । तारीख 24 जुलाई, 2020 के पारस्परिक समझौते के माध्यम से यह भी सहमति हुई कि समझौते की अनुसूची-ख में उल्लिखित वस्तुओं को श्री झंडा सिंह के पुत्र सुधीर की अभिरक्षा में रखा जाएगा जो दोनों पक्षकारों के निकट नातेदार और शुभचिंतक हैं और इन वस्तुओं को विवाह-विच्छेद की अर्जी के द्वितीय समावेदन के पश्चात् अपीलार्थी को सौंप दिया जाएगा तथा विवाह-विच्छेद की अर्जी में अपीलार्थी का कथन पारस्परिक सहमति से फाइल किया जाएगा । यह दावा किया जा रहा है कि बिना किसी असम्यक् प्रभाव, धमकी या प्रपीड़न के, दोनों पक्षकारों ने विवाह-विच्छेद की डिक्री के माध्यम से अपने विवाह को विघटित करना विनिश्चित किया है ।

6. कुटुंब न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि मामले के विशिष्ट तथ्यों पर विचार किए बिना न्यायालय ने आज तक पक्षकारों के मध्य सुलह और मध्यस्थता के लिए कोई प्रयास नहीं किया है । जबकि उन्होंने अभिवाक् किया कि स्वभाव और सैद्धांतिक मतभेदों के कारण

विवाहोत्तर संभोग नहीं हो सका था, और दोनों तारीख 16 दिसंबर, 2019 अर्थात् विवाह के पश्चात् एक साल से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं ; सुलह के सभी प्रयास विफल रहे ; वे पारस्परिक विवाह-विच्छेद के लिए एक लिखित समझौते तक पहुंचे हैं, तारीख 20 जुलाई, 2020 को निष्पादित किये गए पारस्परिक समझौते की अनुसूची-क में उल्लिखित सामग्रियों को अपीलार्थी को सौंप दिया गया और समझौते की अनुसूची-ख में उल्लिखित दोनों पक्षकारों की सामग्रियों को सुधीर कुमार की अभिरक्षा में रखा गया है । पक्षकारों ने निर्वाहिका सहित अपने मतभेदों का वास्तविक रूप से परिनिर्धारिण कर लिया है और पक्षकारों के पृथक्करण की एक वर्ष की कानूनी अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी है ।

7. अधिनियम की धारा 23 पक्षकारों के बीच सुलह कराने के प्रयास के संबंध में प्रक्रिया का भी उपबंध किया गया है । अधिनियम की धारा 23 की उपधारा (1)(खख) में यह उपबंध किया गया है कि इस अधिनियम के अधीन कोई भी अनुतोष प्रदान करने से पूर्व, न्यायालय को इस बात से संतुष्ट होना होगा कि पारस्परिक सहमति के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा की गई है तथा ऐसी सहमति को बल, कपट या अनुचित प्रभाव द्वारा अभिप्राप्त नहीं किया गया है ।

8. माननीय उच्चतम न्यायालय ने दृढ़तापूर्वक से यह मत व्यक्त किया है कि कारणों को अभिलिखित करना न्याय प्रदान करने के सारभूत लक्षण हैं । एक मुवक्किल जब विधि के अनुसार किसी भी शिकायत के साथ न्यायालय से अनुरोध करता है तो उसे अपनी प्रार्थना को मंजूर या नामंजूर किए जाने के कारणों को जानने का अधिकार है । कारण आदेशों की आत्मा है । कारणों को अभिलिखित न करने से दो दोष उत्पन्न हो सकते हैं । पहला यह कि इससे प्रभावित पक्षकार के प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न कर सकता है और दूसरा यह कि इससे न्याय के उचित प्रशासन में बाधा उत्पन्न होती है । ये सिद्धांत न केवल प्रशासनिक या कार्यकारी कार्रवाइयों पर लागू होते हैं, बल्कि वास्तव में समान बल के और अधिक यथार्थता के साथ लागू होते हैं । बिना कोई कारण दिए निर्णय दिया जाना उस व्यक्ति के विरुद्ध पूर्वाग्रह का कारण बनता है

जिस व्यक्ति का संबंध उस निर्णय से है ; क्योंकि मुवक्किल उस कारण को जानने में असमर्थ रहता है जिसके आधार पर न्यायालय ने उसका दावा खारिज किया था और इससे उसे उस निर्णय को उच्चतम न्यायालय के समक्ष चुनौती देने की दशा में पर्याप्त और समुचित आधार लेने में बाधा भी कारित होती है ।

9. विधि की सुस्थापित स्थिति यह है कि कारण बताने में विफलता न्याय से इनकार करने के समान है । कारण, प्रश्नगत विवाद का विनिश्चय करने वाले के मन और जिस विनिश्चय या निष्कर्ष पर पहुंचा गया है, के मध्य की सजीव कड़ी होती है । कारण व्यक्तिपरकता को वस्तुनिष्ठता से प्रतिस्थापित करता है । कारण अभिलिखित करने की बात पर बल देने की वजह यह है कि यदि विनिश्चय से गूढ़ तथ्य सामने आ जाता है तो ऐसी चुप्पी से न्यायालयों के लिए अपने अपीली कार्य करने या विनिश्चय की वैधता तय करने में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करना लगभग असंभव हो सकता है । कारण जानने का अधिकार स्वस्थ न्याय प्रणाली का एक अपरिहार्य भाग है, कारण कम से कम यह उपदर्शित करने के लिए पर्याप्त होता है कि न्यायालय के समक्ष मामले में विवेक का उपयोग किया गया है । एक अन्य युक्तिसंगत बात यह है कि प्रभावित पक्षकार यह जान सकता है कि विनिश्चय उसके विरुद्ध क्यों पारित किया गया है । नैसर्गिक न्याय की लाभकारी आवश्यकताओं में से एक यह है कि आदेश दिए जाने के कारणों को स्पष्ट करना है, दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि स्पष्ट बोलना है । गूढ़ तथ्य का रहस्यमयी आशय, आमतौर पर न्यायिक या अर्ध-न्यायिक प्रक्रिया से मेल नहीं खाता है ।

10. पक्षकारों ने दूसरे समावेदन के लिए छह माह की अवधि में इस आधार पर अधित्यजन की ईप्सा की है कि वे पिछले एक वर्ष से अधिक समय से अलग रह रहे हैं, और उनके पुनर्मिलन की कोई संभावना नहीं है । इसमें किसी भी प्रकार की और देरी जीवन में उनके पुनर्वास की संभावनाओं को प्रभावित करेगी ।

11. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि उनके स्वभाव और सैद्धांतिक मतभेदों के कारण पक्षकारों के बीच सुलह का कोई

अवसर नहीं है । विवाहोत्तर संभोग नहीं हो पाया है और विवाह के चार दिनों के पश्चात् से ही दोनों अलग रह रहे हैं ।

12. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने आगे प्रस्तुत किया है कि प्रतीक्षा अवधि का उद्देश्य जल्दबाजी में कोई कदम उठाए जाने के प्रति एक सुरक्षोपाय है ताकि अन्यथा मतभेदों को दूर करके मेल-मिलाप कराया जा सके । इसका उद्देश्य अर्थहीन विवाह को कायम रखना नहीं है और न ही पक्षकारों की पीड़ा को ऐसी स्थिति में बढ़ाना है जब सुलह का कोई अवसर न हो ।

13. द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने भी अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उठाए गए तर्कों का समर्थन किया है । उन्होंने यह भी दलील दी है कि सुलह की कोई संभावना नहीं है और पक्षकारों के हित के लिए यह न्यायालय पक्षकारों को इस दुविधा से बाहर निकाल सकता है और प्रविलंबित कर सकता है ।

14. तारीख 9 जनवरी, 2021 को मामले पर विचार करते हुए अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के निवेदन पर मामले को स्थगित कर दिया गया और तारीख 2 फरवरी, 2021 को सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया । द्वितीय प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल सुश्री उत्कर्षनी सिंह उपस्थित हुई है । अपीलार्थी एवं द्वितीय प्रत्यर्थी भी न्यायालय में उपस्थित हैं । दोनों पक्षकारों ने न्यायालय के समक्ष सुस्पष्ट बयान किया है कि सुलह की कोई संभावना नहीं है । यह भी बताया गया है कि अपीलार्थी ने अपना सीए इंटरमीडिएट पूर्ण कर लिया है । द्वितीय प्रत्यर्थी आईटी कंपनी में कार्यरत है । यह दलील दी गई है कि दोनों शिक्षित हैं और उन्होंने सोच-समझकर स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ने का विनिश्चय किया है । पक्षकारों ने भी कथन किया है कि सुलह का कोई अवसर नहीं है और उनके कुटुंबों का भी यही मत है ।

15. हमने परस्पर विरोधी दलीलों को सुना है और अभिलेख का परिशीलन किया है और पक्षकारों द्वारा दिए गए इस प्रकार के कथन पर भी विचार किया है ।

16. हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 एक विशेष अधिनियम है, जो विवाह से संबंधित उपबंधों, दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन और न्यायिक पृथक्करण के साथ-साथ विवाह और विवाह-विच्छेद की अकृतता से भी संबंधित है । (**जगराज सिंह** बनाम **बीरपाल कौर**[1] वाला मामला देखें) । अधिनियम की धारा 13 के अधीन विवाह को उसमें प्रगणित विभिन्न आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विघटित किया जा सकता है और उक्त स्थिति को धारा 14 द्वारा आगे इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि विवाह-विच्छेद के लिए कोई भी अर्जी एक वर्ष के भीतर प्रस्तुत नहीं की जाएगी । तथापि, अत्यधिक आपवादिक मामलों में एक वर्ष की सीमा के प्रभाव का शमन करने के आशय से धारा 14 में एक परंतुक उत्कीर्ण करके एक अपवाद लाया गया है क्योंकि अधिनियम की धारा 14 के परंतुक में इस धारा में अधिकथित साधारण नियम पर एक अति महत्वपूर्ण स्थिति सम्मिलित की गई है कि न्यायालय द्वारा विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए कोई अर्जी कानूनी अवधि की समाप्ति से पूर्व ग्रहण नहीं की जा सकती है । इसके अधीन अपीलार्थी को 'असाधारण कष्ट या असाधारण दुराचारिता' के मामले में एक वर्ष की सीमा की समाप्ति से पूर्व ऐसी अर्जी को प्रस्तुत करने की इजाजत प्रदान करने के अपने विवेकाधिकार के प्रयोग के लिए न्यायालय को समर्थ बनाया गया है ।

17. वैवाहिक विवादों से संबंधित मामलों की श्रृंखला में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह पाया है कि वैवाहिक विवादों की यथार्थ वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए व्यावहारिक रूप से न्यायालयों द्वारा विनिश्चय किया जाना चाहिए । वह तथ्य जो न्यायालय की अंतश्चेतना को चुभता है, यह है कि भले ही विवाह तारीख 11 दिसंबर, 2019 को अनुष्ठापित हुआ था, अपीलार्थी केवल चार दिनों के लिए अपने दाम्पत्य गृह में रही और तारीख 16 दिसंबर, 2019 से अपने पैतृक गृह में रहने लगी । संभोग नहीं हुआ और वे स्वेच्छा से स्वभाव और सैद्धांतिक मतभेदों के कारण वैवाहिक रिश्ते से प्रत्याहरण करने के लिए आनत हैं,

[1] (2007) 2 एस. सी. सी. 564 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 2083.

जिसे समझौता करना नहीं कहा जाता है और वे इस कारण से अपने सुखी विवाहित जीवन का आनंद नहीं ले सके हैं । ऐसी स्थिति में मुकदमेबाजी जारी रखने से अनावश्यक रूप से उन्हें मानसिक एवं शारीरिक उत्पीड़न होगा, क्योंकि वे इस संबंध को जारी रखने के लिए बिल्कुल भी आनत नहीं है । हम मुख्यत: इस विचार से प्रभावित हुए हैं कि एक बार यदि विवाह असुधारीय रूप से टूट जाता है तब विधि की दृष्टि से इस तथ्य पर ध्यान न देना अवास्तविक होगा और यह समाज के लिए हानिप्रद और पक्षकारों के हितों के लिए हानिकर होगा । जहां लंबे समय से निरंतर पृथक्करण हो तो वहां उचित रूप से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वैवाहिक बंधन सुधार से परे है । यद्यपि विधिक बंधन द्वारा समर्थित होते हुए भी 'विवाह' एक कल्पना बन जाता है । ऐसे मामलों में उस बंधन का विच्छेद करने से इनकार करने से विधि, विवाह की पवित्रता की पूर्ति नहीं कर पाती है, इसके विपरीत, यह पक्षकारों की संवेदनाओं और भावनाओं के लिए क्षीण संबंध प्रदर्शित करता है । पारंपरिक हिन्दू विधि के अधीन, जैसाकि इस बिन्दु पर कानूनी विधि के पूर्व था, विवाह एक संस्कार है और सहमति से इसका विघटन नहीं किया जा सकता । अधिनियम के अधीन न्यायालय को कानूनी आधार पर विवाह का विघटन करने में समर्थ बनाया गया है । वर्ष 1976 में संशोधन के माध्यम से पारम्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की संकल्पना को प्रविष्ट किया गया था । तथापि, धारा 13ख (2) पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के छह माह का समय व्यपगत होने से पूर्व ही विवाह-विच्छेद प्रदान करने को वर्जित करता है । उक्त अवधि को पक्षकारों को पुनर्विचार करने में समर्थ बनाने के लिए अधिकथित किया गया था जिससे सुलह का कोई अवसर न होने पर ही न्यायालय पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद कर सके । यदि विवाह असुधारीय रूप से टूट गया है तब ऐसी स्थिति में उपबंध का उद्देश्य पक्षकारों को सहमति से विवाह के विघटन में समर्थ बनाना है और उन्हें उपलब्ध विकल्पों के अनुसार उनका पुनरूद्धार करने में सक्षम बनाना हैं । संशोधन इस विचार से किया गया था कि अनिच्छुक भागीदारों के बीच बलपूर्वक विवाह की स्थिरता को बनाए

रखने से किसी भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी । प्रतीक्षा अवधि का उद्देश्य जल्दबाजी में लिए गए विनिश्चय के विरूद्ध सुरक्षोपाय करना था कि कहीं ऐसी तो कोई संभावना नहीं है कि मतभेद दूर करके मेल-मिलाप किया जा सकता है । इसका उद्देश्य एक अर्थहीन विवाह को कायम रखना या पक्षकारों की पीड़ा को ऐसी स्थिति में बढ़ाना नहीं था जब कोई सुलह की संभावना न हो ।

18. जहां तक इस प्रश्न को अवधारण करने का संबंध है कि क्या उक्त अवधि आज्ञापक है या निदेशात्मक इस पहलू पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर**[1] वाले मामले में विचार किया गया है । उक्त निर्णय का सुसंगत भाग निम्नानुसार उद्धृत किया गया है :–

> "6. इस न्यायालय ने पाया है कि अनुच्छेद 142 के अधीन शक्ति का प्रयोग उन मामलों में किया गया था जहां न्यायालय ने विवाह को पूर्ण रूप से अव्यावहारिक, भावनात्मक रूप से मृत, नाशरक्षण से परे और असहाय रूप से टूटा हुआ पाया था । इस शक्ति का प्रयोग सभी से छुटकारा पाने और पक्षकारों को आगे की पीड़ा से सुरक्षित करने के लिए किया गया था । मनीष गोयल **बनाम** रोहिणी गोयल [(2010) 4 एस. सी. सी. 393 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1099], रमेश चन्द्रेर **बनाम** सावित्री (1995) 2 एस. सी. सी. 7 = ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 851], कवाचन देवी **बनाम** प्रमोद कुमार मित्तल [(1996) 8 एस. सी. सी. 90 = ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 3192], अनीता सभरवाल **बनाम** अनिल सभरवाल [(1997) 11 एस. सी. सी. 490 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1996 एस. सी. 1016], अशोक हुर्रा **बनाम** रूपा बिपिन ज़ावेरी [(1997) 4 एस. सी. सी. 226 = ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 1266], किरन **बनाम** शरद दत्त [(2000) 10 एस. सी. सी. 243 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1999 एस. सी. 391], स्वाती वर्मा **बनाम** रंजन वर्मा [(2004) 1 एस. सी. सी. 123

[1] (2017) 8 एस. सी. सी. 746 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 4417.

= ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 161 = 2004 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 25], हरप्रीत सिंह आनन्द **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य [(2004) 10 एस. सी. सी. 505 = 2004 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 1911], जिम्मी सुदर्शन पुरोहित **बनाम** सुदर्शन शरद पुरोहित [(2005) 13 एस. सी. सी. 410 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2004 एस. सी. 939], दुर्गा प्रसन्ना त्रिपाठी **बनाम** अरूंधती त्रिपाठी [(2005) 7 एस. सी. सी. 353 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3297], नवीन कोहली **बनाम** नीलू कोहली, [(2006) 4 एस. सी. सी. 558 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1675], संघमित्रा घोष **बनाम** काजल कुमार घोष, [(2007) 2 एस. सी. सी. 220 = 2006 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5983], ऋषिकेश शर्मा **बनाम** सरोज शर्मा [(2007) 2 एस. सी. सी. 263], समर घोष **बनाम** जया घोष [(2007) 4 एस. सी. सी. 511 और सतीश सितौले **बनाम** गंगा [(2008) 7 एस. सी. सी. 734 = (2008) 3 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 225 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 3093], वाले मामलों में निर्दिष्ट किया गया । पूनम **बनाम** सुमीत तंवर [(2010) 4 एस. सी. सी. 460 = (2010) 4 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 177 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1384] वाले मामले में दोहराया गया ।"

14. विद्वान् न्यायमित्र ने दलील दी कि धारा 13(ख)(2) के अधीन प्रतिष्ठापित प्रतीक्षा अवधि निदेशात्मक है और असाधारण प्रास्थितियों में जहां कार्यवाहियां लंबित है वहां इसमें उस न्यायालय द्वारा अधित्यजन किया जा सकता है । इस मत का समर्थन के. ओम प्रकाश **बनाम** के. नलिनी [(1985) एस. सी. सी. ऑनलाइन ए. पी. 98 = ए. आई. आर. 1986 ए.पी. 167 (डीबी)] आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा, रूपा रेड्डी **बनाम** प्रभाकर रेड्डी [(1993) एस. सी. सी. ऑनलाइन कर्नाटक 111 = ए. आई. आर. 1994 कर्नाटक 12 (डीबी)] में कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा ; धनजीत वाड्रा **बनाम** श्रीमती बीना वाड्रा [(1990) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 18 = ए. आई. आर. 1990 दिल्ली 146 (डीबी)] में दिल्ली

उच्च न्यायालय द्वारा और दिनेश कुमार शुक्ला **बनाम** श्रीमती नीता [(2005) एस. सी. सी. ऑनलाइन एमपी 3 = ए. आई. आर. 2005 एमपी 106 (डीबी)] में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिए निर्णयों में किया गया है । केरला उच्च न्यायालय द्वारा एम कृष्णा प्रीथा **बनाम** डॉक्टर जयन मूरकन्नट [(2010) एस. सी. सी. ऑनलाइन केरल 544 = ए. आई. आर. 2010 केरला 157] वाले मामलों में प्रतिकूल मत व्यक्त किया गया । यह दलील दी गई कि धारा 13ख (1) न्यायालय के अधिकारिता क्षेत्र से संबंधित और अर्जी तभी पोषणीय होगी जब पक्षकार एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हों और वे एक साथ रहने में सक्षम नहीं हैं, तथा इस पर सहमत हैं कि उनके विवाह का विघटन हो जाए । धारा 13ख (2) प्रक्रियात्मक है । उन्होंने यह दलील दी कि इस अवधि को अधित्यजन करने का विवेकाधिकार न्याय के हित पर विचार करते हुए एक मार्गदर्शक विवेकाधिकार वहां होगा, जहां सुलह की कोई संभावना नहीं है और पक्षकार पहले ही लम्बे समय से अलग-अलग हो गए हैं या धारा 13ख (2) में वर्णित अवधि की अपेक्षा एक लम्बी अवधि से कार्यवाहियों का सामना कर रहे हैं । इस प्रकार न्यायालय को निम्न प्रश्नों पर विचार करना चाहिए –

(i) पक्षकार कितने समय तक विवाहित रहे हैं ?

(ii) मुकदमा कब से लंबित है ?

(iii) कितने समय से वे अलग रह रहे हैं ?

(iv) क्या पक्षकारों के मध्य कोई अन्य कार्यवाही भी चल रही है ?

(v) क्या पक्षकार मध्यस्थता/सुलह संबंधी कार्यवाही में उपस्थित हुए थे ?

(vi) क्या पक्षकार किसी भी वास्तविक परिनिर्धारण पर पहुंचे है जिसमें निर्वाहिका, बच्चे की अभिरक्षा या पक्षकारों के मध्य किसी भी अन्य लंबित विवाद्यक पर विचार किया गया हो ?

15. न्यायालय का यह समाधान होना चाहिए कि पक्षकार कानूनी अवधि से अधिक समय से अलग रह रहे थे और मध्यस्थता तथा सुलह के सभी प्रयास किए गए थे और वे असफल रहे अब तथा सुलह का कोई अवसर नहीं है और प्रतीक्षा की अवधि आगे बढ़ाने से केवल उनकी पीड़ा ही बढ़ाएगी ।

16. हमने अंतर्वलित विवाद्यक पर सम्यक् रूप से विचार किया है । पारंपरिक हिन्दू विधि के अधीन, जैसा कि इस बिन्दु पर कानूनी विधि के पूर्व था कि विवाह एक संस्कार है और सहमति से इसका विघटन नहीं किया जा सकता । अधिनियम के अधीन न्यायालय को कानूनी आधार पर विवाह का विघटन करने हेतु समर्थ बनाया गया है । वर्ष 1976 में संशोधन के माध्यम से पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की संकल्पना को प्रविष्ट किया गया था । तथापि, धारा 13ख(2) के अधीन पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के छह माह का समय व्यपगत होने से पूर्व ही विवाह-विच्छेद प्रदान करने को वर्जित किया गया है । उक्त अवधि को पक्षकारों को पुनर्विचार करने में समर्थ बनाने के लिए अधिकथित किया गया था, जिससे सुलह का कोई अवसर न होने पर ही न्यायालय पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद कर सके ।

17. इस उपबंध का उद्देश्य पक्षकारों को सहमति से विवाह का विघटन करने तथा उपलब्ध विकल्पों के अनुसार उन्हें उनके पुनरोद्धार में समर्थ बनाना है, यदि विवाह असहाय रूप से टूट गया है । संशोधन इस विचार से किया गया था कि अनिच्छुक भागीदारों के बीच विवाह की स्थिरता को बलपूर्वक बनाए रखने में किसी भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी । प्रतीक्षा अवधि का उद्देश्य जल्दबाजी में लिए गए विनिश्चय, यदि कोई हो, के विरूद्ध सुरक्षोपाय करना था ताकि मतभेदों को दूर करके मेल-मिलाप किया जा सके । इसका उद्देश्य एक अर्थहीन विवाह को कायम रखना या कोई संभावना न होने पर भी पक्षकारों की पीड़ा को बढ़ाना नहीं था । विवाह को

बचाने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए । यदि पुनर्मिलन की कोई भी संभावना न हो और नए रूप से पुनरोद्धार का अवसर हो तो न्यायालय को पक्षकारों को बेहतर विकल्प प्रदान करने में संकोच नहीं करना चाहिए ।

18. इस प्रश्न का अवधारणा करने में, कि क्या उपबंध आज्ञापक है या निदेशात्मक, केवल भाषा ही सदैव निर्णायक नहीं होती है । न्यायालय को सदंर्भ, विषयवस्तु और उपबंध के उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए । यह सिद्धांत जैसा कि न्यायमूर्ति जी. पी. सिंह द्वारा लिखित पुस्तक प्रिन्सिपिल्स ऑफ स्टेच्यूट्री इन्टरप्रिटेशन (नवां संस्करण, 2004) में विरचित किया गया है जिसे कैलाश **बनाम** नन्हकू (2005) 4 एस. सी. सी. 480 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2441 वाले मामले के पृष्ठ 496-497 पर पैरा 34 में अनुमोदन के साथ इस प्रकार से उद्धृत किया गया है –

> '34.....इस विषय पर अनेक मामलों का अध्ययन किसी भी सर्वव्यापी नियम के सूत्र की ओर नहीं ले जाता है, सिवाय इसके कि इसमें प्राय: भाषा अकेले निर्णायक नहीं होती है, और संदर्भ, विषयवस्तु और प्रश्नगत कानूनी उपबंध को यह अवधारित करने के लिए ध्यान में रखना चाहिए कि उक्त उपबंध आज्ञापक या निदेशात्मक है या नहीं । लॉर्ड कैंपबेल ने लेखांश में बार-बार उत्कथित किया है कि इस बारे में कोई सर्वव्यापी नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि आज्ञापक अधिनियमों को केवल निदेशात्मक माना जाएगा या अवज्ञा के लिए एक विवक्षित निष्प्रभाव के साथ निदेशात्मक माना जाएगा । न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह विचाराधीन कानून के पूर्ण विस्तार का सावधानीपूर्वक परिशीलन करते हुए विधानमंडल के वास्तविक आशय को जानने का प्रयास करें ।' (पृष्ठ 338)

'न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने उल्लेख किया कि विधानमंडल के वास्तविक आशय को अभिनिश्चित करने के लिए' न्यायालय,

अन्य बातों के साथ-साथ कानून की प्रकृति और रूपरेखा तथा उन परिणामों पर विचार कर सकता है जो उसका एक या अन्य प्रकार से अर्थ लगाने से प्राप्त होंगे ; ऐसे अन्य उपबंधों के प्रभाव जिनके द्वारा प्रश्नगत उपबंधों का अनुपालन करने की आवश्यकता की उपेक्षा की जाती है ; ऐसी परिस्थितियां अर्थात् कानून में उपबंधों के अननुपालन से उत्पन्न अनिश्चित परिस्थिति ; यह तथ्य कि उपबंधों का अननुपालन करने पर कोई शास्ति देने का उपबंध है या नहीं ; उससे निकलने वाले परिणाम गंभीर है या तुच्छ, और सबसे बढ़कर यह है कि क्या विधानमंडल का उद्देश्य विफल होगा या अग्रसर होगा जैसी बैटन पर विचार करना होगा । यदि अधिनियम का उद्देश्य उक्त निदेशात्मक को अभिनिर्धारित करने पर विफल हो जाता है तो इसका अर्थ आज्ञापक होगा । यदि अधिनियमिति को निदेशात्मक अभिनिर्धारित करने से इसका उद्देश्य विफल हो जाएगा तब इसका अर्थ आज्ञापक होने के रूप में लगाया जाएगा जबकि यदि अधिनियमिति को आज्ञापक अभिनिर्धारित करने से इसके उद्देश्य को पूरी तरह से अग्रसर किए बिना निर्दोष व्यक्तियों को गंभीर रूप से असुविधा होगी तो इसका अर्थ निदेशात्मक लगाया जाएगा ।

19. उपरोक्त को वर्तमान स्थिति पर लागू करते हुए हमारा यह मत है कि जहां किसी मामले को निपटाने वाला न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि धारा 13ख(2) के अधीन कानूनी अवधि का अधित्यजन करने का मामला बनाया गया है तब वह निम्नलिखित पर विचार करने के पश्चात् ऐसा कर सकता है :–

"(i) 13ख(2) में विनिर्दिष्ट छह माह की कानूनी अवधि तथा इसके अतिरिक्त धारा 13ख(1) के अधीन पक्षकारों के पृथक्करण के लिए एक वर्ष की वैधानिक अवधि प्रथम समावेदन से पूर्व ही समाप्त हो चुकी है ;

(ii) पक्षकारों के पुनर्मिलन के लिए मध्यस्थता या सुलह के सभी प्रयास, जिसमें सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 32-क, नियम 3, अधिनियम की धारा 23(3) और कुटुंब

न्यायालय अधिनियम की धारा 9 के अधीन किए गए प्रयास भी सम्मिलित है, असफल रहे हैं और अब उस दिशा में और प्रयास करने से सफलता की कोई भी संभाव्यता नहीं है ;

(iii) निर्वाहिका, बच्चे की अभिरक्षा या पक्षकारों के मध्य किसी भी अन्य लंबित विवाद्यक को अंतर्विष्ट करते हुए पक्षकारों ने वास्तविक रूप से अपने मतभेदों को तय कर लिया है ।

(iv) प्रतीक्षा अवधि केवल उनकी पीड़ा को बढ़ाएगी । अधित्यजन के लिए प्रार्थना के कारणों को बताते हुए प्रथम समावेदन के एक सप्ताह के पश्चात् अधित्यजन के लिए आवेदन फाइल किया जा सकता है । यदि उपरोक्त शर्तें पूर्ण होती है तब द्वितीय समावेदन के लिए प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करना संबंधित न्यायालय के विवेकाधिकार पर होगा ।"

19. पूर्वोक्त मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम की धारा 13ख(2), पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद और छह माह की प्रतीक्षा अवधि पर विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि उक्त अवधि कुछ शर्तों के साथ निदेशात्मक है जिनके अधीन संबंधित न्यायालय उक्त अवधि का अधित्यजन कर सकता है । धारा 13ख (2) के अधीन प्रतिष्ठापित प्रतीक्षा अवधि निदेशात्मक है और असाधारण परिस्थिति में, जहां कार्यवाहियां लंबित हैं, उस न्यायालय द्वारा अधित्यजन किया जा सकता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **अमरदीप सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में अवधि का अधित्यजन करने के विवेकाधिकार पर विचार किया हैं, जहां पर सुलह का कोई अवसर नहीं था और पक्षकार पहले से ही अलग हो चुके थे । ऐसी स्थिति में मूल विवाद्यक पर विचार करना सर्वोपरि उत्तरदायित्व है, जिसे उक्त निर्णय के पैरा 14 में निम्नानुसार बताया गया है :–

(i) पक्षकार कितने समय तक विवाहित रहे हैं ?

(ii) मुकदमा कब से लंबित है ?

(iii) कितने समय से वे अलग रह रहे हैं ?

(iv) क्या पक्षकारों के मध्य कोई अन्य कार्यवाही भी चल रही है ?

(v) क्या पक्षकार मध्यस्थता/सुलह में उपस्थित हुए थे ?

(vi) क्या पक्षकार ऐसे किसी वास्तविक परिनिर्धारण पर पहुंचे हैं जिनके अधीन निर्वाहिका, बच्चे की अभिरक्षा, या पक्षकारों के मध्य लंबित किसी अन्य विवाद्यक पर विचार किया गया ?

20. **आर. श्रीनिवास कुमार** बनाम **शामेथा**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने पर एवं इस बात का समाधान होने पर कि विवाह असाध्य रूप से टूट गया है, यह अभिनिर्धारित किया है कि पक्षकारों के मध्य पूर्ण न्याय करने की दृष्टि से ऐसे वैवाहिक संबंध का विघटन किया जा सकता है जो पहले ही मृत हो चुका है । तुरंत संदर्भ के लिए उक्त निर्णय का सुसंगत पैरा 3.1 और 5.1 को निम्नानुसार उद्धृत किया जा रहा है :–

"3.1 विवाह के असाध्य रूप से टूटने के आधार पर विवाह का विघटन करने की अपनी अनुकल्पी दलील के समर्थन में, विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता ने इस न्यायालय के निम्नलिखित विनिश्चयों दुर्गा प्रसन्ना त्रिपाठी **बनाम** अरूधंती त्रिपाठी [(2005) 7 एस. सी. सी. 353 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3297]; नवीन कोहली **बनाम** नीलू कोहली [(2006) 4 एस. सी. सी. 558 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1675)]; संघमित्रा घोष **बनाम** काजल कुमार घोष [(2007) 2 एस. सी. सी. 220 = 2006 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5983)]; समर घोष **बनाम** जया घोष [(2007) 4 एस. सी. सी. 511]; के. श्रीनिवास राव **बनाम** डी. ए. दीपा [(2013) 5 एस. सी. सी. 226 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176], और सुखेन्द्र दास **बनाम** रीता मुखर्जी [(2017) 9 एस. सी. सी. 632 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5090] का दृढ़तापूर्वक अवलंब लिया है.....।"

"5.1 प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि यह

[1] (2019) 9 एस. सी. सी. 409 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 4914.

विवादित प्रतीत नहीं होता है कि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी दोनों पिछले 22 वर्षों से अलग-अलग रह रहे हैं । यह भी प्रतीत होता है कि विवाह को जारी रखने के सभी प्रयास असफल हो गए हैं और पक्षकारों के मध्य तनावपूर्ण संबंधों के कारण पुनर्मिलन की कोई संभावना नहीं है । इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी के मध्य विवाह-असाध्य रूप से टूट गया है । **हितेश भटनागर** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह पाया गया है कि न्यायालय असाध्य रूप से विवाह के टूटने पर विवाह का विघटन केवल तभी कर सकता है जब विवाह को सभी प्रयास किए जाने के बावजूद बचाना असंभव हो और जब न्यायालय को किसी भी संदेह से परे यह विश्वास हो जाए कि वास्तव में विवाह के बने रहने की कोई संभावना नहीं है विवाह असाध्य रूप से टूट गया हैं.....।"

21. **आर्ची अग्रवाल** बनाम **प्रधान न्यायाधीश**[1], कुटुंब न्यायालय लखनऊ वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने कानूनी अवधि की छूट पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया है कि "असाधारण कष्ट" या "असाधारण दुराचारिता" के मामलों में इस प्रकार के आवेदन को अनुज्ञात किया जा सकता है, क्योंकि मुकदमेबाजी को जारी रखने से दोनों पक्षकारों का मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न होगा ।

22. अधिनियम के उपबंधों के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी प्रधान न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय में दोनों पक्षकारों द्वारा एक साथ इस आधार पर प्रस्तुत की जा सकती है कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग रह रहे हैं और वे एक साथ रहने में समर्थ नहीं हैं और यह कि वे पारस्परिक रूप से इसके लिए सहमत हो गए हैं कि उनके विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए । तत्काल संदर्भ के लिए अधिनियम की धारा 13ख को निम्नानुसार उद्धृत किया जा रहा है :–

---

[1] 2019 (134) ए. एल. आर. 488 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 ए. एल. एल. 560.

"**13 ख. पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद** – (1) इसके उपबंधों के अधीन रहते हुए यह है कि विवाह के दोनों पक्षकार मिलकर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी, चाहे ऐसा विवाह, विवाह तिथि (संशोधन) अधिनियम, 1976 के प्रारंभ के पूर्व या उसके पश्चात् अनुष्ठापित किया गया हो, जिला न्यायालय में, इस आधार पर पेश कर सकेंगे कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं और वे एक साथ नहीं रह रहे हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गए हैं कि विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट अर्जी पेश किए जाने की तारीख से छह माह के पश्चात् और उस तारीख को अठारह मास के पूर्व दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इस बीच अर्जी वापस नहीं ली गई है तो न्यायालय पक्षकारों के सुनने और ऐसी जांच करने के पश्चात् जो वह ठीक समझे, अपना यह समाधान कर लेने पर विवाह अनुष्ठापित हुआ है और अर्जी में किए गए प्रकथन सही हैं, यह घोषणा करते हुए विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करेगा कि विवाह डिक्री की तारीख से विघटित हो जाएगा ।"

23. धारा 13ख स्वयं प्रथम समावेदन पर छह मास की प्रतीक्षा अवधि का उपबंध करती है जिसके दौरान पक्षकारों का मन परिवर्तन हो जाने की संभावना होती है । तद्नुसार, प्रारंभिक समावेदन और पारस्परिक विवाह-विच्छेद की अर्जी की प्रस्तुति के पश्चात् पक्षकारों को द्वितीय समावेदन को प्रस्तुत करने से पूर्व छह मास की अवधि के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है, और यदि उस समय तक पक्षकारों ने अपना मन बना लिया है कि वे एक साथ रहने में असमर्थ होंगे तब न्यायालय ऐसी जांच करने के पश्चात् जिसे वह उचित समझे, विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करते हुए डिक्री की तारीख से विवाह के विघटन की घोषणा करता है ।

24. यह भी आग्रह किया गया है कि अधिनियम की धारा 13ख(1) में अंतर्विष्ट अन्य शर्तों को भी पूरा किया गया है, क्योंकि पक्षकार एक

वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे हैं, और पारस्परिक रूप से सहमत हैं कि उनके विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए । यह आग्रह किया गया है कि धारा 13ख के अधीन आवेदन न करने की औपचारिकता को छोड़कर अन्य मापदंडों को विधिवत् पूरा किया गया है और धारा 13ख की भाषा को ध्यान में रखते हुए पक्षकारों को पारस्परिक विवाह के विघटन की डिक्री द्वारा विवाह-विच्छेद से इनकार नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि धारा 13ख के अधीन अनुध्यात छह मास की प्रतीक्षा अवधि में से एक मास पहले ही पूरा हो चुका है ।

25. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **अनिल कुमार जैन** बनाम **माया जैन**[1] वाले मामले में भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग पक्षकारों के सर्वोत्तम हित के लिए किया था, जैसा कि आग्रह किया गया था कि यदि पक्षकारों के लिए सारभूत न्याय किया जाना है तो तथ्यात्मक को प्राविधिकता से संयमित किया जाना चाहिए ।

26. यह निस्संदेह सत्य है कि विधानमंडल ने अपने प्रज्ञान में पारस्परिक विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने की तारीख से तब तक के लिए छह मास की प्रतीक्षा अवधि नियत की थी जब तक ऐसे विवाह-विच्छेद को वास्तव में मंजूरी नहीं मिल जाती है, तथा इस आशय से कि यह विवाह की मर्यादा को सुरक्षित करेगा । ऐसी स्थिति में विधानमंडल के आशय को गलत नहीं ठहराया जा सकता है, लेकिन ऐसे अवसर भी आ सकते हैं, जब पक्षकारों के साथ पूर्ण न्याय करने हेतु इस न्यायालय के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह एक असंगत स्थिति में अपने विवेक का अवलंब लें ।

27. **देविंदर सिंह नरूला** बनाम **मीनाक्षी नांगिया**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने धारा 13-ख के अधीन द्वितीय समावेदन फाइल करने से पूर्व छह मास की प्रतीक्षा अवधि पर इस पृष्ठभूमि में विचार किया है कि पक्षकार एक वर्ष से अधिक समय से अलग रह रहे

---

[1] (2009) 10 एस. सी. सी. 415 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 229.

[2] (2012) 8 एस. सी. सी. 580 = ए. आई. आर 2012 एस. सी. 2890.

हैं तथा पक्षकारों के मध्य कोई भी औपचारिक संबंध नहीं है, कानूनी प्रतीक्षा अवधि के कारण विवाह के पक्षकार एक कमजोर धागे से बंधे हैं और इस अवधि में से चार मास पहले ही समाप्त हो चुके हैं । उच्चतम न्यायालय ने पाया है कि पक्षकारों द्वारा उनकी वैवाहिक बाध्यता का निर्वहन करना संभव नहीं है । उक्त निर्णय का सुसंगत भाग निम्नानुसार उद्धृत किया गया है :–

> "10. जैसा कि इस अपील में किए गए प्रकथनों से पता चलता है कि अपीलार्थी ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन तारीख 1 जून, 2011 को इस आधार पर अर्जी फाइल की थी कि तारीख 26 मार्च, 2011 को हुआ विवाह एक अकृतता थी, पक्षकार विवाह के बाद से ही अलग-अलग रह रहे थे और तारीख 1 जून, 2011 से उन्होंने एक-दूसरे के साथ सहवास भी नहीं किया था और भविष्य में भी वे एक साथ एक छत के नीचे नहीं रह सकते थे । पक्षकारों के अनुसार, वे पिछले एक वर्ष से एक-दूसरे से अलग-अलग रह रहे हैं और प्रत्यर्थी वर्तमान में विदेश (कनाडा) में काम कर रहा था । इस आशय को ध्यान में रखते हुए कि अधिनियम की धारा 12 के अधीन कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान पक्षकार मध्यस्थता के लिए सहमत हुए और मध्यस्थता के दौरान ही पक्षकार विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के लिए उपरोक्त अधिनियम की धारा 13 के अधीन एक अर्जी फाइल करके पारस्परिक सहमति से विवाह का विघटन कराने के लिए सहमत हुए हैं ।
>
> 11. मध्यस्थता केंद्र के समक्ष कार्यवाहियों में पक्षकार अधिनियम की धारा 13ख(1) और 13ख(2) के अधीन समुचित अर्जी फाइल करने पर सहमत हुए । तीस हजारी न्यायालय के मध्यस्थता केंन्द्र के मध्यस्थ द्वारा 2011 के हिन्दू विवाह आवेदन सं. 239 में न्यायालय को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी । यह मध्यस्थता कार्यवाहियों के दौरान ऐसे समझौते के अनुसरण में है जो कि पक्षकारों द्वारा पूर्वोक्त में तारीख 15 दिसंबर, 2011 को लंबित हिन्दू विवाह आवेदन में यह दर्शित करते हुए फाइल किया

गया था कि उन्होंने मध्यस्थता केंद्र के माध्यम से मामले का निपटारा कर लिया है और वे तारीख 15 अप्रैल, 2012 को या उससे पूर्व पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करेंगे । उक्त अर्जी के बल पर हिन्दू विवाह आवेदन में कार्यवाहियों को वापस लेकर निपटाया गया था । तत्पश्चात् तारीख 13 अप्रैल, 2012 को पक्षकारों ने अधिनियम, 1955 की धारा 13ख के अधीन एक संयुक्त अर्जी फाइल की जिस पर विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, पश्चिमी दिल्ली द्वारा द्वितीय समावेदन की तारीख 15 अक्टूबर, 2012 तय करते हुए आदेश पारित किया गया था ।

12. अभिलेख पर मौजूद सामग्री से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि यद्यपि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 26 मार्च, 2011 को अनुष्ठापित हुआ था, विवाह के 3 मास के भीतर ही अर्जीदार ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन विवाह की अकृतता की डिक्री के लिए एक अर्जी फाइल की । इसके पश्चात् वे एक साथ रहने में समर्थ नहीं हुए और 1 वर्ष से ज्यादा समय तक अलग-अलग रहे । ऐसा प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच तनिक भी तात्विक बंधन नहीं है । पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 13ख(2) के उपबंध पक्षकारों के बीच विवाह के औपचारिक बंधन का अस्तित्व केवल नाम के लिए रखे हुए हैं । कम से कम धारा 13ख में पारस्परिक सहमति से विवाह के विघटन की डिक्री प्रदान करने के लिए उपदर्शित शर्त वर्तमान मामले में मौजूद हैं । केवल छह मास की कानूनी अवधि के कारण पक्षकारों को विवाह के विघटन की डिक्री पारित किए जाने के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है ।

13. उपरोक्त परिस्थितयों में, हमारा यह मत है कि यह उन मामलों में से एक है जहां हम संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन उच्चतम न्यायालय में निहित शक्तियों का अवलंब लिए जाने की ईप्सा कर सकते हैं । इस कानूनी प्रतीक्षा अवधि को पूरा करने के लिए विवाह के पक्षकार एक कमजोर धागे से जुड़े हैं, जिस में से चार मास पहले ही समाप्त हो चुके हैं । जब पक्षकारों के

लिए एक साथ रहना और एक वर्ष से अधिक समय तक एक-दूसरे के प्रति अपने वैवाहिक दायित्वों का निर्वहन करना संभव नहीं हो पाया है, तो हमें पक्षकारों की पीड़ा को अतिरिक्त दो मास तक जारी रखने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

14. तद्नुसार हम अपील मंजूर करते हैं, और अपर जिला न्यायाधीश-1, पश्चिमी दिल्ली के समक्ष हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 12 के अधीन लंबित कार्यवाही को इस अधिनियम की धारा 13ख के अधीन परिवर्तित करते हैं, और संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन हमारी शक्तियों का अवलंब लेते हुए, पक्षकारों को पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करते हैं और निदेश देते हैं कि पक्षकारों के बीच विवाह पारस्परिक सहमति से विघटित हो जाएगा । अपर जिला न्यायाधीश-1, पश्चिमी दिल्ली के समक्ष लंबित कार्यवाही अर्थात 2012 के हिन्दू विवाह आवेदन सं. 204 को पक्षकारों की सहमति से इस न्यायालय में वापस लिया जाता है और इसे आदेश द्वारा इसका निपटारा किया जाता है.....।"

28. **के. तिरूवेंगदम** बनाम **कोई नहीं**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जहां पुनर्मिलन की कोई संभावना नहीं है और वहां न्यायालयों के लिए अंतिम समय में विवाह को बचाने के लिए प्रयास किया जाना आबद्धकर है और जब पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की प्रक्रिया को अपनाया गया है तो न्यायालय 6 मास की अवधि में अधित्यजन करने के लिए स्वतंत्र होगा । धारा-13 ख केवल निदेशात्मक है न कि आज्ञापक तथा इसे यदि आज्ञापक अभिनिर्धारित किया जाता है तो इससे पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की अति उदारीकृत धारणा विफल हो जाएगी ।

29. **मितेन** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में यह देखा गया कि पक्षकारों को धारा 13-ख के अधीन अनुतोष पाने के लिए न्यायालय के

---

[1] (2007) 5 सी. टी. सी. 870 = ए. आई. आर. 2008 मद्रास 76.

[2] (2008) 5 महाराष्ट्र ला जर्नल 27.

समक्ष तीन संघटकों को पूरा करना था जो निम्न प्रकार हैं : (i) पक्षकार एक वर्ष से अधिक समय से अलग-अलग रह रहे थे, (ii) वे एक साथ रहने में सक्षम नहीं थे और (iii) वे पारस्परिक रूप से विवाह का विघटन करने के लिए सहमत हुए हैं । एक बार जब ये तीन कानूनी शर्तें पूरी हो जाती हैं तब न्यायालय को पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की अर्जी पर विचार करने की अधिकारिता होगी । पारस्परिकता की पुर:स्थापना का उद्देश्य, नवविवाहितों के बीच बिना किसी कारण या अधिकारिता के एकदम से ही विवाह का विघटन करना नहीं था ।

30. न्यायालय को पहली ही तारीख से स्वयं को संतुष्ट करना होगा कि विवाह-विच्छेद के लिए सहमति बल, कपट या अनुचित प्रभाव से तो नहीं ली गई है और इसे न्यायालय के आदेश में उल्लिखित किया जाना चाहिए । (**सुषमा** बनाम **प्रमोद वाला मामला**[1] वाला मामला देखें ।)

31. वर्तमान मामले में सुनवाई के दूसरे दिन दोनों पक्षकार उपस्थित थे और उन्होंने अलग-अलग सुस्पष्ट कथन किया है कि उनके विवाह के अनुष्ठापित होने के चार दिनों के भीतर ही वे अलग हो गए थे और यहां तक कि विवाहोत्तर संभोग भी नहीं हुआ था । दोनों साक्षर हैं और उन्होंने पूरे भान मन से तय किया है कि उन्हें अलग होना है । हमने यह जानने का भी प्रयास किया कि पक्षकारों का उक्त कथन स्वेच्छा से दिया गया है या नहीं । उन्हें यह जवाब देने में कोई संकोच नहीं था कि इस तरह के विनिश्चय के दौरान उन पर कोई भी बल, कपट या अनुचित प्रभाव कारित नहीं किया गया है ।

32. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हमारा यह मत है कि न्यायालय ऐसे प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा जहां पक्षकारों के बीच सहवास को पुन: प्रारंभ करने की कोई भी संभावना न हो अपितु अनुकल्पी पुनर्वास की संभावना हो । वर्तमान मामले में पत्नी अपने दांपत्य निवास में केवल चार दिन ही रही थी और एक वर्ष से अधिक समय से पक्षकार अलग-अलग रह रहे हैं । विवाहोत्तर संभोग कभी भी

[1] (2009) 81 ए. आई. सी. 599 (बम्बई).

नहीं हुआ है । उन्होंने न्यायालय के समक्ष कथन भी किया है कि वे साथ नहीं रहना चाहते हैं और उनके बीच सुलह का कोई अवसर नहीं है, तथा प्रतीक्षा अवधि केवल उनकी पीड़ा को ही बढ़ाएगी । उन्होंने कथन किया है कि यदि विवाह-विच्छेद को मंजूरी दे दी जाती है तो उनके भविष्य बेहतर हो सकते हैं ।

33. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह सुविचारित मत है कि विद्वान् भारसाधक प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने मामले के तथ्यों के साथ उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि पर विचार किए बिना ही आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को खारिज कर दिया था, इसलिए अपेक्षित आदेश अपास्त किया जाता है । आवेदन (प्रदर्श-17/सी) को मंजूर किया जाता है । तद्नुसार वर्तमान प्रथम अपील मंजूर की जाती है । विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय को निदेश दिया जाता है कि वे 2002 के मूल वाद सं. 592 पर शीघ्रता से या इस निर्णय की कम्प्यूटरीकृत प्रति प्रस्तुत करने के अधिमानत: 7 दिनों के भीतर विनिश्चय करे ।

34. पक्षकार उच्च न्यायालय इलाहाबाद की शासकीय वेबसाइट से अंतरित किए गए ऐसे आदेश की कम्प्यूटरीकृत प्रति फाइल करेंगे जो अपीलार्थी प्रत्यर्थी द्वारा स्व-अनुप्रमाणित होने के साथ उक्त व्यक्ति की स्व-प्रमाणित पहचान (अधिमानत: आधार कार्ड) के साथ उस मोबाइल नंबर उल्लिखित करेंगे जिससे उक्त आधार कार्ड जुड़ा हुआ है ।

35. संबंधित न्यायालय/प्राधिकरण/अधिकारी उच्च न्यायालय की शासकीय वेबसाइट से आदेश की ऐसी कम्प्यूटरीकृत प्रति की प्रमाणिकता को सत्यापित करेंगे और लिखित रूप से ऐसे सत्यापन की घोषणा करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

अम./अस.

पी. सुधा

बनाम

राजेश

(2019 की प्रथम प्रकीर्ण अपील सं. 494)

तारीख 11 जून, 2021

न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्न और न्यायमूर्ति हंचटे संजीव कुमार

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-क) – विवाह-विच्छेद – पति द्वारा क्रूरता कारित किया जाना – पत्नी द्वारा पति पर विवाहेत्तर सम्बन्ध बनाने का आरोप लगाया जाना – पति द्वारा दी गई मानसिक यातना से पत्नी का गर्भपात हो जाना – पति की ओर से किसी भी आरोप का खंडन न किया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई क्रूरता के सम्बन्ध में अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का खंडन प्रत्यर्थी-पति की ओर से नहीं किया गया है, ऐसी स्थिति में "युक्तियुक्त संदेह के परे" वाले सिद्धांत के बजाय "अधिसंभाव्यता की प्रबलता" वाला सिद्धांत लागू होगा, अतः पत्नी विवाह-विच्छेद की हकदार है और कुटुंब न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

इस मामले अपीलार्थी पत्नी है और प्रत्यर्थी, पति है तथा उनका विवाह तारीख 4 जून, 2015 को बेंगलुरु के शानेश्वर मंदिर, गेलेयारा बलाग के समीप उनके समुदाय में प्रचलित उनकी रूढ़ि और परंपरा के अनुसार अनुष्ठापित हुआ था । यह कथन किया गया है कि कुछ समय के लिए दोनों एक सुखी वैवाहिक जीवन जी रहे थे । लेकिन उसके पश्चात्, प्रत्यर्थी ने किसी अन्य महिला के साथ संबंध विकसित कर लिए और जब अपीलार्थी द्वारा इस पर प्रश्न किया गया तो प्रत्यर्थी ने उसके साथ अशिष्ट व्यवहार किया । इस प्रकार, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को धोखा दिया है और आत्महत्या करने का नाटक भी किया है । लेकिन वास्तव में उसने ऐसा कुछ भी करने का प्रयास भी नहीं किया है । इसके

अतिरिक्त अपीलार्थी ने कथन किया कि प्रत्यर्थी ने मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार से उसके साथ अनुचित व्यवहार किया और इसलिए, अपीलार्थी ने माता-पिता के साथ रहना प्रारंभ कर दिया । बाद में, अपीलार्थी ने फैशन डिजाइन के पाठ्यक्रम में दाखिला ले लिया । वहां भी प्रत्यर्थी उस महाविद्यालय जाया करता था और उसे संदेह करने की आदत थी, इसलिए अपीलार्थी, प्रत्यर्थी की क्रूरता को सहन नहीं कर सकी थी । इसी कारण अपीलार्थी को विवाह-विच्छेद की डिक्री फाइल करने के लिए मजबूर होना पड़ा । इसके अतिरिक्त यह भी प्रकथन किया गया है कि जब अपीलार्थी गर्भवती हुई तो प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई मानसिक पीड़ा के कारण उसका गर्भपात हो गया था । इसलिए, प्रत्यर्थी द्वारा की गई क्रूरता के संबंध में प्रकथन करते हुए अपीलार्थी को कुटुंब न्यायालय के समक्ष विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के लिए मजबूर होना पड़ा । उक्त न्यायालय द्वारा समन जारी करने पर, प्रत्यर्थी अनुपस्थित रहा था और इसलिए, उसे एकपक्षीय रखा गया । कुटुंब न्यायालय ने यह पाया कि प्रत्यर्थी के हाजिर न होने से सुलह असफल हो गई थी । तब कुटुंब न्यायालय ने मामले को गुणता के आधार पर विनिश्चित किया । अपीलार्थी की परीक्षा अभि. सा. 1 के रूप में कराई गई और दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में प्रदर्श पी-1 से प्रदर्श पी-4 तक चिह्नांकित किया गया तथा तब से प्रत्यर्थी को एकपक्षीय रखा गया है, इस पर प्रत्यर्थी द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है । कुटुंब न्यायालय ने विचार के लिए बिन्दु विरचित किए कि क्या अपीलार्थी विवाह के विघटन की डिक्री की हकदार थी या नहीं । कुटुंब न्यायालय ने अर्जी को इस आधार पर खारिज कर दिया कि अपीलार्थी ने यह साबित करने के लिए कोई भी साक्ष्य नहीं प्रस्तुत किया है कि प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई क्रूरता और असहनीय यातना के कारण उसका गर्भपात हो गया था । इसके अतिरिक्त, कुटुंब न्यायालय ने पाया है कि अपीलार्थी के द्वारा यह दर्शित करने के लिए कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी मैसूर में उसके महाविद्यालय गया था तथा वहां उसके लिए उलझन उत्पन्न की और इसके अतिरिक्त कुटुंब न्यायालय ने यह भी

पाया है कि पत्नी को महाविद्यालय में मिलने जाने को उलझन उत्पन्न करना नहीं कहा जा सकता है । इसलिए इन आधारों पर अर्जी को खारिज कर दिया गया था । इसके अतिरिक्त कुटुंब न्यायालय ने यह पाया कि यदि प्रत्यर्थी उसके महाविद्यालय में मिलने गया होता और वहां प्रत्यर्थी ने उसका अपमान किया होता, तो अपीलार्थी इस संबंध में किसी भी साक्षी की परीक्षा करा सकती थी, लेकिन इसके लिए अपीलार्थी द्वारा कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया । इसलिए, उस आधार पर कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी का वृत्तांत अविश्वासी पाया और अर्जी खारिज कर दी । अत:, कुटुंब न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया कि अपीलार्थी यह साबित करने में असफल रही है कि प्रत्यर्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की थी और अनुचित व्यवहार किया था । इसलिए, यह राय व्यक्त करते हुए कुटुंब न्यायालय ने अर्जी खारिज कर दी । अर्जी खारिज किए जाने से व्यथित होकर पत्नी ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उपरोक्त साक्ष्य पर प्रत्यर्थी द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है । अपीलार्थी का साक्ष्य निर्विवाद है । प्रत्यर्थी द्वारा किया गया दुर्व्यवहार और क्रूरता चाहर दीवारी के भीतर हुआ था और उसे बाहर से देखे जाने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है अर्थात् बाहर के साक्षी द्वारा इसकी संपुष्टि करना कठिन है । इसलिए, कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी के साक्ष्य पर विश्वास न करके त्रुटि कारित की है । जहां पत्नी ने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की है और इस पर प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है फिर भी पर्याप्त यथोचित साक्ष्य दिए जाने पर, कुटुंब न्यायालय द्वारा इस आधार पर अर्जी खारिज किया जाना उचित नहीं है । इसके अतिरिक्त, कुटुंब न्यायालय के विचार में अपीलार्थी किसी अन्य साक्षी को परिक्षित यह साबित करने के लिए कर सकती थी कि प्रत्यर्थी उसके महाविद्यालय गया था और महाविद्यालय में प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के साथ बुरा बर्ताव किया था, साक्षी की परीक्षा की अनुपस्थिति में, अपीलार्थी के संस्करण पर विश्वास नहीं किया जा सकता है, यह कुटुंब न्यायालय का निष्कर्ष

भी ठीक नहीं है । केवल इसलिए कि अपीलार्थी ने अपने महाविद्यालय से किसी भी साक्षी को परीक्षित नहीं किया था, तो इसे स्वत: अपीलार्थी के साक्ष्य पर विश्वास न करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है और इसे अर्जी को खारिज करने का कारण भी नहीं बनाया जा सकता है । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता और बुरे बर्ताव के संबंध में साक्ष्य दिए है । प्रत्यर्थी ने उस पर प्रतिवाद नहीं किया है और अपीलार्थी के प्रतिविरोध को खारिज करने के लिए कोई भी अवलंब भी नहीं लिया है । जब यह तथ्य सत्य है, तो कुटुंब न्यायालय द्वारा अर्जी को खारिज किया, जाना ठीक नहीं है । जब अपीलार्थी ने उसके साथ उसके पति द्वारा की गई क्रूरता के लिए साक्ष्य दिए हैं और इस साक्ष्य पर प्रत्यर्थी द्वारा आक्षेप नहीं किया गया है, तो युक्तियुक्त संदेह के सिद्धांत तब ऐसी स्थिति में "युक्तियुक्त संदेह के परे" वाले सिद्धांत के बजाय अधिसंभाव्यता की प्रबलता वाला सिद्धांत पर विवेचन करना चाहिए । यदि साक्ष्य की संवीक्षा की जाती है और यह पाया जाता है कि साक्ष्य के वृत्तांत के साथ मेल खाता है, तब इसे न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जा सकता है । वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी अनुपस्थित है और उसने मामले में कुटुंब न्यायालय में प्रतिवाद नहीं किया है तथा अपीलार्थी द्वारा कथित तथ्यात्मक मैट्रिक्स और कुटुंब न्यायालय के समक्ष दिए गए साक्ष्य पर प्रश्न भी नहीं किया है । इसलिए, वर्तमान अपील में अंतर्वलित तथ्यात्मक मैट्रिक्स और इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के सिद्धांत पर विचार करने के पश्चात् जहां पत्नी ने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की है और न्यायालय द्वारा जारी नोटिस के प्राप्त होने के बावजूद प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है और वह मौन बना रहा तथा जहां साक्ष्य पर आक्षेप भी नहीं किया गया, तो इन परिस्थितियों में, अपीलार्थी के मामले को स्वीकार किया जा सकता है और अर्जी को खारिज किया जाना बहुत ही कठोर कार्य होगा विशेषकर जब दूसरी ओर से प्रतिवाद नहीं किया गया हो और जहां पत्नी ने न्याय की ईप्सा के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाया हो, तो इन परिस्थितियों में, अपील मंजूर की जानी चाहिए । (पैरा 14, 15, 16, 17 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] आई. एल. आर. (2015) 2863 :
जी. प्रेमलता (श्रीमती) उर्फ **एन. प्रेमलता** बनाम
श्री आर. नागेश । 18

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की प्रथम प्रकीर्ण अपील सं. 494.

कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19(1) के अधीन प्रथम अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री आर. पल्लवा

प्रत्यर्थी की ओर से कोई नहीं

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति हंचटे संजीव कुमार ने दिया ।

न्या. कुमार – यह अपील कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 (संक्षेप में जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम 1984" कहा गया है) की धारा 19(1) के अधीन फाइल की गई है, जिसमें मैसूर के कुटुंब न्यायालय के प्रथम अपर प्रधान न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा तारीख 6 अक्टूबर, 2018 को पारित निर्णय और डिक्री एम. सी. सं. 107/2018 को चुनौती दी गई है तथा जिसमें कुटुंब न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में अधिनियम, 1955 कहा गया है) की धारा 13(1)(i-क) के अधीन अपीलार्थी-पत्नी द्वारा फाइल की गई अर्जी को खारिज कर दिया था । इसलिए, अर्जी की खारिजी से व्यथित होकर अपीलार्थी-पत्नी ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की है ।

संक्षिप्त तथ्य :

2. यह कथन किया गया है कि अपीलार्थी पत्नी है और प्रत्यर्थी, पति है तथा उनका विवाह तारीख 4 जून, 2015 को बेंगलुरु के शानेश्वर मंदिर, गेलेयारा बलाग के समीप उनके समुदाय में प्रचलित उनकी रूढ़ि और परंपरा के अनुसार अनुष्ठापित हुआ था । यह कथन किया गया है

कि कुछ समय के लिए दोनों एक सुखी वैवाहिक जीवन जी रहे थे । लेकिन उसके पश्चात्, प्रत्यर्थी ने किसी अन्य महिला के साथ संबंध विकसित कर लिए और जब अपीलार्थी द्वारा इस पर प्रश्न किया गया तो प्रत्यर्थी ने उसके साथ अशिष्ट व्यवहार किया । इस प्रकार, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को धोखा दिया है और आत्महत्या करने का नाटक भी किया है । लेकिन वास्तव में उसने ऐसा कुछ भी करने का प्रयास भी नहीं किया है ।

3. इसके अतिरिक्त अपीलार्थी ने कथन किया कि प्रत्यर्थी ने मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार से उसके साथ अनुचित व्यवहार किया और इसलिए, अपीलार्थी ने माता-पिता के साथ रहना प्रारंभ कर दिया । बाद में, अपीलार्थी ने फैशन डिजाइन के पाठ्यक्रम में दाखिला ले लिया । वहां भी प्रत्यर्थी उस महाविद्यालय जाया करता था और उसे संदेह करने की आदत थी, इसलिए अपीलार्थी, प्रत्यर्थी की क्रूरता को सहन नहीं कर सकी थी । इसी कारण अपीलार्थी को विवाह-विच्छेद की डिक्री फाइल करने के लिए मजबूर होना पड़ा । इसके अतिरिक्त यह भी प्रकथन किया गया है कि जब अपीलार्थी गर्भवती हुई तो प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई मानसिक पीड़ा के कारण उसका गर्भपात हो गया था । इसलिए, प्रत्यर्थी द्वारा की गई क्रूरता के संबंध में प्रकथन करते हुए अपीलार्थी को कुटुंब न्यायालय के समक्ष विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल करने के लिए मजबूर होना पड़ा ।

4. उक्त न्यायालय द्वारा समन जारी करने पर, प्रत्यर्थी अनुपस्थित रहा था और इसलिए, उसे एकपक्षीय रखा गया । कुटुंब न्यायालय ने यह पाया कि प्रत्यर्थी के हाजिर न होने से सुलह असफल हो गई थी । तब कुटुंब न्यायालय ने मामले को गुणता के आधार पर विनिश्चित किया ।

5. अपीलार्थी की परीक्षा अभि. सा. 1 के रूप में कराई गई और दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में प्रदर्श पी-1 से प्रदर्श पी-4 तक चिह्नांकित किया गया तथा तब से प्रत्यर्थी को एकपक्षीय रखा गया है, इस पर प्रत्यर्थी द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है । कुटुंब न्यायालय ने विचार

के लिए बिन्दु विरचित किए कि क्या अपीलार्थी विवाह के विघटन की डिक्री की हकदार थी या नहीं । कुटुंब न्यायालय ने अर्जी को इस आधार पर खारिज कर दिया कि अपीलार्थी ने यह साबित करने के लिए कोई भी साक्ष्य नहीं प्रस्तुत किया है कि प्रत्यर्थी द्वारा कारित की गई क्रूरता और असहनीय यातना के कारण उसका गर्भपात हो गया था ।

6. इसके अतिरिक्त, कुटुंब न्यायालय ने पाया है कि अपीलार्थी के द्वारा यह दर्शित करने के लिए कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी मैसूर में उसके महाविद्यालय गया था तथा वहां उसके लिए उलझन उत्पन्न की और इसके अतिरिक्त कुटुंब न्यायालय ने यह भी पाया है कि पत्नी को महाविद्यालय में मिलने जाने को उलझन उत्पन्न करना नहीं कहा जा सकता है । इसलिए इन आधारों पर अर्जी को खारिज कर दिया गया था । इसके अतिरिक्त कुटुंब न्यायालय ने यह पाया कि यदि प्रत्यर्थी उसके महाविद्यालय में मिलने गया होता और वहां प्रत्यर्थी ने उसका अपमान किया होता, तो अपीलार्थी इस संबंध में किसी भी साक्षी की परीक्षा करा सकती थी, लेकिन इसके लिए अपीलार्थी द्वारा कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया । इसलिए, उस आधार पर कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी का वृत्तांत अविश्वासी पाया और अर्जी खारिज कर दी ।

7. अत:, कुटुंब न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया कि अपीलार्थी यह साबित करने में असफल रही है कि प्रत्यर्थी ने उसके साथ क्रूरता कारित की थी और अनुचित व्यवहार किया था । इसलिए, यह राय व्यक्त करते हुए कुटुंब न्यायालय ने अर्जी खारिज कर दी । अर्जी खारिज किए जाने से व्यथित होकर पत्नी ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की है ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी न्यायालय के समक्ष हाजिर नहीं हुआ और उसने मामले में प्रतिवाद नहीं किया और उसके ऐसे आचरण से ही यह उपदर्शित होता है कि प्रत्यर्थी अपीलार्थी को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करना नहीं चाहता है । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई कि जब अपीलार्थी का साक्ष्य

अधिक्षेप्य है तो कुटुंब न्यायालय को विवाह के विघटन की डिक्री पारित करनी चाहिए । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई है कि अनुचित व्यवहार और क्रूरता की घटनाएं, जो चाहर दीवारी के भीतर घटित हुई थी, अन्य साक्ष्यों के द्वारा साबित कराने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती ।

9. इसलिए, विद्वान् काउंसेल ने दलील दी है कि मामले में कुटुंब न्यायालय ने व्यवहारिकता और अंतर्वलित तथ्यों की अनदेखी की है । अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का विवेचन उचित तौर पर नहीं हुआ है । परिणामस्वरूप अर्जी खारिज हुई जिसमें न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित है । इसलिए, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने अपील मंजूर करने और डिक्री पारित किए जाने की प्रार्थना की है

10. उपरोक्त से, हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी-पत्नी ने हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए विवाह के विघटन के लिए अर्जी फाइल की थी । प्रत्यर्थी अनुपस्थित रहा था और उसने मामले में प्रतिवाद नहीं किया था । अपीलार्थी ने दस्तावेजी साक्ष्य प्रदर्श पी-1 से प्रदर्श पी-4 के रूप में प्रस्तुत किया, जिसमें विवाह आमंत्रण कार्ड, फोटो, विवाह प्रमाणपत्र सम्मिलित हैं जो यह साबित करते हैं कि अपीलार्थी प्रत्यर्थी की पत्नी है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच वैवाहिक स्थिति पर विवाद नहीं है । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा दिए गए साक्ष्य को प्रत्यर्थी द्वारा अधिक्षेप नहीं किया गया है । अपीलार्थी ने कथन किया है कि उसकी डिग्री के पूर्ण हो जाने के पश्चात् उसने किर्लोस्कर कंपनी, मैसूर में कार्य करना प्रारंभ कर दिया था । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी पर दबाव डाला कि वह नौकरी छोड़ दे, इसलिए उसने नौकरी भी छोड़ दी थी । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी का यह साक्ष्य है कि प्रत्यर्थी के नातेदारों ने अपीलार्थी को पिकनिक के लिए आमंत्रण दिया था और अपीलार्थी पिकनिक गई थी और उसके पश्चात् अपीलार्थी प्रत्यर्थी के नातेदारों के घर पर बेंगलुरु में रही थी । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी और

प्रत्यर्थी के विवाह में प्रत्यर्थी के मित्र और नातेदार ही सम्मिलित हुए थे अर्थात् प्रत्यर्थी के माता-पिता की अनुपस्थिति में आयोजन किया गया था ।

11. इसके अतिरिक्त अपीलार्थी का यह साक्ष्य है कि उसकी जानकारी में आया कि प्रत्यर्थी का किसी अन्य महिला के साथ संबंध है और जब उसने इस पर प्रश्न किया तो प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी से झगड़ा करना और उसे डांटना प्रारंभ कर दिया ।

12. इसके अतिरिक्त अपीलार्थी का साक्ष्य यह भी है कि प्रत्यर्थी के मित्रों ने अपीलार्थी को मोबाइल पर यह बताया कि प्रत्यर्थी ने आत्महत्या करने का प्रयास किया है और उसे अस्पताल में भर्ती कराया गया है और जब अपीलार्थी वहां गई तो उसने प्रत्यर्थी को स्वस्थ और तन्दुरुस्त देखा और यह पाया कि प्रत्यर्थी ने इस संबंध में नाटक किया था । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी का साक्ष्य यह भी है कि प्रत्यर्थी अपीलार्थी के साथ बुरा व्यवहार किया करता था । अपीलार्थी का साक्ष्य यह भी है कि अपीलार्थी ने मैसूर में फैशन डिजाइनिंग के पाठ्यक्रम में दाखिला लिया था और प्रत्यर्थी उसके महाविद्यालय में जाया करता था और अपीलार्थी को वहां यातना देता था । यह भी साक्ष्य है कि प्रत्यर्थी द्वारा दुर्व्यवहार और यातना के कारण अपीलार्थी ने फैशन डिजाइनिंग के पाठ्यक्रम को रोक दिया था और वह प्रत्यर्थी के साथ बेंगलुरु आ गई थी । लेकिन प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की देखभाल करने से इनकार कर दिया था । अपीलार्थी का यह भी साक्ष्य है कि प्रत्यर्थी उसके जीवन की मूल आवश्यकताओं का प्रबंध नहीं कर रहा था । इसलिए, अपीलार्थी ने अपनी जीविका के लिए बेंगलुरु के राजाजी नगर में वोडाफोन कंपनी के टेली-कालिंग विभाग में नौकरी कर ली थी ।

13. यह भी अभिसाक्ष्य दिया गया है कि प्रत्यर्थी सदैव अपीलार्थी की विश्वसनीयता पर संदेह करता था, और जब अपीलार्थी गर्भवती हुई तो प्रत्यर्थी की यातना के कारण उसका गर्भपात हो गया था । इसलिए, यह अपीलार्थी का साक्ष्य था कि वह प्रत्यर्थी के दुर्व्यवहार और यातना को सहन करने में असमर्थ थी और इसलिए उसने वैवाहिक गृह को छोड़

दिया और मैसूर में अपने माता-पिता के साथ रहने लगी थी और इसीलिए उसने विवाह के विघटन के लिए अर्जी फाइल की थी ।

14. उपरोक्त साक्ष्य पर प्रत्यर्थी द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है । अपीलार्थी का साक्ष्य निर्विवाद है । प्रत्यर्थी द्वारा किया गया दुर्व्यवहार और क्रूरता चाहर दीवारी के भीतर हुआ था और उसे बाहर से देखे जाने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है अर्थात् बाहर के साक्षी द्वारा इसकी संपुष्टि करना कठिन है । इसलिए, कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी के साक्ष्य पर विश्वास न करके त्रुटि कारित की है । जहां पत्नी ने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की है और इस पर प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है फिर भी पर्याप्त यथोचित साक्ष्य दिए जाने पर, कुटुंब न्यायालय द्वारा इस आधार पर अर्जी खारिज किया जाना उचित नहीं है ।

15. इसके अतिरिक्त, कुटुंब न्यायालय के विचार में अपीलार्थी किसी अन्य साक्षी को परिक्षित यह साबित करने के लिए कर सकती थी कि प्रत्यर्थी उसके महाविद्यालय गया था और महाविद्यालय में प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के साथ बुरा बर्ताव किया था, साक्षी की परीक्षा की अनुपस्थिति में, अपीलार्थी के संस्करण पर विश्वास नहीं किया जा सकता है, यह कुटुंब न्यायालय का निष्कर्ष भी ठीक नहीं है । केवल इसलिए कि अपीलार्थी ने अपने महाविद्यालय से किसी भी साक्षी को परीक्षित नहीं किया था, तो इसे स्वत: अपीलार्थी के साक्ष्य पर विश्वास न करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है और इसे अर्जी को खारिज करने का कारण भी नहीं बनाया जा सकता है । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता और बुरे बर्ताव के संबंध में साक्ष्य दिए हैं । प्रत्यर्थी ने उस पर प्रतिवाद नहीं किया है और अपीलार्थी के प्रतिविरोध को खारिज करने के लिए कोई भी अवलंब नहीं लिया है । जब यह तथ्य सत्य है, तो कुटुंब न्यायालय द्वारा अर्जी को खारिज किया, जाना ठीक नहीं है ।

16. जब अपीलार्थी ने उसके साथ उसके पति द्वारा की गई क्रूरता के लिए साक्ष्य दिए हैं और इस साक्ष्य पर प्रत्यर्थी द्वारा आक्षेप नहीं किया गया है, तो युक्तियुक्त संदेह के सिद्धांत तब ऐसी स्थिति में

"युक्तियुक्त संदेह के परे" वाले सिद्धांत के बजाय अधिसंभाव्यता की प्रबलता वाला सिद्धांत पर विवेचन करना चाहिए । यदि साक्ष्य की संवीक्षा की जाती है और यह पाया जाता है कि साक्ष्य के वृत्तांत के साथ मेल खाता है, तब इसे न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जा सकता है ।

17. वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी अनुपस्थित है और उसने मामले में कुटुंब न्यायालय में प्रतिवाद नहीं किया है तथा अपीलार्थी द्वारा कथित तथ्यात्मक मैट्रिक्स और कुटुंब न्यायालय के समक्ष दिए गए साक्ष्य पर प्रश्न भी नहीं किया है ।

18. कुटुंब न्यायालय तथा इस न्यायालय के समक्ष पेश होने के लिए प्रत्यर्थी-पति को नोटिस तामील किया गया लेकिन न्यायालय में पेश नहीं हुआ है और कार्यवाहियों में प्रतिवाद नहीं किया है । इसलिए, प्रत्यर्थी-पति के इस आचरण को ध्यान में रखा जा सकता है । ऐसे ही तथ्य और परिस्थितियों में, इस न्यायालय की समन्वय न्यायपीठ ने **जी. प्रेमलता (श्रीमती)** उर्फ **एन. प्रेमलता** बनाम **श्री आर. नागेश**[1] वाले मामले के पैरा 13 और 14 में निम्न प्रकार मत व्यक्त किया गया है :–

> "13. प्रत्यर्थी-पति को कुटुंब न्यायालय के साथ इस न्यायालय द्वारा विधि के अनुसार नोटिस तामील किया गया है । लेकिन उसने कार्यवाहियों में भाग नहीं लिया है । प्रक्रिया विधि का अपना महत्व है । प्रत्यर्थी का न्यायालय की कार्यवाही में उपस्थित न होना या कार्यवाही की ऐसी स्थिति से बचना जब प्रक्रियात्मक विधि के उपबंधों के अधीन न्यायालय के आदेशानुसार उसके समक्ष पेश होना अनिवार्य हो, उस पक्षकार का उपेक्षापूर्ण व्यवहार कहलाता है । इसलिए, हमारा यह मत है कि इस मामले में प्रत्यर्थी के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही करने के लिए अभिलेख पर्याप्त सहजदृश्य है । अभिलेख पर जो तथ्य हैं उनके अनुसार पति-पत्नी नवंबर, 2019 से पृथक् रूप से रह रहे हैं । जैसा कि इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि पृथक् रूप से

[1] आई. एल. आर. (2015) 2863.

रहना और वैवाहिक संबंध को नाममात्र के लिए जारी रखना अपने आप में एक मानसिक क्रूरता है । [हुक्काव्वा **बनाम** विश्वनाथ वाला मामला देखें] । समय बदल गया है । विवाह जैसी प्रक्रिया में समाज की धारणा भी बदल गई है । हम 21वीं सदी में ग्राम के युग की धारणा के साथ जी रहे हैं । भारत के संविधान के अधीन प्रतिष्ठापित व्यक्ति के अधिकारों का कई गुना विस्तार हो चुका है । गरिमामय रूप से जीना अनुच्छेद 21 के अधीन अनिवार्य शर्त है । यहां ऐसी महिला का मामला है जो विवाह बंधन से मुक्ति पाने के लिए कुटुंब न्यायालय और इस न्यायालय के दरवाजों को वर्ष 2012 से खटखटा रही है ।

14. हमारी सुविचारित राय में, प्रत्येक व्यक्ति को अपने रीति रिवाज तथा प्रचलित विधि के अधीन जीवन जीने का अधिकार है । इस पृष्ठभूमि में, कुटुंब न्यायालय का विवाह के विघटन को खारिज करने वाला निर्णय और डिक्री अत्यंत असंगत हैं और ये उन अभिलिखित निष्कर्षों पर आधारित हैं जो विधि में संधारणीय नहीं हैं । न्यायालय समय के साथ आए परिवर्तन से, समाज में विद्यमान परिस्थितियों और उसके विभिन्न रूपों से बोधरहित नहीं रह सकता ।"

19. इसलिए, वर्तमान अपील में अंतर्वलित तथ्यात्मक मैट्रिक्स और इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के सिद्धांत पर विचार करने के पश्चात् जहां पत्नी ने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की है और न्यायालय द्वारा जारी नोटिस के प्राप्त होने के बावजूद प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रतिवाद नहीं किया गया है और वह मौन बना रहा तथा जहां साक्ष्य पर आक्षेप भी नहीं किया गया, तो इन परिस्थितियों में, अपीलार्थी के मामले को स्वीकार किया जा सकता है और अर्जी को खारिज किया जाना बहुत ही कठोर कार्य होगा विशेषकर जब दूसरी ओर से प्रतिवाद नहीं किया गया हो और जहां पत्नी ने न्याय की ईप्सा के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाया हो, तो इन परिस्थितियों में, अपील मंजूर की जानी चाहिए ।

20. इसलिए, हमारा यह निष्कर्ष है कि कुटुंब न्यायालय ने साक्ष्य की विवेचना ठीक प्रकार से नहीं की है और अर्जी को ख़ारिज करके गलत किया है । इस कारण मामले में, अंतर्वलित तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन, हमारा यह मत है कि अपीलार्थी को प्रत्यर्थी के साथ अनुष्ठापित संस्थित विवाह से मुक्त करके संरक्षण दिया जाना चाहिए । अत:, हम निम्नलिखित आदेश पारित करते हैं :

आदेश

(i) अपील मंजूर की जाती है ।

(ii) एम. सी. सं. 107/2018 में प्रथम अपर प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, मैसूर द्वारा तारीख 6 अक्तूबर, 2018 को पारित निर्णय और डिक्री एतद्द्वारा अपास्त किए जाते हैं ।

(iii) अपीलार्थी-पत्नी द्वारा एम. सी. सं. 107/2018 में हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन फाइल अर्जी एतद्दवारा मंजूर की जाती है ।

(iv) अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच तारीख 14 जून, 2015 को बेंगलूरू के शानेश्वर मंदिर, गेलेयारा बलाग के समीप अनुष्ठापित विवाह को एतद्द्वारा विघटित करने का आदेश दिया जाता है ।

खर्चे के विषय में कोई आदेश नहीं किया जाता है । रजिस्ट्री तद्नुसार डिक्री तैयार करे ।

अपील मंजूर की गई ।

अम./अस.

सिंधु बी.

बनाम

वी. बालाचन्द्रन और अन्य

(2015 की सिविल रिट याचिका सं. 10359)

तारीख 26 नवंबर, 2021

न्यायमूर्ति मुरली पुरुषोत्तमन

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 (2007 का 56) – धारा 4 – पिता द्वारा पुत्री के पक्ष में समझौता विलेख निष्पादित किया जाना – पुत्री द्वारा पिता का भरणपोषण किया जाना – तत्पश्चात् भरणपोषण में व्यतिक्रम किया जाना – पिता द्वारा समझौता विलेख रद्द किया जाना – अपील के लंबित रहने के दौरान अपर मुंसिफ न्यायालय द्वारा रद्दकरण विलेख शून्य ठहराया गया है, इसलिए याची-पुत्री यह अभिवाक् नहीं कर सकती कि समझौता विलेख रद्द कर दिया गया था अर्थात् वह समझौता विलेख के अंतर्गत अपने प्रत्यर्थी-पिता का भरणपोषण करने के लिए बाध्य है ।

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 – धारा 4 और 32 [सपठित केरल माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण नियम, 2009 का नियम 13(2), (3)] – पिता को भरणपोषण दिया जाना – पुत्री द्वारा यह वचन दिया गया है कि वह अपने पिता को 4,000/- रुपए प्रति माह का संदाय करने को तैयार है, ऐसी स्थिति में पुत्री की आय का कोई स्रोत न होने जैसे अन्य कोई भी कारक सुसंगत नहीं हैं, इसलिए पुत्री भरणपोषण का संदाय करने के लिए बाध्य है ।

इस मामले में प्रथम प्रत्यर्थी के एक पुत्र सहित चार बच्चे हैं । याची सबसे बड़ी पुत्री है । याची के अनुसार वर्ष 1999 से वह अपने पति और दो बच्चों के साथ अपने माता-पिता के यहां जिस मकान में रह रही

थी वह आर. एस. सं. 288/9, 288/10 और 279/79 के अन्तर्गत ग्राम त्रिकादावुर, जिला कोलम में स्थित है जिसका क्षेत्रफल 8.33 एकड़ है । माता-पिता ने यह संपत्ति उसके नाम तारीख 7 जून, 2007 के समझौता विलेख सं. 1149/2007 (प्रदर्श पी-9) के अनुसार अंचलूमोडू उप रजिस्ट्री कार्यालय में निष्पादित की है और साथ ही इस संपत्ति में बने मकान में वास करने और इस संपत्ति से आय प्राप्त करने के अधिकार को भी आरक्षित रखा है । याची ने नामांतरण कराया और अपनी ओर से कर का संदाय भी किया इसके पश्चात् याची के पति पिता के बीच कारबार को लेकर कतिपय विवाद हुए और याची अपने पति और बच्चों के साथ अपने पारिवारिक गृह से बाहर निकल गई और तारीख 28 अप्रैल, 2009 से किराए के मकान में रहने लगी । प्रथम प्रत्यर्थी ने इस अधिनियम की धारा 4 के अधीन भरणपोषण अधिकरण के समक्ष तारीख 20 अप्रैल, 2010 को अर्जी (प्रदर्श पी-1) फाइल की जिसमें समझौता विलेख रद्द किए जाने या इसके विकल्प में उसे भरणपोषण अधिनिर्णीत किए जाने की ईप्सा की गई । याची ने अधिकरण के समक्ष प्रदर्श पी-1 अर्थात् अर्जी का विरोध किया और यह प्रतिवाद किया कि प्रथम प्रत्यर्थी अपने भरणपोषण के लिए धनार्जन करता है और यह कि इस महिला को उस संपत्ति से बाहर किया गया है जिसका समझौता उसके पक्ष में किया गया था । प्रथम प्रत्यर्थी ने यह भी प्रतिवाद किया है कि उसके पिता ने उससे 5,00,000/- रुपए उधार लिए थे और यदि उसका पिता उसे उक्त राशि वापस कर देता है तब वह संपत्ति अपने नाम में निष्पादित करा सकती है । तथापि, उसने अधिकरण के समक्ष यह वचनबंध अभिलिखित किया कि वह प्रथम प्रत्यर्थी को उसके भरणपोषण के प्रति 4,000/- रुपए प्रतिमाह देने को तैयार है । दोनों पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अधिकरण ने यह निदेश देते हुए आदेश (प्रदर्श पी-2) पारित किया कि वह 4,000/- रुपए प्रतिमाह, जिस पर सहमति व्यक्त की गई है, तारीख 1 नवंबर, 2010 से प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में देगी । उक्त आदेश के अनुसरण में याची ने प्रथम प्रत्यर्थी को तारीख 30 अगस्त, 2012 तक भरणपोषण का संदाय किया । इसके पश्चात्, याची के माता-पिता ने संयुक्त रूप से एक रद्दकरण विलेख सं. 2446/2011 तारीख 24

नवंबर, 2011 को एस. आर. ओ. अंचलूमोडू में निष्पादित की और इस प्रकार पुराना समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द कर दिया गया । याची ने अधिनियम की धारा 10 के अधीन अर्जी (प्रदर्श पी-4) फाइल की जिसमें प्रदर्श पी-2 के अनुसार दिए गए भत्ते में संशोधन इस आधार पर कराने की ईप्सा की गई कि माता-पिता ने समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द कर दिया है और यह कि प्रथम प्रत्यर्थी के पास उसकी आय का स्रोत है ताकि वह स्वयं का भरणपोषण कर सके जबकि याची के पास आय का स्रोत है । प्रथम प्रत्यर्थी ने प्रदर्श पी-4 के विरुद्ध आक्षेप (प्रदर्श पी-5) फाइल किया जिसमें यह उल्लेख किया कि रद्दकरण विलेख को मूल वाद सं. 803/2012 में मुंसिफ, कोलम के समक्ष अर्जीदार द्वारा चुनौती दी गई है कि और यह कि उसके पास आय का कोई स्रोत नहीं है । याची के अनुसार अधिकरण ने अधिनियम की धारा 10 के अधीन उसकी ओर से फाइल की गई अर्जी (प्रदर्श पी-4) पर विचार नहीं किया है किंतु प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए जाने हेतु फाइल किए गए आवेदन पर विचार किया है । अधिकरण प्रदर्श पी-7 भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि में करने से इनकार कर दिया और भरणपोषण संबंधी आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि की । इसके पश्चात् अधिकरण के कहने पर उक्त तहसीलदार ने अर्थात् तृतीय प्रत्यर्थी ने राजस्व वसूली के लिए कार्यवाही आरंभ की और राजस्व वसूली अधिनियम के अधीन 8 माह की अवधि के लिए भरणपोषण की बकाया राशि के रूप में 1,12,000/- रुपए की वसूली के लिए नोटिस (प्रदर्श पी-8) जारी किया । प्रदर्श पी-2, प्रदर्श पी-7 और प्रदर्श पी-8 को इस रिट याचिका में आक्षेपित किया गया है । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण अधिकरण के समक्ष अधिनियम की धारा 4 के अधीन आवेदन (प्रदर्श पी-1) याची के विरुद्ध फाइल किया गया है जिसमें यह कथन किया गया है कि वह प्रथम प्रत्यर्थी का भरणपोषण नहीं कर रही है । अधिकरण के समक्ष की गई ईप्सा समझौता विलेख को रद्द कराना या भरणपोषण का आदेश पारित कराना है । अधिकरण ने आदेश (प्रदर्श पी-2) पारित किया जिसमें याची

को यह निदेश दिया कि वह भरणपोषण के रूप में प्रथम प्रत्यर्थी को, जैसाकि लिखित में स्वीकार किया गया है, 4,000/- रुपए प्रतिमाह देगा । प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिकरण के समक्ष तारीख 18 अक्तूबर, 2011 को एक आवेदन (प्रदर्श आर-1) फाइल किया है जिसमें यह उल्लेख किया है कि याची ने प्रदर्श पी-2 के अनुसार दिए जाने वाले भरणपोषण के संदाय का व्यतिक्रम किया है और याची को निष्पादित की गई संपत्ति की वसूली की भी प्रार्थना की है और साथ ही भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए जाने की ईप्सा की है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) तारीख 24 नवंबर, 2011 को रद्द किया गया । आवेदन (प्रदर्श आर-1) के अनुसरण में अधिकरण द्वारा आदेश (प्रदर्श पी-7) पारित किया गया । आदेश (प्रदर्श पी-7) में अधिकरण द्वारा यह उल्लेख किया गया कि प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख रद्द किया गया था और अधिकरण में भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए बिना आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि कर दी । आवेदन (प्रदर्श पी-4) अधिनियम की धारा 10 के अधीन याची द्वारा फाइल किया गया है जिसमें परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाने के आधार पर प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख रद्द किए जाने के अनुसरण में, भत्ते में परिवर्तन किए जाने की ईप्सा की गई । याची के अनुसार अधिकरण ने प्रथम प्रत्यर्थी के आवेदन (प्रदर्श आर-1) पर आवेदन (प्रदर्श पी-4) को ध्यान में रखे बिना विचार किया है । याची के अनुसार प्रथम प्रत्यर्थी ने, आदेश (प्रदर्श पी-2) के अनुसरण में भरणपोषण राशि प्राप्त करते हुए, समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द किया है, अत: याची कम से कम समझौता विलेख के रद्दकरण की तारीख से तो भरणपोषण पाने का हकदार नहीं है । इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान एस. आर. ओ. अंचलूमोडू के तारीख 24 नवंबर, 2011 का रद्दकरण विलेख सं. 2446/2011, जिसके अनुसार समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द किया गया था, अपर मुंसिफ कोलम द्वारा शून्य घोषित किया गया और उक्त निर्णय के विरुद्ध प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल की गई अपील अपर जिला न्यायालय, कोलम द्वारा खारिज की गई है और उक्त निर्णय अंतिम हो गया है । अत: याची अब यह प्रतिवाद नहीं कर सकता कि समझौता विलेख के रद्दकरण को दृष्टिगत करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी भरणपोषण पाने का हकदार नहीं है । (पैरा 11 और 13)

अधिकरण द्वारा आदेश (प्रदर्श पी-2) याची द्वारा निष्पादित इस वचनबंध के आधार पर पारित किया गया है कि वह प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में प्रतिमाह 4,000/- रुपए का संदाय करने के लिए तैयार है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण के लिए प्रतिमाह मांगी गई राशि 10,000/- रुपए है । आदेश (प्रदर्श पी-2) तारीख 20 नवंबर, 2010 को पारित किया गया है । प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से प्रतिकर की राशि में अभिवृद्धि किए जाने हेतु पारित किया गया आवेदन अधिकरण द्वारा मंजूर नहीं किया गया क्योंकि उक्त आवेदन पर विचार किए जाने के समय समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द हो गया था । प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में प्रतिमाह 4,000/- रुपए दिए जाने के आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि प्रदर्श पी-7 के अनुसार की गई । याची की ओर से अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किए गए वचनबंध को दृष्टिगत करते हुए वह अब यह प्रतिवाद नहीं कर सकती कि वह प्रथम प्रत्यर्थी का भरणपोषण करने के लिए जिम्मेदार नहीं है । उक्त वचनबंध और याची की आय को दृष्टिगत करते हुए, माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण नियम, 2009 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "नियम, 2009" कहा गया है) के नियम 13(3) के अधीन उपबंधित अन्य कारक सुसंगत नहीं हैं और यह दलील कि नियम, 2009 के नियम 13(2) और (3) के उपबंधों का अनुपालन नहीं किया गया है, चलने योग्य नहीं है । याची को, उसकी आय उसके नाम निष्पादित की गई संपत्ति के मूल्य को दृष्टिगत करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी को प्रतिमाह भरणपोषण के रूप में 4,000/- रुपए का संदाय करने के लिए सहमत होना चाहिए था । प्रथम प्रत्यर्थी की आयु अब 84 वर्ष है और भरणपोषण के लिए फाइल किए गए आवेदन (प्रदर्श पी-1) के समय उसकी आयु 73 वर्ष थी । पिछले वर्षों में साहूकारी या अन्य किसी कारबार के माध्यम से उसे आय प्राप्त हो सकती है । जैसाकि इस न्यायालय द्वारा निदेश दिया गया है जिला समाज कल्याण अधिकारी कोलम प्रथम प्रत्यर्थी और याची के यहां तारीख 26 मार्च, 2021 को आया था और तारीख 28 मार्च, 2021 को रिपोर्ट प्रस्तुत की । जिला समाज कल्याण अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट में यह उल्लेख किया है कि प्रथम प्रत्यर्थी को रोजमर्रा के कार्यों के लिए अन्य लोगों की आवश्यकता

है और वह अपनी वृद्ध पत्नी, जिसकी आयु 81 वर्ष है, के साथ रहता है । प्रथम प्रत्यर्थी ने उक्त अधिकारी को यह बताया कि काफी पहले वह साहूकारी के कारबार से कुछ धन अर्जित करता था किंतु अब उसकी आय का कोई स्रोत नहीं है और उसे औषधि आदि के लिए काफी खर्चा करना पड़ता है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र और जिला समाज कल्याण अधिकारी की रिपोर्ट का परिशीलन करने पर यह विश्वास न करने का कोई कारण नहीं है कि वरिष्ठ नागरिक जो अपनी आय और संपत्ति से अपना भरणपोषण करने के लिए सक्षम नहीं है, आदेश (प्रदर्श पी-2) के अनुसार याची से भरणपोषण पाने का हकदार है । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है, 4,000/- रुपए की राशि से संबंधित आदेश वर्ष 2010 में किया गया था । चूंकि उस राशि का भुगतान भी 28 महीनों से नहीं किया गया है, इसलिए राजस्व की वसूली के लिए कार्यवाही संस्थित की गई थी । उपरोक्त चर्चा के आलोक में, न्यायालय को भरणपोषण अधिकरण द्वारा पारित आदेश (प्रदर्श पी-2 और प्रदर्श पी-7) और राजस्व वसूली नोटिस (प्रदर्श पी-8) में हस्तक्षेप किए जाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । तारीख 31 मार्च, 2015 का अंतरिम आदेश बातिल किया जाता है । (पैरा 14 और 17)

सिविल रिट अधिकारिता : 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 10359.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री टी. एम. चन्द्रन और श्री एस. सुजीत

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री वी. जे. जयधर (सरकारी प्लीडर) और श्री के. एम. फैसल

आदेश

याची ने माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 2007" कहा गया है) के अधीन गठित भरणपोषण अधिकरण, कोलम के आदेश (प्रदर्श पी-2 और प्रदर्श पी-7) को चुनौती दी है और साथ ही भरणपोषण अधिकरण द्वारा आदेश की राशि की वसूली के राजस्व नोटिस (प्रदर्श पी-6) को भी चुनौती दी है ।

2. प्रथम प्रत्यर्थी के एक पुत्र सहित चार बच्चे हैं । याची सबसे बड़ी पुत्री है । याची के अनुसार वर्ष 1999 से वह अपने पति और दो बच्चों के साथ अपने माता-पिता के यहां जिस मकान में रह रही थी वह आर. एस. सं. 288/9, 288/10 और 279/79 के अन्तर्गत ग्राम त्रिकादावुर, जिला कोलम में स्थित है जिसका क्षेत्रफल 8.33 एकड़ है । माता-पिता ने यह संपत्ति उसके नाम तारीख 7 जून, 2007 के समझौता विलेख सं. 1149/2007 (प्रदर्श पी-9) के अनुसार अंचलूमोडू उप रजिस्ट्री कार्यालय में निष्पादित की है और साथ ही इस संपत्ति में बने मकान में वास करने और इस संपत्ति से आय प्राप्त करने के अधिकार को भी आरक्षित रखा है । याची ने नामांतरण कराया और अपनी ओर से कर का संदाय भी किया इसके पश्चात् याची के पति पिता के बीच कारबार को लेकर कतिपय विवाद हुए और याची अपने पति और बच्चों के साथ अपने पारिवारिक गृह से बाहर निकल गई और तारीख 28 अप्रैल, 2009 से किराए के मकान में रहने लगी ।

3. प्रथम प्रत्यर्थी ने इस अधिनियम की धारा 4 के अधीन भरणपोषण अधिकरण के समक्ष तारीख 20 अप्रैल, 2010 को अर्जी (प्रदर्श पी-1) फाइल की जिसमें समझौता विलेख रद्द किए जाने या इसके विकल्प में उसे भरणपोषण अधिनिर्णीत किए जाने की ईप्सा की गई । याची ने अधिकरण के समक्ष प्रदर्श पी-1 अर्थात् अर्जी का विरोध किया और यह प्रतिवाद किया कि प्रथम प्रत्यर्थी अपने भरणपोषण के लिए धनार्जन करता है और यह कि इस महिला को उस संपत्ति से बाहर किया गया है जिसका समझौता उसके पक्ष में किया गया था । प्रथम प्रत्यर्थी ने यह भी प्रतिवाद किया है कि उसके पिता ने उससे 5,00,000/- रुपए उधार लिए थे और यदि उसका पिता उसे उक्त राशि वापस कर देता है तब वह संपत्ति अपने नाम में निष्पादित करा सकती है । तथापि, उसने अधिकरण के समक्ष यह वचनबंध अभिलिखित किया कि वह प्रथम प्रत्यर्थी को उसके भरणपोषण के प्रति 4,000/- रुपए प्रतिमाह देने को तैयार है । दोनों पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अधिकरण ने यह निदेश देते हुए आदेश (प्रदर्श पी-2) पारित किया कि वह 4,000/- रुपए प्रतिमाह, जिस पर सहमति व्यक्त की गई है, तारीख

1 नवंबर, 2010 से प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में देगी । उक्त आदेश के अनुसरण में याची ने प्रथम प्रत्यर्थी को तारीख 30 अगस्त, 2012 तक भरणपोषण का संदाय किया ।

4. इसके पश्चात्, याची के माता-पिता ने संयुक्त रूप से एक रद्दकरण विलेख सं. 2446/2011 तारीख 24 नवंबर, 2011 को एस. आर. ओ. अंचलूमोडू में निष्पादित की और इस प्रकार पुराना समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द कर दिया गया ।

5. याची ने अधिनियम की धारा 10 के अधीन अर्जी (प्रदर्श पी-4) फाइल की जिसमें प्रदर्श पी-2 के अनुसार दिए गए भत्ते में संशोधन इस आधार पर कराने की ईप्सा की गई कि माता-पिता ने समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द कर दिया है और यह कि प्रथम प्रत्यर्थी के पास उसकी आय का स्रोत है ताकि वह स्वयं का भरणपोषण कर सके जबकि याची के पास आय का स्रोत है । प्रथम प्रत्यर्थी ने प्रदर्श पी-4 के विरुद्ध आक्षेप (प्रदर्श पी-5) फाइल किया जिसमें यह उल्लेख किया कि रद्दकरण विलेख को मूल वाद सं. 803/2012 में मुंसिफ, कोलम के समक्ष अर्जीदार द्वारा चुनौती दी गई है कि और यह कि उसके पास आय का कोई स्रोत नहीं है ।

6. याची के अनुसार अधिकरण ने अधिनियम की धारा 10 के अधीन उसकी ओर से फाइल की गई अर्जी (प्रदर्श पी-4) पर विचार नहीं किया है किंतु प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए जाने हेतु फाइल किए गए आवेदन पर विचार किया है । अधिकरण प्रदर्श पी-7 भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि में करने से इनकार कर दिया और भरणपोषण संबंधी आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि की । इसके पश्चात् अधिकरण के कहने पर उक्त तहसीलदार ने अर्थात् तृतीय प्रत्यर्थी ने राजस्व वसूली के लिए कार्यवाही आरंभ की और राजस्व वसूली अधिनियम के अधीन 8 माह की अवधि के लिए भरणपोषण की बकाया राशि के रूप में 1,12,000/- रुपए की वसूली के लिए नोटिस (प्रदर्श पी-8) जारी किया । प्रदर्श पी-2, प्रदर्श पी-7 और प्रदर्श पी-8 को इस रिट याचिका में आक्षेपित किया गया है ।

7. प्रथम प्रत्यर्थी ने तारीख 23 जून, 2021 का प्रति-शपथपत्र

फाइल किया है जिसमें यह प्रतिवाद किया है कि उसकी आयु 84 वर्ष है और वह हृदय रोगी है और उसके पास उसके भरणपोषण के लिए आय का कोई स्रोत नहीं है और जो उसकी एकमात्र संपत्ति है वह याची के नाम में इस विश्वास के साथ निष्पादित कर दी गई है कि वह उसकी देखरेख करेगी । चूंकि प्रथम प्रत्यर्थी की एकमात्र संपत्ति याची के नाम निष्पादित कर दी गई थी इसलिए प्रथम प्रत्यर्थी अन्य किसी बच्चे को कोई भी संपत्ति नहीं दे सका । प्रथम प्रत्यर्थी ने यह भी कथन किया है कि याची का पति उधार पैसा देने का कारबार करता है और उसके पास आलीशान मकान है जिसका क्षेत्रफल 72 सेन्ट है और यह प्रकथन कि याची के पास आय का कोई स्रोत नहीं है, मिथ्या है । यह भी प्रकथन किया गया है कि याची का जीवन वैभवशाली है । प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिकरण के समक्ष आवेदन (प्रदर्श आर-1) फाइल किया है जिसमें यह उल्लेख किया है कि याची ने आदेश (प्रदर्श पी-2) के अनुसार भरणपोषण का संदाय करने में व्यतिक्रम किया है और उस आवेदन में प्रथम प्रत्यर्थी ने भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए जाने का भी निवेदन किया क्योंकि तत्कालीन अधिनिर्णीत राशि अनुचित थी । चूंकि याची ने मासिक भरणपोषण का संदाय करने में व्यतिक्रम किया है इसलिए समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द कर दिया गया । प्रदर्श आर-1, (क), (ख) और (ग), जो प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए आवेदन हैं, के अनुसरण में प्रदर्श पी-7 पारित किया गया है । प्रथम प्रत्यर्थी ने यह कथन किया है कि वह अपना भरणपोषण करने में अक्षम है और यह रिट याचिका खारिज की जानी चाहिए ।

8. याची ने शपथपत्र के माध्यम से उत्तर फाइल किया है जिसमें प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रति-शपथपत्र में किए गए प्रकथनों से इनकार किया है । याची ने अंतरिम आवेदन सं. 4/2021 फाइल की है और साथ ही डाक-रसीद (प्रदर्श पी-10) भी प्रस्तुत की है जिससे यह दर्शित हो सके कि उसने अधिनियम की धारा 10 के अधीन अर्जी (प्रदर्श पी-4) फाइल कर दी थी और साथ ही उसने अंतरिम आवेदन सं. 5/2021 भी फाइल किया है जिसमें रिट याचिका में सभी पक्षकारों को सुनने के पश्चात् प्रदर्श पी-4 का निपटारा करने के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी को निदेश दिए

जाने से संबंधित प्रार्थना को लेकर संशोधन किए जाने की ईप्सा की गई है ।

9. याची का मुख्य प्रतिवाद यह है कि जब आदेश (प्रदर्श पी-2) के अनुसरण में याची से भरणपोषण प्राप्त करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी ने समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) को बिना याची को बताए रद्द कर दिया था । आवेदन (प्रदर्श पी-1) में की गई प्रार्थना या तो समझौता विलेख के रद्द किए जाने के संबंध में थी या भरणपोषण अधिनिर्णीत किए जाने के संबंध में । चूंकि समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) तारीख 24 नवंबर, 2011 को रद्द हो गया था इसलिए वह उस तारीख से भरणपोषण पाने का हकदार नहीं है । प्रथम प्रत्यर्थी समझौता विलेख अपास्त किए जाने के लिए अधिनियम की धारा 23 का लाभ नहीं ले सकता क्योंकि यह अधिनियम 24 अगस्त, 2008 को ही प्रवृत्त हुआ था और समझौता विलेख 7 जून, 2007 को निष्पादित किया गया था । यह भी प्रतिवाद किया गया है कि पिता ने अन्य तीन बच्चों से भरणपोषण की मांग नहीं की है । पिता साहूकार है जो लोहे की कीलें बेचने के कारबार के अतिरिक्त साहूकारी भी करता है जबकि याची के पास भरणपोषण के संदाय के लिए आय का कोई स्रोत नहीं है ।

10. याची की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री टी. एम. चन्द्रन, प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री जयधर वी. और प्रत्यर्थी सं. 2 तथा 3 की ओर से विद्वान् सरकारी प्लीडर श्री के. एम. फैसल की सुनवाई की गई है ।

11. प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण अधिकरण के समक्ष अधिनियम की धारा 4 के अधीन आवेदन (प्रदर्श पी-1) याची के विरुद्ध फाइल किया गया है जिसमें यह कथन किया गया है कि वह प्रथम प्रत्यर्थी का भरणपोषण नहीं कर रही है । अधिकरण के समक्ष की गई ईप्सा समझौता विलेख को रद्द कराना या भरणपोषण का आदेश पारित कराना है । अधिकरण ने आदेश (प्रदर्श पी-2) पारित किया जिसमें याची को यह निदेश दिया कि वह भरणपोषण के रूप में प्रथम प्रत्यर्थी को, जैसाकि लिखित में स्वीकार किया गया है, 4,000/- रुपए प्रतिमाह देगा । प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिकरण के समक्ष तारीख 18 अक्तूबर, 2011 को

एक आवेदन (प्रदर्श आर-1) फाइल किया है जिसमें यह उल्लेख किया है कि याची ने प्रदर्श पी-2 के अनुसार दिए जाने वाले भरणपोषण के संदाय का व्यतिक्रम किया है और याची को निष्पादित की गई संपत्ति की वसूली की भी प्रार्थना की है और साथ ही भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए जाने की ईप्सा की है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) तारीख 24 नवंबर, 2011 को रद्द किया गया । आवेदन (प्रदर्श आर-1) के अनुसरण में अधिकारण द्वारा आदेश (प्रदर्श पी-7) पारित किया गया । आदेश (प्रदर्श पी-7) में अधिकरण द्वारा यह उल्लेख किया गया कि प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख रद्द किया गया था और अधिकरण में भरणपोषण की राशि में अभिवृद्धि किए बिना आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि कर दी । आवेदन (प्रदर्श पी-4) अधिनियम की धारा 10 के अधीन याची द्वारा फाइल किया गया है जिसमें परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाने के आधार पर प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा समझौता विलेख रद्द किए जाने के अनुसरण में, भत्ते में परिवर्तन किए जाने की ईप्सा की गई । याची के अनुसार अधिकरण ने प्रथम प्रत्यर्थी के आवेदन (प्रदर्श आर-1) पर आवेदन (प्रदर्श पी-4) को ध्यान में रखे बिना विचार किया है ।

12. प्रति-शपथपत्र और शपथपत्र के उत्तर में दोनों पक्षकारों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि तारीख 24 नवंबर, 2011 की एस. आर. ओ., अंचलूमोडू का रद्दकरण विलेख सं. 2446/2011, जिसके अनुसार समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द किया गया था, याची द्वारा फाइल किए गए मूल वाद सं. 803/2012 में अपर मुंसिफ कोलम द्वारा तारीख 17 अक्तूबर, 2016 के निर्णय द्वारा शून्य घोषित किया गया था । यह भी दलील दी गई है कि 2012 के मूल वाद सं. 803 में पारित किए गए निर्णय और डिक्री के विरुद्ध प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल की गई अपील ए. एस. सं. 10/2017 में अपर जिला न्यायालय, कोलम द्वारा तारीख 21 दिसंबर, 2020 को पारित निर्णय के अनुसार खारिज की गई । उक्त निर्णयों की प्रतियां इस न्यायालय के परिशीलन के लिए याची के काउंसेल द्वारा उपलब्ध कराई गई हैं ।

13. याची के अनुसार प्रथम प्रत्यर्थी ने, आदेश (प्रदर्श पी-2) के

अनुसरण में भरणपोषण राशि प्राप्त करते हुए, समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द किया है, अत: याची कम से कम समझौता विलेख के रद्दकरण की तारीख से तो भरणपोषण पाने का हकदार नहीं है । इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान एस. आर. ओ. अंचलूमोडू के तारीख 24 नवंबर, 2011 का रद्दकरण विलेख सं. 2446/2011, जिसके अनुसार समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द किया गया था, अपर मुंसिफ कोलम द्वारा शून्य घोषित किया गया और उक्त निर्णय के विरुद्ध प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल की गई अपील अपर जिला न्यायालय, कोलम द्वारा खारिज की गई है और उक्त निर्णय अंतिम हो गया है । अत: याची अब यह प्रतिवाद नहीं कर सकता कि समझौता विलेख के रद्दकरण को दृष्टिगत करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी भरणपोषण पाने का हकदार नहीं है ।

14. अधिकरण द्वारा आदेश (प्रदर्श पी-2) याची द्वारा निष्पादित इस वचनबंध के आधार पर पारित किया गया है कि वह प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में प्रतिमाह 4,000/- रुपए का संदाय करने के लिए तैयार है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा भरणपोषण के लिए प्रतिमाह मांगी गई राशि 10,000/- रुपए है । आदेश (प्रदर्श पी-2) तारीख 20 नवंबर, 2010 को पारित किया गया है । प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से प्रतिकर की राशि में अभिवृद्धि किए जाने हेतु पारित किया गया आवेदन अधिकरण द्वारा मंजूर नहीं किया गया क्योंकि उक्त आवेदन पर विचार किए जाने के समय समझौता विलेख (प्रदर्श पी-9) रद्द हो गया था । प्रथम प्रत्यर्थी को भरणपोषण के रूप में प्रतिमाह 4,000/- रुपए दिए जाने के आदेश (प्रदर्श पी-2) की पुष्टि प्रदर्श पी-7 के अनुसार की गई । याची की ओर से अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किए गए वचनबंध को दृष्टिगत करते हुए वह अब यह प्रतिवाद नहीं कर सकती कि वह प्रथम प्रत्यर्थी का भरणपोषण करने के लिए जिम्मेदार नहीं है । उक्त वचनबंध और याची की आय को दृष्टिगत करते हुए, माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण नियम, 2009 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "नियम, 2009" कहा गया है) के नियम 13(3) के अधीन उपबंधित अन्य कारक सुसंगत नहीं हैं और यह दलील कि नियम, 2009 के नियम 13(2) और (3) के उपबंधों का अनुपालन नहीं किया गया है, चलने

योग्य नहीं है । याची को, उसकी आय उसके नाम निष्पादित की गई संपत्ति के मूल्य को दृष्टिगत करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी को प्रतिमाह भरणपोषण के रूप में 4,000/- रुपए का संदाय करने के लिए सहमत होना चाहिए था ।

15. चूंकि अधिकरण ने समझौता विलेख को शून्य घोषित करने के लिए अधिनियम की धारा 23 के अधीन आदेश पारित नहीं किया है, इसलिए याची की इस दलील पर विचार किए जाने की आवश्यकता नहीं है कि यह अधिनियम 24 अगस्त, 2008 को ही प्रवृत्त हुआ था और समझौता विलेख तारीख 7 जून, 2007 को निष्पादित किया गया था और यह कि इसलिए अधिनियम की धारा 23 का लाभ नहीं ले सकता ।

16. याची की ओर से एक अन्य दलील दी गई है कि प्रथम प्रत्यर्थी ने अन्य तीन बच्चों से भरणपोषण की मांग नहीं की है । प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिकरण के समक्ष यह प्रतिवाद किया कि चूंकि सम्पूर्ण संपत्ति याची को निष्पादित कर दी गई है, इसलिए उसे याची से संरक्षण और भरणपोषण अपेक्षित है । इस सन्दर्भ में अधिनियम की धारा 5(5) निर्दिष्ट करना उचित होगा :–

> "धारा 5(5) : उपधारा (1) के अधीन भरणपोषण के लिए कोई आवेदन एक या अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध फाइल किया जा सकेगा :
>
> परन्तु ऐसे बालक या नातेदार भरणपोषण के लिए आवेदन में माता-पिता का भरणपोषण करने के लिए दायी अन्य व्यक्ति को पक्षकार बना सकेंगे ।"

याची ने अधिकरण के समक्ष अपने भाई-बहिन को पक्षकार बनाने का प्रयास नहीं किया है । अतः, इस कार्यवाही में याची की उक्त दलील में कोई सार विचारणीय नहीं है ।

17. प्रथम प्रत्यर्थी की आयु अब 84 वर्ष है और भरणपोषण के लिए फाइल किए गए आवेदन (प्रदर्श पी-1) के समय उसकी आयु 73 वर्ष थी । पिछले वर्षों में साहूकारी या अन्य किसी कारबार के माध्यम से

उसे आय प्राप्त हो सकती है । जैसाकि इस न्यायालय द्वारा निदेश दिया गया है जिला समाज कल्याण अधिकारी कोलम प्रथम प्रत्यर्थी और याची के यहां तारीख 26 मार्च, 2021 को आया था और तारीख 28 मार्च, 2021 को रिपोर्ट प्रस्तुत की । जिला समाज कल्याण अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट में यह उल्लेख किया है कि प्रथम प्रत्यर्थी को रोजमर्रा के कार्यों के लिए अन्य लोगों की आवश्यकता है और वह अपनी वृद्ध पत्नी, जिसकी आयु 81 वर्ष है, के साथ रहता है । प्रथम प्रत्यर्थी ने उक्त अधिकारी को यह बताया कि काफी पहले वह साहूकारी के कारबार से कुछ धन अर्जित करता था किंतु अब उसकी आय का कोई स्रोत नहीं है और उसे औषधि आदि के लिए काफी खर्चा करना पड़ता है। प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र और जिला समाज कल्याण अधिकारी की रिपोर्ट का परिशीलन करने पर यह विश्वास न करने का कोई कारण नहीं है कि वरिष्ठ नागरिक जो अपनी आय और संपत्ति से अपना भरणपोषण करने के लिए सक्षम नहीं है, आदेश (प्रदर्श पी-2) के अनुसार याची से भरणपोषण पाने का हकदार है । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया गया है, 4,000/- रुपए की राशि से संबंधित आदेश वर्ष 2010 में किया गया था । चूंकि उस राशि का भुगतान भी 28 महीनों से नहीं किया गया है, इसलिए राजस्व की वसूली के लिए कार्यवाही संस्थित की गई थी । उपरोक्त चर्चा के आलोक में, मुझे भरणपोषण अधिकरण द्वारा पारित आदेश (प्रदर्श पी-2 और प्रदर्श पी-7) और राजस्व वसूली नोटिस (प्रदर्श पी-8) में हस्तक्षेप किए जाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । तारीख 31 मार्च, 2015 का अंतरिम आदेश बातिल किया जाता है । रिट याचिका खारिज की जाती है । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता ।

याचिका खारिज की गई ।

अस.

कुणाल विनय कुमार रेलॉन

बनाम

धनसुख हरजीभाई पटेल

(2019 का विशेष सिविल आवेदन सं. 15899)

तारीख 27 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति अशोक कुमार सी. जोशी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 1, नियम 10, आदेश 8, नियम 6क और आदेश 22, नियम 10 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – वाद लंबित रहने के दौरान अंतरिती/प्रतिवादियों को पक्षकार बनाना – प्रतिवादियों का पहले से ही प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार होना – याची पहले से ही वाद के प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार है और उसकी प्रतिरक्षा के अधिकार को किसी भी प्रकार से कम नहीं किया गया है और यह कि जब प्रत्यर्थियों का यह कहना है कि मूल वादी और याची एक-दूसरे के नातेदार हैं और इन्हीं के मध्य विक्रय संव्यवहार हुआ है, तब याची को पुनः पक्षकार नहीं बनाया जा सकता, अतः निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

यह याचिका भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन 2015 के सिविल वाद सं 140 में विद्वान् चतुर्थ अपर ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश के तारीख 9 अगस्त, 2019 के आदेश (प्रदर्श 68) और अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भुज, कच्छ के आदेश (प्रदर्श 70) के विरुद्ध फाइल की गई है । मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि भूखंड (राजस्व सर्वेक्षण सं. 30 और 173पी13, ग्राम: मिर्ज़ापुर, तालुका: भुज, जिला: कच्छ इस मामले में विवादित है । उक्त भूखंड का स्वामी धनसुखभाई हरजीभाई पटेल है जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 है । तारीख 2 मई, 2000 को धनसुखलाल ने अपने जीजा धीरजलाल

लड्ढाभाई पटेल के पक्ष में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया । चूंकि धनसुखभाई हरजीभाई पटेल ओमान में रहता था इसलिए उसकी संपत्ति का प्रबंधन उसके जीजा धीरजलाल द्वारा किया जा रहा था । 13 जून, 2000 को मुख्तार नामे के आधार पर धीरजलाल ने रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से एक भूखंड विक्रय कर दिया । तारीख 14 दिसंबर, 2000 को धीरजलाल ने वन विभाग द्वारा जारी अधिसूचना के आधार पर कतिपय भूखंडों को उन्मुक्त कराने के लिए आवेदन किया । तारीख 25 जुलाई, 2001 को धीरजलाल लड्ढाभाई पटेल ने धनसुखभाई का मुख्तारनामा धारक होने के आधार पर भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30 पाईकी ए/2-30जी) को पुराने भूखंड में संपरिवर्तित कराने का आवेदन किया । तारीख 17 मई, 2003 को धनसुखभाई ने वसुदेवभाई (प्रत्यर्थी सं. 3 का पिता) के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया । तारीख 17 मई, 2003 को वसुदेवभाई के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किए जाने के पश्चात् केवल वसुदेवभाई द्वारा संसूचनाएं और कार्यवाहियां की गईं और धीरजलाल ने कोई भी कार्यवाही करना बंद कर दिया । तारीख 22 दिसंबर, 2003 को एक आवेदन इस संबंध में प्रस्तुत किया गया कि तारीख 17 मई, 2003 को आवेदक धनसुखभाई ने वसुदेवभाई के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया था, इसलिए प्रीमियम का संदाय उसके द्वारा किया जाएगा और यह कि उसे आगे भी संसूचित किया जा सकता है । तारीख 1 फरवरी, 2004 को तृतीय पक्षकार ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30) के विक्रय के लिए एक नोटिस प्रकाशित किया । तारीख 3 फरवरी, 2004 को वसुदेवभाई ने धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में इसके विरुद्ध आक्षेप प्रकाशित किए । तारीख 23 जुलाई, 2004 को वसुदेवभाई ने नए भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30 पाईकी ए/2-30जी) का संपरिवर्तन पुराने भूखंड में कराने के लिए 36,60,160/- रुपए का संदाय किया । तारीख 8 सितंबर, 2004 को कलक्टर ने यह आवेदन मंजूर करते हुए आदेश पारित किया । तारीख 10 नवंबर, 2005 को वसुदेवभाई ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 पाईकी ए/2-30जी) का संपरिवर्तन पुराने भूखंड में किए जाने के लिए सरकारी कोष के लिए 30,27,088/- रुपए

का बैंक चैक जारी किया । तारीख 12 दिसंबर, 2005 को वसुदेवभाई के खाते से उक्त चैक का भुगतान कर दिया गया । तारीख 30 नवंबर, 2005 को कलक्टर ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 पाईकी ए/2-30जी) को पुराने भूखंड में परिवर्तित करने के लिए आदेश पारित किया जिसमें वसुदेव का नाम भी धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में उल्लिखित था । तारीख 7 दिसंबर, 2005 को वसुदेवभाई ने विकास-अनुज्ञा के लिए आवेदन किया और बी.एच.ए.डी.ए. को 33,827/- रुपए का संदाय किया । तारीख 10 अगस्त, 2006 को वसुदेवभाई विशेष सिविल वाद सं. 205/2005 में आवेदक के मुख्तारनामा धारक के रूप में पेश हुआ जो उसकी ओर से वाद लड़ रहा है । चूंकि भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 वन परिक्षेत्र के अधीन आता था, इसलिए वसुदेवभाई ने तारीख 30 दिसंबर, 2004 को इस भूखंड को वन परिक्षेत्र से अलग करके सामान्य वाणिज्यिक परिक्षेत्र में सम्मिलित किए जाने का आवेदन किया । तारीख 9 मई, 2007 को गुजरात सरकार के यू. डी. और यू. एच. विभाग ने वसुदेवभाई को यह बताया कि वह बी.एच.ए.डी.ए. (भुज क्षेत्र विकास प्राधिकरण) के समक्ष आवेदन करे । तारीख 29 फरवरी, 2008 को वसुदेवभाई द्वारा बी.एच.ए.डी.ए. के समक्ष एक और आवेदन किया गया । इस प्रकार, वसुदेवभाई अर्थात् इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 ने धनसुखभाई (प्रत्यर्थी सं. 1) के मुख्तारनामा धारक के रूप में कार्य किया । तारीख 5 जून, 2009 को वसुदेवभाई ने धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में कार्य करते हुए निशांत ठक्कर (प्रत्यर्थी सं. 3) के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया । तथापि, उप-रजिस्ट्रार ने भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 32-क के अधीन समुचित मूल्य का संदाय किए जाने के लिए उक्त विक्रय विलेख निर्दिष्ट किया । तारीख 19 मार्च, 2010 को उप-कलक्टर, स्टाम्प शुल्क मूल्यांकन ने इस विक्रय विलेख को गैर-कृषि भूमि से सम्बंधित माना और इस प्रकार गैर-कृषि भूमि को लागू होने वाले शुल्क के आधार पर स्टाम्प शुल्क का संदाय किए जाने का आदेश किया । सी.सी.आर.ए. (सर्टिफाइड क्लिनिकल रिसर्च एसोशिएट) द्वारा तारीख 16 नवंबर, 2010 को उप-कलक्टर

द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की गई । निशांतभाई ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष सिविल आवेदन सं. 2939/2011 फाइल किया जिसमें ऊपर निर्दिष्ट दोनों आदेशों को चुनौती दी गई । तारीख 21 फरवरी, 2012 को इस न्यायालय ने आवेदन मंजूर किया और उपकलक्टर और सी.सी.आर.ए. द्वारा पारित आदेश अभिखंडित किए । तारीख 1 जून, 2013 को रिमांड के पश्चात् स्टाम्प शुल्क में आई कमी को पूरा करने के लिए आदेश पारित किया गया और शेष स्टाम्प शुल्क का संदाय किए जाने के पश्चात् विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किए जाने का आदेश पारित किया गया । यद्यपि भूखंड पहले ही निशांत वसुदेव ठक्कर को विक्रय किए जा चुके थे फिर भी तारीख 20 जनवरी, 2014 को धनसुखभाई ने विवादित भूमि के आधे भाग का मनीष अंबालाल पद्मिनी (प्रत्यर्थी सं. 2) के पक्ष में विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किया । तारीख 31 अगस्त, 2014 को धनसुखभाई के कहने पर एक सार्वजनिक सूचना जारी की गई जिसके द्वारा निशांतभाई और उसके पिता वसुदेवभाई के साथ किया गया संव्यवहार अन्-अंगीकृत किया गया । इस प्रकार, धनसुखभाई के विरुद्ध तारीख 27 सितंबर, 2014 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (अपराध सं. I-131/2014) निशांतभाई द्वारा दर्ज कराई गई । इस संबंध में मामला इस न्यायालय के समक्ष लंबित है । इस पृष्ठभूमि में, तारीख 8 दिसंबर, 2015 को निशांत वसुदेव ठक्कर द्वारा विशेष सिविल वाद सं. 140/2015 धनसुखलाल हरजी और मनीष अंबालाल पद्मिनी के विरुद्ध फाइल किया गया जिसमें यह घोषणा किए जाने की ईप्सा की गई कि प्रतिवादियों को वादी के हक और कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है ; दूसरी ईप्सा इस घोषणा के लिए की गई कि प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा निष्पादित किया गया तारीख 20 जनवरी, 2014 का विक्रय विलेख शून्य है और तीसरी ईप्सा स्थायी व्यादेश दिए जाने के लिए की गई । उक्त वाद में, प्रतिवादी तारीख 1 जुलाई, 2016 को पेश हुए और धनसुखभाई लिम्बानी और मनीष लिम्बानी, जो इस वाद में प्रतिवादी है, द्वारा प्रतिदावा फाइल किया गया जिसमें मुख्य तौर पर तारीख 17 मई, 2003 मुख्तारनामा विलेख,

तारीख 5 जून, 2009 का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के रद्द किए जाने तथा 5 करोड़ रुपए की नुकसानी की ईप्सा की गई । निशांत ठाकुर द्वारा तारीख 3 फरवरी, 2018 को कुणाल रेलॉन और दीपकभाई पी. ठक्कर के पक्ष में विवादित भूमि का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित किया गया और 1,15,00,000/- रुपए का संदाय किया गया । तारीख 3 फरवरी, 2018 के विक्रय विलेख के अनुसरण में प्रविष्टि सं. 6452 की गई जिसे धनसुखभाई लम्बानी द्वारा किए गए आक्षेपों को निरस्त करते हुए तारीख 16 मई, 2018 को प्रमाणित किए जाने का आदेश किया गया । तारीख 9 अप्रैल, 2018 को मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा एक आवेदन (प्रदर्श-44) फाइल किया गया जिसमें उनके द्वारा फाइल किए गए प्रतिदावे में प्रतिवादी बनने की ईप्सा की गई और वह आवेदन मंजूर किया गया और इस मामले में के याचियों को प्रतिदावे में पक्षकार बना लिया गया । तारीख 10 जुलाई, 2018 को कुनाल रेलॉन द्वारा एक आवेदन (प्रदर्श-68) फाइल किया गया जिसमे उसे वादी सं. 2 के रूप में पक्षकार बनाने और वादपत्र में यह संशोधन करने की ईप्सा की गई कि उसके पक्ष में विक्रय विलेख के निष्पादन के तथ्य को अभिलेख पर प्रस्तुत किया जाए । उसी दिन एक आवेदन (प्रदर्श-70) दीपक ठक्कर द्वारा भी फाइल किया गया जिसमें उसे वादी सं. 3 के रूप में पक्षकार बनाने की ईप्सा की गई और साथ ही उसके पक्ष में वादपत्र में यह संशोधन किए जाने की भी ईप्सा की गई की विक्रय विलेख के निष्पादन का तथ्य अभिलेख पर लाया जाए । तारीख 9 अगस्त, 2019 के एक ही आदेश द्वारा उक्त आवेदन खारिज कर दिया गया, इसलिए यह याचिका फाइल की गई है । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – याचियों के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि वादकालीन अंतरिती इस सीमा तक मुकदमेबाजी में महत्वपूर्ण हित रखते हैं जिस सीमा तक उन्होंने प्रतिवादी से हित अर्जित किया है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने उक्त विनिश्चय में अधिकथित विनिश्चयाधार का पालन न किए जाने का कोई भी कारण नियत नहीं किया है, तथापि, इस मामले में न्यायालय का जो विवेकाधिकार है, उसका प्रयोग न्यासंगत

रूप से किया जाना चाहिए । वर्तमान मामले में, याची पहले से ही वाद के प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में सम्मिलित हो चुके हैं और जब याचिओं का यह मामला नहीं है कि उनके प्रतिरक्षण के अधिकार को किसी भी तरह से कम किया गया है, और जब प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 का यह मामला है कि मूल वादी और याची एक-दूसरे के नातेदार हैं और जिनके मध्य वादकालीन विक्रय संव्यवहार हुआ है, तब इस न्यायालय की सुविचारित राय में, विचारण न्यायाधीश ने ऐसी कोई त्रुटि नहीं की है, जिसके लिए इसमें इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की अपेक्षा की जाए । इसके अतिरिक्त, एक अन्य मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का परिशीलन करने पर यह पता चलता है कि, 'संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालयों को प्रदत्त पर्यवेक्षी अधिकारिता केवल यह देखने के लिए सीमित है कि क्या एक निचला न्यायालय या अधिकरण ने अपने मापदंडों के भीतर कार्यवाही की है या नहीं और अभिलेख पर छोटी-मोटी त्रुटि या विधि की त्रुटि को ठीक करने के लिए नहीं है । संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षी शक्ति का प्रयोग करने में, उच्च न्यायालय, अपील न्यायालय या अधिकरण के रूप में कार्य नहीं करता है । संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन फाइल की गई याचिका पर उच्च न्यायालय को यह भी अनुज्ञेय नहीं है कि वह उन साक्ष्यों का पुनर्विलोकन या पुन: मूल्यांकन करे, जिस पर निचला न्यायालय या अधिकरण ने तात्पर्यित ओदश पारित किया है या विनिश्चय में विधि की त्रुटियों को ठीक करें । इस प्रकार, संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षी अधिकारिता के अधीन, इस न्यायालय की परिधि सीमित है । इसके अतिरिक्त एक और मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने वादकालीन अंतरिती को वाद में प्रतिवादी पक्षकार के रूप में सम्मिलित होने को अनुज्ञात करने के दौरान, उसे ऐसी सभी प्रतिरक्षाएं लेने हेतु अनुज्ञात किया था जो विक्रेता को उपलब्ध हों क्योंकि अपीलार्थी ने वादी के साथ हुए करार के पश्चात् उक्त संपत्ति के क्रय के आधार पर क्रेता से हक, यदि कोई था, व्युत्पन्न किया था । यहां, वर्तमान मामले में भी याची प्रतिदावे में जो केवल मुख्य वाद में है प्रतिवादी पक्षकार हैं और इसलिए मामला यह नहीं है कि वे वाद में

पक्षकार नहीं है । इसके अतिरिक्त, जब प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने विनिर्दिष्ट रूप से प्रकथन किया है कि इसे अनजाने में 'वाद' के स्थान पर 'प्रतिवाद' उल्लिखित कर दिया गया था, इसलिए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है । (पैरा 7.7, 7.8 और 7.9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389 : **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** ;	5.3
[2010]	(2010) 7 एस. सी. सी. 417 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3109 : **मुंबई इंटरनेशनल एयरपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **रिजेंसी कन्वेंशन सेंटर एंड होटल्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** ;	4.1
[2010]	(2010) 8 एस. सी. सी. 329 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6387 : **शालिनी श्याम शेट्टी और अन्य** बनाम **राजेन्द्र शंकर पाटिल** ;	7.11
[2009]	(2009) 12 एस. सी. सी. 175 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 1333 : **जे. कुमारदासन नायर और अन्य** बनाम **इरिक सोहन और अन्य** ;	4.3
[2009]	(2009) 9 एस. सी. सी. 173 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5385 : **पी. के. पलानीसामी** बनाम **अरुमुगम और एक अन्य** ;	4.3

[2007] ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1332 = 2006 जी.एल.एच.ई.एल.एस.सी. 38393 : **संजय वर्मा** बनाम **माणिक रॉय** ; 4.2

[2007] (2007) 13 एस. सी. सी. 255 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. सप्ली. 757 : **रामसुंदर राम** बनाम **भारत संघ** ; 5.1

[2005] (2005) 1 एस. सी. सी. 787 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 626 : **भानू कुमार जैन** बनाम **अर्चना कुमार और अन्य** ; 4.4

[2005] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2209 : **अमित कुमार शॉ** बनाम **फरीदा खातून** ; 4, 7

[2004] (2004) 12 एस. एस. सी. 278 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2004 एस. सी. 125 : **एन. मनी** बनाम **संगीता थिएटर और अन्य** ; 5.1

[2004] (2004) 1 जी. एल. आर. 106 = ए. आई. आर. 2004 गुजरात 140 : **राजेन्द्रसिंह भरतसिंह सरवैया** बनाम **किरितसिंह बलवंतसिंह जडेजा** ; 4.4

[2004] ए. आई. आर 2004 एस. सी. 173 = 2003 (ओ)जी.एल.एच.ई.एल.एस.सी. 3681 : **बीबी जुबैदा खातून** बनाम **नबी हसन साहेब** ; 4.2

[2003] (2003) 3 एस. सी. सी. 524 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1561 : **साधना लोध** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और एक अन्य** ; 5.2

[2002] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 110 = एम.ए.एन.यू./एस.सी. 0718/2001 : **औसेफ मथाई और अन्य** बनाम **एम. अब्दुल खादिर** ; 7.12

[1984] 1984 जी. एल. एच. 883 :
फतेहसिंहराव प्रतापसिंहराव गायकवाड बनाम
सावजीभाई हरिभाई पटेल । 4.4

सिविल रिट अधिकारिता : 2019 का विशेष सिविल आवेदन सं. 15899.

विद्वान् अपर ज्येष्ठ सिविल जज – चतुर्थ और अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भुज, कच्छ द्वारा तारीख 9 अगस्त, 2019 को विशेष सिविल वाद सं. 140/2015 में पारित आदेशों (प्रदर्श-68 और प्रदर्श-70) के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सुश्री तृषा के. पटेल

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जेनिल एम. शाह और श्री एस. के. पटेल

आदेश

यह याचिका भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन 2015 के सिविल वाद सं 140 में विद्वान् चतुर्थ अपर ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश के तारीख 9 अगस्त, 2019 के आदेश (प्रदर्श-68) और अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भुज, कच्छ के आदेश (प्रदर्श-70) के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि भूखंड (राजस्व सर्वेक्षण सं. 30 और 173पी13, ग्राम: मिर्ज़ापुर, तालुका: भुज, जिला: कच्छ इस मामले में विवादित है । उक्त भूखंड का स्वामी धनसुखभाई हरजीभाई पटेल है जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 है । तारीख 2 मई, 2000 को धनसुखलाल ने अपने जीजा धीरजलाल लड्ढाभाई पटेल के पक्ष में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया । चूंकि धनसुखभाई हरजीभाई पटेल ओमान में रहता था इसलिए उसकी संपत्ति का प्रबंधन उसके जीजा धीरजलाल द्वारा किया जा रहा था । 13 जून, 2000 को मुख़्तार नामे के आधार पर धीरजलाल ने रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से एक भूखंड विक्रय कर दिया । तारीख 14 दिसंबर, 2000 को धीरजलाल ने वन विभाग द्वारा जारी अधिसूचना के आधार पर कतिपय

भूखंडों को उन्मुक्त कराने के लिए आवेदन किया । तारीख 25 जुलाई, 2001 को धीरजलाल लड्ढाभाई पटेल ने धनसुखभाई का मुख्तारनामा धारक होने के आधार पर भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30 पाईकी ए/2-30जी) को पुराने भूखंड में संपरिवर्तित कराने का आवेदन किया । तारीख 17 मई, 2003 को धनसुखभाई ने वसुदेवभाई (प्रत्यर्थी सं. 3 का पिता) के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया । तारीख 17 मई, 2003 को वसुदेवभाई के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किए जाने के पश्चात् केवल वसुदेवभाई द्वारा संसूचनाएं और कार्यवाहियां की गईं और धीरजलाल ने कोई भी कार्यवाही करना बंद कर दिया । तारीख 22 दिसंबर, 2003 को एक आवेदन इस संबंध में प्रस्तुत किया गया कि तारीख 17 मई, 2003 को आवेदक धनसुखभाई ने वसुदेवभाई के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया था, इसलिए प्रीमियम का संदाय उसके द्वारा किया जाएगा और यह कि उसे आगे भी संसूचित किया जा सकता है । तारीख 1 फरवरी, 2004 को तृतीय पक्षकार ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30) के विक्रय के लिए एक नोटिस प्रकाशित किया । तारीख 3 फरवरी, 2004 को वसुदेवभाई ने धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में इसके विरुद्ध आक्षेप प्रकाशित किए । तारीख 23 जुलाई, 2004 को वसुदेवभाई ने नए भूखंड (सर्वेक्षण सं. 30 पाईकी ए/2-30जी) का संपरिवर्तन पुराने भूखंड में कराने के लिए 36,60,160/- रुपए का संदाय किया । तारीख 8 सितंबर, 2004 को कलक्टर ने यह आवेदन मंजूर करते हुए आदेश पारित किया । तारीख 10 नवंबर, 2005 को वसुदेवभाई ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 पाईकी ए/2-30जी) का संपरिवर्तन पुराने भूखंड में किए जाने के लिए सरकारी कोष के लिए 30,27,088/- रुपए का बैंक चैक जारी किया । तारीख 12 दिसंबर, 2005 को वसुदेवभाई के खाते से उक्त चैक का भुगतान कर दिया गया । तारीख 30 नवंबर, 2005 को कलक्टर ने भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 पाईकी ए/2-30जी) को पुराने भूखंड में परिवर्तित करने के लिए आदेश पारित किया जिसमें वसुदेव का नाम भी धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में उल्लिखित था । तारीख 7 दिसंबर, 2005 को वसुदेवभाई ने विकास-अनुज्ञा के लिए आवेदन किया और बी.एच.ए.डी.ए. को 33,827/- रुपए का संदाय किया । तारीख 10

अगस्त, 2006 को वसुदेवभाई विशेष सिविल वाद सं. 205/2005 में आवेदक के मुख्तारनामा धारक के रूप में पेश हुआ जो उसकी ओर से वाद लड़ रहा है । चूंकि भूखंड (सर्वेक्षण सं. 173 वन परिक्षेत्र के अधीन आता था, इसलिए वसुदेवभाई ने तारीख 30 दिसंबर, 2004 को इस भूखंड को वन परिक्षेत्र से अलग करके सामान्य वाणिज्यिक परिक्षेत्र में सम्मिलित किए जाने का आवेदन किया । तारीख 9 मई, 2007 को गुजरात सरकार के यू. डी. और यू. एच. विभाग ने वसुदेवभाई को यह बताया कि वह बी.एच.ए.डी.ए. (भुज क्षेत्र विकास प्राधिकरण) के समक्ष आवेदन करे । तारीख 29 फरवरी, 2008 को वसुदेवभाई द्वारा बी.एच.ए.डी.ए. के समक्ष एक और आवेदन किया गया । इस प्रकार, वसुदेवभाई अर्थात् इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 ने धनसुखभाई (प्रत्यर्थी सं. 1) के मुख्तारनामा धारक के रूप में कार्य किया ।

2.1 तारीख 5 जून, 2009 को वसुदेवभाई ने धनसुखभाई के मुख्तारनामा धारक के रूप में कार्य करते हुए निशांत ठक्कर (प्रत्यर्थी सं. 3) के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया । तथापि, उप-रजिस्ट्रार ने भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 32-क के अधीन समुचित मूल्य का संदाय किए जाने के लिए उक्त विक्रय विलेख निर्दिष्ट किया । तारीख 19 मार्च, 2010 को उप कलक्टर, स्टाम्प शुल्क मूल्यांकन ने इस विक्रय विलेख को गैर-कृषि भूमि से सम्बंधित माना और इस प्रकार गैर-कृषि भूमि को लागू होने वाले शुल्क के आधार पर स्टाम्प शुल्क का संदाय किए जाने का आदेश किया । सी.सी.आर.ए. (सर्टिफाइड क्लिनिकल रिसर्च एसोशिएट) द्वारा तारीख 16 नवंबर, 2010 को उप कलक्टर द्वारा पारित आदेश की पुष्टि की गई । निशांतभाई ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष सिविल आवेदन सं. 2939/2011 फाइल किया जिसमें ऊपर निर्दिष्ट दोनों आदेशों को चुनौती दी गई । तारीख 21 फरवरी, 2012 को इस न्यायालय ने आवेदन मंजूर किया और उपकलक्टर और सी.सी.आर.ए. द्वारा पारित आदेश अभिखंडित किए । तारीख 1 जून, 2013 को रिमांड के पश्चात् स्टाम्प शुल्क में आई कमी को पूरा करने के लिए आदेश पारित किया गया और शेष स्टाम्प शुल्क का संदाय किए जाने के पश्चात् विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किए जाने का आदेश पारित किया गया ।

2.2 यद्यपि भूखंड पहले ही निशांत वसुदेव ठक्कर को विक्रय किए जा चुके थे फिर भी तारीख 20 जनवरी, 2014 को धनसुखभाई ने विवादित भूमि के आधे भाग का मनीष अंबालाल पद्मिनी (प्रत्यर्थी सं. 2) के पक्ष में विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किया । तारीख 31 अगस्त, 2014 को धनसुखभाई के कहने पर एक सार्वजनिक सूचना जारी की गई जिसके द्वारा निशांतभाई और उसके पिता वसुदेवभाई के साथ किया गया संव्यवहार अन्-अंगीकृत किया गया । इस प्रकार, धनसुखभाई के विरुद्ध तारीख 27 सितंबर, 2014 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (अपराध सं. I-131/2014) निशांतभाई द्वारा दर्ज कराई गई । इस संबंध में मामला इस न्यायालय के समक्ष लंबित है । इस पृष्ठभूमि में, तारीख 8 दिसंबर, 2015 को निशांत वसुदेव ठक्कर द्वारा विशेष सिविल वाद सं. 140/2015 धनसुखलाल हरजी और मनीष अंबालाल पद्मिनी के विरुद्ध फाइल किया गया जिसमें यह घोषणा किए जाने की ईप्सा की गई कि प्रतिवादियों को वादी के हक और कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है ; दूसरी ईप्सा इस घोषणा के लिए की गई कि प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा निष्पादित किया गया तारीख 20 जनवरी, 2014 का विक्रय विलेख शून्य है और तीसरी ईप्सा स्थायी व्यादेश दिए जाने के लिए की गई ।

2.3 उक्त वाद में, प्रतिवादी तारीख 1 जुलाई, 2016 को पेश हुए और धनसुखभाई लिम्बानी और मनीष लिम्बानी, जो इस वाद में प्रतिवादी हैं, द्वारा प्रतिदावा फाइल किया गया जिसमे मुख्य तौर पर तारीख 17 मई, 2003 मुख्तारनामा विलेख, तारीख 5 जून, 2009 का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के रद्द किए जाने तथा 5 करोड़ रुपए की नुकसानी की ईप्सा की गई । निशांत ठाकुर द्वारा तारीख 3 फरवरी, 2018 को कुणाल रेलॉन और दीपकभाई पी. ठक्कर के पक्ष में विवादित भूमि का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित किया गया और 1,15,00,000/- रुपए का संदाय किया गया । तारीख 3 फरवरी, 2018 के विक्रय विलेख के अनुसरण में प्रविष्टि सं. 6452 की गई जिसे धनसुखभाई लम्बानी द्वारा किए गए आक्षेपों को निरस्त करते हुए तारीख 16 मई, 2018 को प्रमाणित किए जाने का आदेश किया गया ।

तारीख 9 अप्रैल, 2018 को मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा एक आवेदन (प्रदर्श-44) फाइल किया गया जिसमे उनके द्वारा फाइल किए गए प्रतिदावे में प्रतिवादी बनने की ईप्सा की गई और वह आवेदन मंजूर किया गया और इस मामले में के याचियों को प्रतिदावे में पक्षकार बना लिया गया । तारीख 10 जुलाई, 2018 को कुनाल रेलॉन द्वारा एक आवेदन (प्रदर्श-68) फाइल किया गया जिसमे उसे वादी सं. 2 के रूप में पक्षकार बनाने और वादपत्र में यह संशोधन करने की ईप्सा की गई कि उसके पक्ष में विक्रय विलेख के निष्पादन के तथ्य को अभिलेख पर प्रस्तुत किया जाए । उसी दिन एक आवेदन (प्रदर्श-70) दीपक ठक्कर द्वारा भी फाइल किया गया जिसमें उसे वादी सं. 3 के रूप में पक्षकार बनाने की ईप्सा की गई और साथ ही उसके पक्ष में वादपत्र में यह संशोधन किए जाने की भी ईप्सा की गई की विक्रय विलेख के निष्पादन का तथ्य अभिलेख पर लाया जाए । तारीख 9 अगस्त, 2019 के एक ही आदेश द्वारा उक्त आवेदन खारिज कर दिया गया, इसलिए यह याचिका फाइल की गई है ।

3. नियम ।

4. याचियों की ओर से विद्वान् अधिवक्ता सुश्री तृषा के. पटेल, प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से विद्वान् अधिवक्ता एस. के. पटेल और प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से विद्वान् अधिवक्ता श्री जेनिल शाह को सुना गया है ।

4.1 याचियों के विद्वान् अधिवक्ता ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि अक्षेपित आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 1, नियम 10 के साथ पठित आदेश 22, नियम 10 के स्पष्ट उपबंधों के प्रतिकूल है । यह दलील दी गई है कि आवेदन (प्रदर्श-44) याचियों को प्रतिदावे में न कि वाद में, प्रतिवादियों के रूप में पक्षकार बनाने का आदेश किया गया, तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय इस तथ्य का मूल्यांकन करने में असफल रहा है और तद्नुसार ऐसा आदेश पारित करके सारभूत रूप से त्रुटि की है । यह दलील दी गई है कि जब वर्तमान याचियों को वादी के रूप में वाद में पक्षकार बनाए जाने के संबंध में मूल वादी ने

कोई आक्षेप नहीं किया है तब विद्वान् विचारण न्यायाधीश को आवेदन खारिज नहीं करने चाहिए थे और इस संबंध में **मुंबई इंटरनेशनल एयरपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **रिजेंसी कन्वेंशन सेंटर एंड होटल्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अवलंब लेकर गलत किया है क्योंकि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उक्त विनिश्चय लागू नहीं होगा ।

4.2 याचियों के विद्वान् अधिवक्ता ने इसके अतिरिक्त यह दलील दी कि विद्वान् न्यायाधीश संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के उपबंधों का मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं, क्योंकि यह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22, नियम 10 के अधीन पक्षकारों के संयोजित होने को विवर्जित नहीं करता हैं । यह भी दलील दी गई है कि इसका अर्थ केवल यह होगा कि यदि पश्चात्वर्ती क्रेता संयोजित नहीं भी होता है, तब भी वह उस डिक्री से बाध्य होगा जो उसके हक-पूर्वाधिकारी के विरुद्ध पारित की जा सकती है । इसके अतिरिक्त, गुजरात में, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 को लागू करने के लिए विचाराधीन वाद रजिस्ट्रीकृत होना चाहिए । तथापि, वर्तमान मामले में अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि विचाराधीन वाद रजिस्ट्रीकृत किया गया था, इसलिए उक्त अधिनियम की धारा 52 वर्तमान मामले में लागू नहीं होगी । यह भी दलील दी गई कि **बीबी जुबैदा खातून** बनाम **नबी हसन साहेब**[2] और **संजय वर्मा** बनाम **माणिक रॉय**[3] वाले मामले में किए गए विनिश्चयों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित अनुपात का विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने उचित तौर पर अनुसरण नहीं किया है, और यह भी दलील दी कि **बीबी जुबैदा खातून** (उपरोक्त) वाले विनिश्चय में कोई भी ऐसी विधि अधिकथित नहीं की गई है जिसमें क्रेता को संयोजित करने की आवश्यकता हो । इसके अतिरिक्त यह दलील दी गई है कि

---

[1] (2010) 7 एस. सी. सी. 417 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3109.

[2] ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 173 = 2003 (ओ)जी.एल.एच.ई.एल.एस.सी. 3681.

[3] ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1332 = 2006 जी.एल.एच.ई.एल.एस.सी. 38393.

अमित कुमार शॉ बनाम **फरीदा खातून**[1] वाले विनिश्चयों में विनिर्दिष्ट रूप से यह पाया गया है कि वाद कालीन अंतरिती मुकदमेबाजी में उस सीमा तक महत्वपूर्ण हित रखता है जिस सीमा तक उसने प्रतिवादी से हित अर्जित किया है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने उक्त विनिश्चय में अधिकथित अनुपात का अनुसरण न करने का कोई भी कारण समनुदेशित नहीं किया है ।

4.3 याचियों के विद्वान् अधिवक्ता ने आगे यह दलील दी है कि विधि के सुस्थापित सिद्धांतों के अनुसार आवेदन में गलत उपबंधों को उल्लिखित करना या सुसंगत उपबंधों को उल्लिखित न करना तत्वहीन है । अपनी दलील के समर्थन में विद्वान् काउंसेल ने **पी. के. पलानीसामी** बनाम **अरुमुगम और एक अन्य**[2], **जे. कुमारदासन नायर और अन्य** बनाम **इरिक सोहन और अन्य**[3] और **टी. नागप्पा** बनाम **वाई. आर. मुरलीधर**[4] वाले मामलों का अवलंब लिया है ।

4.4 जहां तक यह कहने के लिए कि याची वाद में आवश्यक और उचित पक्षकार है, उसने इसके लिए कई विनिश्चयों अर्थात् **भानू कुमार जैन** बनाम **अर्चना कुमार और अन्य**[5], **राजेन्द्रसिंह भरतसिंह सरवैया** बनाम **किरितसिंह बलवंतसिंह जडेजा**[6] और **फतेहसिंहराव प्रतापसिंहराव गायकवाड** बनाम **सावजीभाई हरिभाई पटेल**[7] वाले मामलों का अवलंब लिया है । उन्होंने न्यायालय का ध्यान संहिता के आदेश 8, नियम 6 की ओर दिलाते हुए यह दलील दी है कि पृथक् वाद होने के कारण प्रतिदावे का अस्तित्व भी पृथक् ही होगा ।

4.5 इस प्रकार उपरोक्त दलीलों को देते हुए यह बताया गया है कि

---

[1] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2209.

[2] (2009) 9 एस. सी. सी 173 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5385.

[3] (2009) 12 एस. सी. सी. 175 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 1333.

[4] (2008) 2 जी. एल. एच. 553 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2010.

[5] (2005) 1 एस. सी. सी. 787 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 626.

[6] (2004) 1 जी. एल. आर. 106 = ए. आई. आर. 2004 गुजरात 140.

[7] 1984 जी. एल. एच. 883.

आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाए और इस याचिका को मंजूर किया जाए ।

5. इसके प्रतिकूल, में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने वर्तमान याचिका का दृढ़तापूर्वक विरोध करते हुए और आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हुए दलील दी है कि यह आक्षेपित आदेश सुविचारित आदेश है, जो विधि के सुस्थापित सिद्धांतों से समर्थित है, इसलिए इसमें किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं हैं । यह दलील दी गई है, कि याचियों का आवेदन विशिष्ट उपबंधों अर्थात् सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के साथ पठित धारा 151 के अधीन किया गया था और विचारण न्यायालय ने अपने विवेक का प्रयोग करने के पश्चात् विस्तृत कारणों के साथ उक्त आवेदन खारिज कर दिया । यह दलील दी गई कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन फाइल याचिका में निचले न्यायालय अर्थात् अधिकरण और प्राधिकरण के आदेशों में हस्तक्षेप करने की विशिष्ट गुंजाइश है, न कि मात्र विधि की भूल या सुधार के लिए । उन्होंने यह भी दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने मुख्य रूप से इस आधार पर आवेदन खारिज कर दिया था कि याची को पहले से ही प्रतिवाद में पक्षकार के रूप में अभियोजित कर लिया गया था । यह दलील दी गई है कि इसे अनजाने में वाद के स्थान पर प्रतिवाद के रूप में उल्लिखित किया गया था । तथापि, तथ्य यह है कि याची कार्यवाहियों में प्रतिवादी के रूप में पहले से ही विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष पक्षकार हैं । यह दलील दी गई कि यदि आक्षेपित आदेश को अपास्त कर दिया जाता है, तो इससे प्रत्यर्थियों के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह उत्पन्न होगा । इसके अतिरिक्त विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही अनावश्यक रूप से विलंबित होगी । यह भी दलील दी गई कि याची मूल वादी के नातेदार हैं और इसलिए इस बात की पूर्ण संभावना है कि वे आपस में सांठ-गांठ कर सकते हैं ।

5.1 प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने इसके अतिरिक्त यह दलील दी है कि जब विचारण न्यायालय के समक्ष विनिर्दिष्ट रूप से सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के

अधीन आवेदन किया गया था, तब याचियों को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 10 के अधीन अपने मामले में बहस करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है, विशिष्टतया जब सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 10 के अधीन वर्तमान प्रत्यर्थियों के पास सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 10 के अधीन मामले को पूरा करने का कोई कारण या संभावना नहीं थी, जिसके लिए अब पहली बार इस न्यायालय के समक्ष संयाचना करने की ईप्सा की जा रही है । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने इसके अतिरिक्त यह दलील दी है कि किसी भी उपबंध को गलत रूप से निर्दिष्ट करने पर प्राधिकरण के पास ऐसा आदेश पारित करने की शक्ति और अधिकारिता, जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा **राम सुंदर राम** बनाम **भारत संघ**[1] और **एन. मणि** बनाम **संगीता थियेटर्स और अन्य**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था ।

5.2 प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने इसके अतिरिक्त यह दलील दी कि आक्षेपित आदेश विचारण न्यायालय के विवेकानुसार जिसमें सुस्थापित विधिक स्थिति के अनुसार केवल विचारों को प्रतिस्थापित करने के लिए हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **साधना लोध** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और एक अन्य**[3] में अभिनिर्धारित किया गया है ।

5.3 प्रत्यर्थी सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि सुस्थापित विधिक स्थिति के अनुसार भले ही याचियों को मुख्य वाद में वादी के रूप में जोड़ा गया हो, परंतु उन्हें वादी के स्थान पर रहकर वाद को यूं ही स्वीकार करना होगा और वे वाद में कुछ भी जोड़ नहीं सकते हैं, जैसा कि **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य**[4] वाले मामले में में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था ।

---

[1] (2007) 13 एस. सी. सी. 255 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. सप्ली. 757.

[2] (2004) 12 एस. सी. सी. 278 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2004 एस. सी. 125.

[3] (2003) 3 एस. सी. सी. 524 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1561.

[4] ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389.

5.4 यह भी दलील दी गई कि याचियों ने यह कथन नहीं किया है यदि याचियों को वाद में वादी के रूप में नहीं जोड़ा गया तो इससे उन पर क्या प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा ।

5.5 इस प्रकार, उपरोक्त दलीलों को देते हुए, यह प्रार्थना की जाती है कि वर्तमान याचिका किसी भी गुणता से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य हैं ।

6. प्रत्यर्थी सं. 3 के विद्वान् अधिवक्ता ने याचियों की ओर से दी गई दलीलों को अंगीकृत किया है ।

7. दी गई दलीलों को ध्यान में रखने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 3 ने घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए 2015 का विशेष सिविल वाद सं. 140 फाइल किया था, जिसमें वर्तमान याचियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 1 के अधीन आवेदन (प्रदर्श-68) और आदेश 6, नियम 17 के अधीन एक आवेदन (प्रदर्श-70) उन्हें पूर्वोक्त वाद में वादी के रूप में पक्षकार बनाने और वादपत्र में संशोधन करने के लिए फाइल किए गए थे । उक्त आवेदनों को तारीख 9 अप्रैल, 2018 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जो कि यहां आक्षेपित हैं । जैसा कि अभिलेख से पता चलता है, कि याचिकाकर्ताओं ने तारीख 3 फरवरी, 2018 को विक्रय विलेख के माध्यम से मूल वादी प्रत्यर्थी सं. 3 से इस वाद भूमि को क्रय किया था । उक्त वाद में मूल स्वामी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 2 अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 2 ने प्रतिदावा फाइल किया । इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा फाइल किए गए आवेदन के तहत, वर्तमान याचियों को प्रतिदावे में प्रतिवादी जिसे तारीख 9 अप्रैल, 2018 के एक आदेश द्वारा मंजूर किया गया था और प्रतिदावे में याचियों को प्रतिवादी पक्षकार सं. 2 और 3 के रूप में जोड़ा गया, और इस प्रकार उक्त आदेश के आधार पर याची पहले से ही वाद में पक्षकार हैं । तथापि, जैसा कि पहले ही कहा गया था कि याचियों ने (प्रदर्श-68 और प्रदर्श-70) फाइल किए । उन्हें उक्त वाद में वादी के रूप

में जोड़े जाने के लिए आवेदन जिन्हें तारीख 9 अगस्त, 2019 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, जिसके विरुद्ध वर्तमान याचिका फाइल की गई हैं ।

7.1 पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के उपबंध सुसंगत हैं :–

> "10. **गलत वादी के नाम से वाद** – (1) जहां कोई वाद वादी के रूप में गलत व्यक्ति के नाम से संस्थित किया गया है, या जहां यह संदेहपूर्ण है कि वह सही वादी के नाम में संस्थित किया गया है वहां यदि वाद के किसी भी प्रक्रम में न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि वाद सद्भाविक भूल से संस्थित किया गया है और विवाद में के वास्तविक विषय के अवधारण के लिए ऐसा करना आवश्यक है तो, वह ऐसे निबन्धनों पर, जो वह न्यायसंगत समझे, वाद के किसी भी प्रक्रम में किसी अन्य व्यक्ति को वादी के रूप में प्रतिस्थापित किए जाने या जोड़े जाने का आदेश दे सकेगा ।
>
> (2) **न्यायालय पक्षकारों का नाम काट सकेगा या जोड़ सकेगा** – न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में या तो दोनों पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर या उसके बिना और ऐसे निबन्धनों पर जो न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हो, यह आदेश दे सकेगा कि वादी के रूप में या प्रतिवादी के रूप में अनुचित तौर पर संयोजित किसी भी पक्षकार का नाम काट दिया जाए और किसी व्यक्ति का नाम जिसे वादी या प्रतिवादी के रूप में ऐसे संयोजित किया जाना चाहिए या न्यायालय के सामने जिसकी उपस्थिति वाद में अन्तर्वलित सभी प्रश्नों का प्रभावी तौर पर और पूरी तरह न्यायनिर्णयन और निपटारा करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने की दृष्टि से आवश्यक हो, जोड़ दिया जाए ।
>
> (3) कोई भी व्यक्ति, वाद-मित्र के बिना वाद लाने वाले वादी के रूप में अथवा उस वादी के, जो किसी निर्योग्यता के अधीन है, वाद-मित्र के रूप में उसकी सहमति के बिना जोड़ा जाएगा ।

(4) जहां प्रतिवादी जोड़ा जाए, वहां वादपत्र का संशोधन किया जाना-जहां कोई प्रतिवादी जोड़ा जाता है, वहां जब तक न्यायालय अन्यथा निर्दिष्ट न करें वादपत्र का इस प्रकार संशोधन किया जाएगा, जैसा आवश्यक हो, और समन की वादपत्र की संशोधित प्रतियों की तामील नए प्रतिवादी पर, और यदि न्यायालय ठीक समझे तो मूल प्रतिवादी पर की जाएगी ।

(5) भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1877 (1877 का 15) की धारा 22 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रतिवादी के रूप में जोड़े गए किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही समन की तामील पर ही प्रारंभ की गई समझी जाएगी ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

7.2 इस प्रकार सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10(2) के आधार पर न्यायालय में विवेक निहित है और न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम पर पक्षकारों का नाम काट सकेगा या जोड़ सकेगा, या तो दोनों पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर या उसके बिना और ऐसे निबंधनों पर जो न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत होते हों, यह आदेश दे सकेगा कि वादी के रूप में या प्रतिवादी के रूप में अनुचित तौर पर संयोजित किसी भी पक्षकार का नाम काट दिया जाए और किसी व्यक्ति का नाम जिसे वादी या प्रतिवादी के रूप में ऐसे संयोजित किया जाना चाहिए था या न्यायालय के सामने जिसकी उपस्थिति वाद में अन्तर्वलित सभी प्रश्नों सी/एससीए/15899/2019 निर्णय का प्रभावी तौर पर और पूरी तरह से न्यायनिर्णयन और निपटारा करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने की दृष्टि से आवश्यक हो, जोड़ दिया जाए ।

7.3 इसके अतिरिक्त सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 8, नियम 6क इस उद्देश्य के लिए सुसंगत है और इसलिए यहां इसका उद्धरण किया जा रहा है :–

"**6क प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावा** – (1) वाद में प्रतिवादी नियम 6 के अधीन मुजरा के अभिवचन के अपने अधिकार के अतिरिक्त

वादी के दावे के विरुद्ध प्रतिदावे के रूप में किसी ऐसे अधिकार या दावे को, जो वादी के विरुद्ध प्रतिवादी को, वाद फाइल किए जाने के पूर्व या पश्चात् किंतु प्रतिवादी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने के पूर्व या अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने के लिए परिसीमित समय का अवसान हो जाने के पूर्व, किसी वाद-हेतुक के बारे में प्रोद्भूत हुआ हो, उठा सकेगा चाहे ऐसा प्रतिदावा नुकसानी के दावे के रूप में हो या न हो :

परंतु ऐसा प्रतिदावा न्यायालय की अधिकारिता की धन-संबंधी सीमाओं से अधिक नहीं होगा ।

(2) ऐसे प्रतिदावे का प्रभाव प्रतिवाद के प्रभाव के समान ही होगा जिससे न्यायालय एक ही वाद में मूल दावे और प्रतिदावे दोनों के संबंध में अंतिम निर्णय सुनाने के लिए समर्थ हो जाए ।

(3) वादी को इस बात की स्वतंत्रता होगी की वह प्रतिवादी के प्रतिदावे के उत्तर में लिखित कथन ऐसी अवधि के भीतर जो न्यायालय द्वारा नियत की जाए, फाइल करें ।

(4) प्रतिदावे को वादपत्र के रूप में माना जाएगा और उस पर वही नियम लागू होंगे जो वादपत्रों पर लागू होते हैं ।

7.4 इस प्रकार सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 8 के पूर्वोक्त नियम 6क (2) और (4) के पठन मात्र से यह प्रतीत होता है कि एक प्रतिदावे का प्रभाव प्रतिवाद के समान होगा और इसे वादपत्र के रूप में माना जाएगा, जिससे न्यायालय को मूल दावे और प्रतिदावे दोनों पर एक ही वाद में अंतिम निर्णय सुनाने में समर्थ बनाया जा सके । तद्नुसार प्रतिदावा एक प्रतिवाद के रूप में मान्य होगा और संबंधित न्यायालय दोनों अर्थात् मूल दावे के साथ-साथ प्रतिदावे पर भी निर्णय सुनाएगा ।

7.5 पूर्वोक्त प्रस्तावना में, यदि मामले के तथ्यों का उल्लेख प्रतिदावे के माध्यम से किया जाना है, तो इसमें मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 हैं, ने मूल वादी के विरुद्ध वाद संपत्ति में घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए भी प्रार्थना की

है । दोबारा कहना पड़ रहा है कि याची पहले से ही प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में सम्मिलित हो चुके हैं, जो मूल वाद में फाइल किया गया है, जिसका अर्थ यह है कि वे पहले से ही मुख्य वाद में प्रतिवाद के अभिलेख पर है । इसके अतिरिक्त, याची के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि आक्षेपित आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के साथ पठित आदेश 22, नियम 10 का स्पष्ट रूप से अतिक्रमण करते हुए पारित किया गया था, तथापि, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 10 के पठन मात्र से यह प्रकट होता है कि यह वाद की सुनवाई कर रहे न्यायालय को यह विवेकाधिकार प्रदान करता है कि उस व्यक्ति को जिसमें या जिस पर ऐसा हित निहित है या न्यागत है, उसे अभिलेख पर लाने की इजाजत प्रदान की जाए । विचाराधीन वाद के अंतरिती को अभिलेख पर लाना अधिकार के रूप में नहीं है, बल्कि यह न्यायालय का विवेकाधिकार है । इसके अतिरिक्त, सुस्थापित विधि के अनुसार, यद्यपि अभिलेख पर नहीं लाने पर भी विचाराधीन वाद अंतरिती डिक्री द्वारा बाध्य हैं । तथापि, वर्तमान मामले में, याची, निर्विवाद रूप से विचाराधीन वाद में का अंतरिती है और पहले से ही मुख्य वाद में प्रतिवाद के अभिलेख पर है दोनों की विषयवस्तु समान है अर्थात् वाद संपत्ति जिसके लिए विभिन्न विक्रय विलेखों को निष्पादित और रजिस्ट्रीकृत किया गया है । इसके अतिरिक्त, याची प्रतिदावा आवेदन में प्रतिवादी के रूप में सभी दलीलों को अच्छी तरह से ले सकते हैं ।

7.6 उपरोक्त उल्लिखित उपबंधों अर्थात् सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10, आदेश 8, नियम 6क और आदेश 22, नियम 10 सामर्थ्यकारी उपबंध हैं, जो संबंधित न्यायालय में विवेकाधिकार को निहित करते हैं और सारवान् न्याय करने में सहायक हैं । जैसाकि पहले कहा गया है कि याची पहले से ही वाद में फाइल किए गए प्रतिदावे के अभिलेख पर हैं और इस प्रकार, मामला यह नहीं है कि वे कार्यवाही में कहीं भी पक्षकार नहीं हैं जो लंबित है या कि, उनके सुने जाने के अधिकार को छीना जा रहा है । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने **बीबी जुबैदा खातून** (उपरोक्त) और **संजय वर्मा** (उपरोक्त) वाले मामलों में

माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि उक्त मामलों में अधिकथित सिद्धांतों पर विचार करते हुए, वर्तमान याची अधिकार के रूप में वाद में पक्षकार बनाए जाने के हकदार नहीं है । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय ने वाद में उन्हें वादियों के रूप में जोड़ने के लिए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने का कोई भी कारण नहीं पाया और इसका मात्र कारण यह था कि यह जानते हुए भी कि संपत्ति से संबंधित वाद विचाराधीन है । न्यायालय द्वारा कोई भी अनुज्ञा अभिप्राप्त नहीं की गई थी । इसके अतिरिक्त विचारण न्यायालय ने यह भी देखा है न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने में असफल रहा है कि वर्तमान याचिकाकर्ताओं (प्रस्तावित वादी) को वादी के रूप में नहीं जोड़े जाने पर उन्हें कोई भी नुकसान हुआ है ।

7.7 याचियों के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि यद्यपि **अमित कुमार शॉ** (उपरोक्त) वाले मामले में यह देखा गया है कि वादकालीन अंतरिती इस सीमा तक मुकदमेबाजी में महत्वपूर्ण हित रखते हैं जिस सीमा तक उन्होंने प्रतिवादी से हित अर्जित किया है, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने उक्त विनिश्चय में अधिकथित विनिश्चयाधार का पालन न किए जाने का कोई भी कारण नियत नहीं किया है, तथापि, इस न्यायालय की राय में, जैसाकि केवल उक्त विनिश्चय **अमित कुमार शॉ** (उपरोक्त) में देखा गया है, इस मामले में न्यायालय का जो विवेकाधिकार है, उसका प्रयोग न्यासंगत रूप से किया जाना चाहिए । वर्तमान मामले में, याची पहले से ही वाद के प्रतिदावे में प्रतिवादी के रूप में सम्मिलित हो चुके हैं और जब याचियों का यह मामला नहीं है कि उनके प्रतिरक्षण के अधिकार को किसी भी तरह से कम किया गया है, और जब प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 का यह मामला है कि मूल वादी और याची एक-दूसरे के नातेदार हैं और जिनके मध्य वादकालीन विक्रय संव्यवहार हुआ है, तब इस न्यायालय की सुविचारित राय में, विचारण न्यायाधीश ने ऐसी कोई त्रुटि नहीं की है, जिसके लिए इसमें इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की अपेक्षा की जाए ।

7.8 इसके अतिरिक्त, यदि **साधना लोध** (उपरोक्त) वाले मामले में

माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का परिशीलन करने पर यह पता चलता है कि, 'संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालयों को प्रदत्त पर्यवेक्षी अधिकारिता केवल यह देखने के लिए सीमित है कि क्या एक निचला न्यायालय या अधिकरण ने अपने मापदंडों के भीतर कार्यवाही की है या नहीं और अभिलेख पर छोटी-मोटी त्रुटि या विधि की त्रुटि को ठीक करने के लिए नहीं है । संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षी शक्ति का प्रयोग करने में, उच्च न्यायालय, अपील न्यायालय या अधिकरण के रूप में कार्य नहीं करता है । संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन फाइल की गई याचिका पर उच्च न्यायालय को यह भी अनुज्ञेय नहीं है कि वह उन साक्ष्यों का पुनर्विलोकन या पुन: मूल्यांकन करे, जिस पर निचला न्यायालय या अधिकरण ने तात्पर्यित ओदश पारित किया है या विनिश्चय में विधि की त्रुटियों को ठीक करें । इस प्रकार, संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षी अधिकारिता के अधीन, इस न्यायालय की परिधि सीमित है ।

7.9 इसके अतिरिक्त, **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में किए गए विनिश्चय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने वादकालीन अंतरिती को वाद में प्रतिवादी पक्षकार के रूप में सम्मिलित होने को अनुज्ञात करने के दौरान, उसे ऐसी सभी प्रतिरक्षाएं लेने हेतु अनुज्ञात किया था जो विक्रेता को उपलब्ध हों क्योंकि अपीलार्थी ने वादी के साथ हुए करार के पश्चात् उक्त संपत्ति के क्रय के आधार पर क्रेता से हक, यदि कोई था, व्युत्पन्न किया था । यहां, वर्तमान मामले में भी याची प्रतिदावे में जो केवल मुख्य वाद में है प्रतिवादी पक्षकार हैं और इसलिए मामला यह नहीं है कि वे वाद में पक्षकार नहीं है । इसके अतिरिक्त, जब प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने विनिर्दिष्ट रूप से प्रकथन किया है कि इसे अनजाने में 'वाद' के स्थान पर 'प्रतिवाद' उल्लिखित कर दिया गया था, इसलिए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है ।

7.10 जहां तक याचियों की ओर से विद्वान् अधिवक्ता द्वारा,

उचित उपबंधों का उल्लेख न करने या उपबंधों का गलत निर्वचन करने तथा आवश्यक और समुचित पक्षकारों के न बनाए जाने जैसे बिन्दुओं से संबंधित अवलंब लिए गए विनिश्चयों का संबंध है, यह न्यायालय इस पर चर्चा नहीं करना उचित समझता है, क्योंकि यह आवश्यक नहीं है ।

7.11 अंतिम लेकिन महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि यहां यह उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षी अधिकारिता केवल यह देखने तक सीमित है कि क्या अधीनस्थ न्यायालय या अधिकरण ने अपने मापदंडों के भीतर कार्यवाही की है और अभिलेख पर देखने मात्र से ही पता चलने वाली त्रुटि को ठीक करना नहीं है और विधि की त्रुटि को तो बिल्कुल नहीं और उच्च न्यायालय एक अपील प्राधिकरण के रूप में कार्य नहीं कर सकता है और उसे केवल यह देखना होता है कि एक निचला न्यायालय अपने प्राधिकार की सीमा के भीतर कृत्य कर रहा है या नहीं । **शालिनी श्याम शेट्टी और अन्य** बनाम **राजेंद्र शंकर पाटिल**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की परिधि पर विस्तार से विचार यह अभिनिर्धारित करने और संप्रेषण करने के लिए किया है कि अनुच्छेद 227 का अवलंब उच्च न्यायालय द्वारा स्वप्रेरणा से न्याय के अभिरक्षण के रूप में लिया जा सकता है । इस शक्ति का अनुचित और बार-बार प्रयोग करना हानिकर होगा और इससे न्यायालय की असाधारण शक्ति और सामर्थ्य समाप्त हो सकती है । यह शक्ति विवेकाधीन है और इसका प्रयोग किफ़ायत से किया जाना चाहिए । इसमें की गई सुसंगत मताभिव्यक्ति निम्नानुसार है :–

> "57. अनुच्छेद 226 और 227 सारभूत रूप से भिन्न आधार हैं । जैसा कि ऊपर पाया गया है संविधान से पूर्व भी चार्टरित उच्च न्यायालयों के साथ-साथ प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति भी अपने मूल अधिकारिता के प्रयोग में परमधिकार रिट भी जारी कर सकती है । [उमाजी केशव मेश्राम और अन्य **बनाम** राधिकाबाई और अन्य, ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 1272]"

---

[1] (2010) 8 एस. सी. सी. 329 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6387.

58. तथापि, संविधान के पश्चात् से प्रत्येक उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अधीन रिट जारी करने की शक्ति प्रदान कर दी गई है और ये मूल कार्यवाही हैं । [उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य **बनाम** डा. विनय आनंद महराज, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 946 वाला मामला देखें ।]

59. दूसरी ओर, अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता आरंभिक नहीं है और न ही अपीली है । अनुच्छेद 227 के अधीन अधीक्षण की यह अधिकारिता प्रशासनिक और न्यायिक अधीक्षण दोनों के लिए है । इसलिए अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन प्रदत्त शक्तियां पृथक् और सुभिन्न हैं और विभिन्न क्षेत्रों में प्रवर्तित होती हैं ।

60. इन दो अधिकारिताओं के बीच एक और अंतर यह है कि अनुच्छेद 226 के अधीन, उच्च न्यायालय आमतौर पर एक आदेश या कार्यवाही को बातिल या अभिखंडित करता है किन्तु कार्यवाही को अभिखंडित करने के अतिरिक्त आक्षेपित आदेश को उस आदेश द्वारा जो निचला अधिकरण को देना चाहिए था, प्रतिस्थापित कर सकता है । [**सूर्या देवी राय** (उपरोक्त) वाले मामले का पैरा 25 पृष्ठ 690 और हरि विष्णु कामथ **बनाम** अहमद इसहाक और अन्य ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 233 वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ का विनिश्चय भी देखें ।]

61. अनुच्छेद 226 के अधीन सामान्य रूप से अधिकारिता का प्रयोग वहां किया जाता है जहां एक पक्षकार प्रभावित हो लेकिन अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा शक्ति का प्रयोग स्वप्रेरणा से न्याय के अभिरक्षक के रूप में किया जा सकता है । वास्तव में अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग व्यक्तियों या नागरिकों के पक्ष में उनके मूलभूत अधिकारों या अन्य कानूनी अधिकारों की पुष्टि के लिए किया जाता है । राज्य में सर्वोच्च न्यायिक प्राधिकरण के रूप में अपनी स्थिति की पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 227 के अधीन अधिकारिता का

प्रयोग किया जाता है । कुछ मामलों में जहां मूलभूत अधिकार का अतिलंघन होता है, वहां संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष का दावा न्यायानुसार या अधिकार के रूप में किया जा सकता है । लेकिन ऐसे मामलों में जहां उच्च न्यायालय अनुच्छेद 227 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, वहां ऐसा प्रयोग पूरी तरह से वैवेकिक है और कोई भी व्यक्ति इसके लिए अधिकार के रूप में दावा नहीं कर सकता । अनुच्छेद 226 के अधीन पारित एकल न्यायाधीश के आदेश में, एक लेटर्स पेटेंट अपील या अंत: न्यायालय अपील पोषणीय है । लेकिन अनुच्छेद 227 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से ऐसी कोई अपील पोषणीय नहीं होगी । लगभग सभी उच्च न्यायालयों में अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता के प्रयोग को विनियमित करने के लिए नियम बनाए गए हैं । अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रयोग करने के लिए ऐसे कोई भी नियम विरचित किए गए प्रतीत नहीं होते हैं ताकि संभवत: ऐसी शक्ति के प्रयोग को पूरी तरह से न्यायालय के विवेकाधिकार की सीमा में रखा जा सके ।

62. इस न्यायालय के पूर्वोक्त विनिश्चयों के विश्लेषण पर, संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता के प्रयोग पर निम्नलिखित सिद्धांत विनिर्मित किए जा सकते हैं –

(क) संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन याचिका से भिन्न है । इन दो अनुच्छेदों के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा शक्ति के प्रयोग की रीति भी भिन्न है ।

(ख) किसी भी स्थिति में, अनुच्छेद 227 के अधीन याचिका को रिट याचिका नहीं कहा जा सकता । अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालयों को अधीक्षण की शक्ति प्रदान करने के इतिहास से सारभूत रूप से भिन्न है और इस पर ऊपर चर्चा की गई है ।

(ग) उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन तुरंत अपनी अधीक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुए अधिकरणों या उससे निचला न्यायालयों के आदेशों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता । न ही वह इस शक्ति का प्रयोग करते हुए अपने अधीनस्थ या अधिकरण के आदेशों पर अपील के न्यायालय के रूप में कार्य कर सकता है । ऐसे मामलों में जहां शिकायत की एक अनुकल्पी कानूनी रीति प्रदान की गई हो, वहां उच्च न्यायालय द्वारा इस शक्ति का प्रयोग करना अवरोध के रूप में क्रियाशील होगा ।

(घ) उच्च न्यायालयों द्वारा अधीक्षण की शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप करने के मापदंड़ों को इस न्यायालय द्वारा बार-बार अधिकथित किया गया है । इस संबंध में उच्च न्यायालय को वरयाम सिंह **(उपरोक्त)** वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा अधिकथित सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित होना चाहिए और इन सिद्धांतों का पालन पश्चात्वर्ती संविधान की पीठों द्वारा और इस न्यायालय के विभिन्न विनिश्चयों द्वारा बार-बार किया गया है ।

(ङ) **वरयाम सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले के विनिश्चयाधार अनुसार, जिनका अनुसरण पश्चात्वर्ती मामलों में किया गया है, उच्च न्यायालय अपनी अधीक्षण की अधिकारिता का प्रयोग करके आदेश में हस्तक्षेप कर सकता है ताकि अपने अधीनस्थ अधिकरणों और न्यायालयों को उनके प्राधिकार की सीमा के भीतर रखा जा सके ।'

(च) यह सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे अधिकरणों और न्यायालयों द्वारा विधि का पालन उनकी अधिकारिता, जो उनमें निहित है, के भीतर किया गया है और उन्हें अपनी इस अधिकारिता के प्रयोग से रोका भी नहीं गया है ।

(छ) (ङ) और (च) में बताई गई स्थितियों के अलावा, उच्च न्यायालय अधीक्षण की अपनी शक्ति के प्रयोग में तब

हस्तक्षेप कर सकता है जब उसके अधीनस्थ अभिकरणों और न्यायालयों के आदेशों में प्रत्यक्ष विकृति हो या जहां घोर और प्रकट रूप से अन्याय हुआ हो या नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन किया गया हो ।

(ज) उच्च न्यायालय अधीक्षण की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए मात्र विधि या तथ्य की त्रुटियों को, ठीक करने के लिए हस्तक्षेप नहीं कर सकता है या सिर्फ इसलिए कि अधिकरण या उसके अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा व्यक्त किया गया अन्य मत एक संभावित मत हैं । दूसरे शब्दों में अधिकारिता का प्रयोग बहुत ही किफ़ायत से किया जाना चाहिए ।

(झ) अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधीक्षण की शक्ति को किसी भी कानून द्वारा कम नहीं किया जा सकता । एल चंद्र कुमार **बनाम** भारत संघ और अन्य [(1997) 3 एस. सी. सी. 261] वाले मामले के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा इसे संविधान के आधारभूत स्वरूप का एक हिस्सा घोषित किया गया है और इसलिए इसका सांविधानिक संशोधन द्वारा न्यूनन किया जाना भी बहुत शंकास्पद है ।

(ञ) यह सत्य हो सकता है कि सजातीय उपबंध का कानूनी संशोधन, जैसे कि सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1999 द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 में किए गए संशोधन से अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति की परिधि में कटौती नहीं होती है और न ही की जा सकती है । साथ ही, यह याद रखना चाहिए कि इस प्रकार के कानूनी संशोधन से अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय के अधीक्षण की अधिकारिता का समरूपी विस्तार नहीं होता है ।

(ट) शक्ति विवेकाधीन है और इसका प्रयोग साम्यापूर्ण

सिद्धांत पर किया जाना चाहिए । किसी समुचित मामले में ही शक्ति का प्रयोग स्वप्रेरणा से किया जा सकता है ।

(ठ) अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की व्यापक और अबाध शक्ति का मूल्यांकन करने पर यह पता चलता है कि इस अनुच्छेद का मुख्य उद्देश्य उच्च न्यायालय द्वारा अपने क्षेत्र के भीतर न्याय प्रशासन पर प्रशासनिक और न्यायिक रूप से कड़ा नियंत्रण रखना है ।

(ड) अधीक्षण का उद्देश्य, प्रशासनिक और न्यायिक दोनों की दक्षता को बनाए रखना, न्याय के संपूर्ण तंत्र की कार्य पद्धति को सुचारू और व्यवस्थित रूप से इस प्रकार बनाए रखना है जिससे इसमें किसी भी प्रकार की बदनामी न हो । इस अनुच्छेद के अधीन हस्तक्षेप करने की शक्ति को न्यूनतम रखा जाना चाहिए जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि न्याय किया जा रहा है और उच्च न्यायालय के अधीनस्थ अधिकरणों और न्यायालयों की कार्य पद्धति में लोक विश्वास को बनाए रखने के लिए न्याय प्रणाली शुद्ध और प्रदूषण रहित बनी रहे ।

(ढ) न्यायिक मध्यक्षेप की इस आरक्षित और असाधारण शक्ति का प्रयोग केवल व्यक्तिगत मामलों में अनुतोष प्रदान करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए बल्कि इसे व्यापक लोक हित में न्याय के प्रशासन में लोक विश्वास के संवर्धन के लिए भी निर्दिष्ट किया जाना चाहिए, अत: अनुच्छेद 226 व्यक्तिगत शिकायत के संरक्षण के लिए हैं । इसलिए अनुच्छेद 227 के अधीन शक्ति निरंकुश हो सकती है और इसका प्रयोग ऊपर बताए गए उच्च स्तर के न्यायिक अनुशासन के अधीन किया जाना चाहिए ।

(ण) इस शक्ति का अनुचित और बारंबार प्रयोग किया जाना हानिकर होगा ऐसा करने से न्यायालय की असाधारण शक्ति और सामर्थ्य समाप्त हो सकती है ।

7.12 इसके अतिरिक्त, **औसेफ मथाई और अन्य** बनाम **एम. अब्दुल खादिर**[1] वाले मामले में इसे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया जाता है :–

> "...इस अनुच्छेद के अधीन अधिकारिता के प्रयोग के लिए केवल गलत विनिश्चय तब तक आधार नहीं हो सकता है जब तक कि उस गलत विनिश्चय से कर्तव्य की गंभीर अवहेलना, अधीनस्थ न्यायालयों और अधिकरणों द्वारा शक्ति का खुला दुरुपयोग न किया गया हो तथा जिसके परिणामस्वरूप किसी पक्षकार को इससे कोई 'गंभीर अन्याय' कारित न हुआ हो ।"

8. पूर्वोक्त चर्चा और विचारों से यह याचिका असफल होती है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है । नियम को उन्मोचित किया जाता है तथा खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है ।

8.1 तथापि, यह स्पष्ट किया जाना है कि याचियों को ऐसी सभी प्रतिरक्षाओं को लेने के लिए अनुज्ञात किया जाता है, जिनमें प्रतिवाद में लिखित कथन भी सम्मिलित है, जो उन्हें याचियों से व्युत्पन्न हक, यदि कोई है, के रूप में उपलब्ध हुआ है, और वह वाद के लंबित रहने के दौरान वादांतर्गत संपत्ति को क्रय करने के तत्पश्चात् प्राप्त हुआ है ।

अपील खारिज की गई ।

अम./अस.

---

[1] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 110 = एम.ए.एन.यू./एस.सी. 0718/2001.

मोहम्मद अमीन बट

बनाम

जम्मू-कश्मीर स्कूल शिक्षा बोर्ड और अन्य

(2019 की सिविल रिट याचिका सं. 3628)

तारीख 31 दिसंबर, 2020

न्यायमूर्ति संजीव कुमार

जम्मू-कश्मीर राज्य शिक्षा बोर्ड अधिनियम, 1975 (1975 का 28) – धारा 13 [सपठित जम्मू-कश्मीर राज्य शिक्षा बोर्ड विनियम, 1992 का विनियम-17] – जन्मतिथि में सुधार – आवेदन की परिसीमा – परिसीमा अवधि के बीत जाने पर याची द्वारा जन्मतिथि में सुधार हेतु आवेदन किया जाना – शिक्षा बोर्ड द्वारा आवेदन का विलंबित पाकर ख़ारिज किया जाना – याची के पक्ष में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र वर्ष 1980 में जारी किया गया था और जन्मतिथि में संशोधन की मांग का आवेदन वर्ष 2009 में अर्थात् 29 वर्ष बाद किया गया जोकि युक्तियुक्त प्रतीत होता है, अतः संशोधन की मांग करने वाले आवेदन को खारिज करने सम्बन्धी शिक्षा बोर्ड के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

इस मामले में याची द्वारा इस याचिका में की गई संक्षिप्त शिकायत यह है कि विद्यालय के अभिलेखों में उसकी वास्तविक जन्मतिथि 28 मार्च, 1963 थी लेकिन प्रत्यर्थी-1 जम्मू-कश्मीर स्कूल शिक्षा परिषद् द्वारा जारी लिपिकीय त्रुटि के कारण अर्हता प्रमाणपत्र में 5 अप्रैल, 1961 लिख दी गई है । उसका दावा है कि उसने अपनी जन्मतिथि 5 अप्रैल, 1961 को सुधार कर 28 मार्च, 1963 करने के लिए वर्ष 2009 में एक औपचारिक आवेदन किया था और 29 सितंबर, 2009 को हुई बैठक में प्रत्यर्थियों द्वारा गठित सुधार समिति ने उसके मामले पर विचार किया और इस आधार पर उसके मामले को खारिज

कर दिया कि विद्यालय और परिषद् के अभिलेखों के बीच कोई अंतर नहीं था । यह याची को परिषद् के सहायक सचिव द्वारा सं. एफ 1415 (सुधार-प्रमाणपत्र-1) ख/2009 मद सं. 15/IV तारीख 25 अक्तूबर, 2009 के माध्यम से संसूचित कर दिया गया था । यह दावा किया जाता है कि वर्ष 2009 में उसका मामला खारिज किए जाने के तत्पश्चात् उसे जानकारी मिली कि परिषद् द्वारा उसके मामले को खारिज करते समय जो आधार लिया गया था वह तथ्यात्मक रूप से गलत और अभिलेखों के प्रतिकूल था । याची का यह दावा है कि उसने एक बार पुन: प्रत्यर्थियों को सुधार करने का प्रस्ताव दिया किंतु विहित फार्म भर कर पुन: आवेदन करने के लिए कहा गया था । तद्नुसार याची ने 28 अगस्त, 2015 को विहित फार्म पर नया आवेदन प्रस्तुत किया । जब याची का आवेदन विचाराधीन था तभी याची को सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत फाइल किए गए एक आवेदन के उत्तर में परिषद् से एक जानकारी प्राप्त हुई जो याची के अभिकथन को सिद्ध करती है कि विद्यालय के प्राधिकारियों द्वारा परिषद् को अग्रेषित उसकी अभिलिखित जन्मतिथि 28 मार्च, 1963 है । ऐसा प्रतीत होता है कि परिषद् के प्राधिकारियों की ओर से उसके मामले पर विचार करने में निष्क्रियता से व्यथित होकर याची ने मूल रिट याचिका सं. 356/2016 फाइल की । न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को औपचारिक नोटिस जारी किए बिना रिट याचिका का निपटारा अपने तारीख 15 मार्च, 2016 के आदेश द्वारा प्रारंभ में ही कर दिया था । प्रत्यर्थी परिषद् को यह निर्देश दिया गया था कि वह विद्यालय के अभिलेखों में अभिलिखित स्थिति को ध्यान में रखते हुए परिषद् द्वारा जारी जन्मतिथि प्रमाणपत्र में त्रुटि की परिशुद्धि के लिए याची के दावे पर विचार करें । इसके लिए परिषद् के प्राधिकारियों को आवश्यक कार्य करने के लिए चार सप्ताह का समय दिया गया था । इसके अनुपालन में बोर्ड ने याची के मामले पर नए सिरे से विचार किया और इस याचिका में आक्षेपित संसूचना सं. एफ-1915 (सीसी-सुधार-प्रमाणपत्र-03एमसी) बी/16 तारीख 6 मई, 2016 के माध्यम से एक बार फिर याची के मामले को इस आधार पर खारिज कर दिया कि जन्मतिथि के संशोधन को नियंत्रित करने वाले नियमों और

विनियमों के अंतर्गत यह नहीं आता है । प्रत्यर्थी की इस संसूचना को याची द्वारा इस याचिका में प्रश्नगत किया गया है । याची ने बोर्ड के प्राधिकारियों को परमादेश रिट जारी करके उसकी जन्मतिथि को 5 अप्रैल, 1961 से सुधार कर 28 मार्च, 1963 करने की मांग की है और यह कि उसके बाद उसे नया जन्म प्रमाणपत्र को जारी किया जाए । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस प्रकार देखा जाए तो यह संदेह से परे है कि विनियम सं. 17 के अनुसार जन्मतिथि में सुधार के लिए आवेदन माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र के जारी होने की तिथि से एक वर्ष के भीतर किया जाना आवश्यक है और वर्ष 2009 में जारी अधिसूचना के अनुसार, वास्तविक और असाधारण प्रकृति के मामलों में एक वर्ष के परे किन्तु तीन वर्ष के भीतर इसे ग्रहण किया जा सकता है लेकिन किसी भी परिस्थिति में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र के जारी होने की तारीख से तीन वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता । वर्तमान मामले में याची के पक्ष में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र निश्चित रूप से वर्ष 1980 में जारी किया गया था और याची द्वारा वर्ष 2009 में अर्थात् 29 वर्ष बाद जन्मतिथि में सुधार की मांग के लिए पहला आवेदन फाइल किया गया । दावा चाहे वह कितना भी वास्तविक क्यों न हों, बहुत देर से किया गया था और बोर्ड ने इसको ग्रहण करने से इनकार किया है । याची को 1980 में ही अपनी जन्मतिथि में गलती, यदि कोई थी, के संबंध में जानकारी हो गई थी और इसलिए, बोर्ड के प्राधिकारियों के समक्ष इस संबंध में आवेदन प्रस्तुत करने के लिए 29 वर्षों तक प्रतीक्षा करने का कोई कारण या अवसर नहीं था । (पैरा 9)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2020] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 949 : **मुख्य कार्यकारी अधिकारी** बनाम **एशियाटिक इस्पात उद्योग लिमिटेड** ; 13, 16

[2019] मूल रिट याचिका सं. 150/2019 :
फुरकान इशरतदार बनाम **केन्द्रीय माध्यमिक विद्यालय शिक्षा बोर्ड और एक अन्य** ; 13, 15

[2014] (2014) 12 एस. सी. सी. 570 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 1975 :
भारत कुकिंग कोल लिमिटेड बनाम **छोटा बिरसा उरनाव** ; 13

[2014] 2014 (1) जे. के. जे. 431 (एच. सी.) :
लतीफ अहमद और अन्य बनाम **राज्य और अन्य** ; 13, 15

[2011] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 3418 :
मध्यप्रदेश राज्य और अन्य बनाम **प्रेमलाल श्रीवास** ; 13, 17

[2011] (2011) 2 जे. के. जे. (एच. सी.) 809 (एच. सी.) :
एस. मोहन सिंह सेठी बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य विद्यालय शिक्षा बोर्ड और अन्य** ; 13, 17

[2003] [2003] सप्ली. 6 एस. सी. आर. 1273 :
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड असम बनाम **मोहम्मद शरीफुज जमां और अन्य** ; 10

[1994] (1994) सप्ली. 1 एस. सी. सी. 155 = ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 2647 :
सचिव और आयुक्त, गृह विभाग बनाम **आर. किरुबाकरन** ; 14

[1993] ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 2667 :
मुख्य कार्यकारी अधिकारी बनाम **एशियाटिक इस्पात उद्योग लिमिटेड** ।

सिविल रिट अधिकारिता : 2019 की सिविल रिट याचिका सं. 3628.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री एम. अशरफ वानी

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एम. आई. दार

आदेश

याची द्वारा इस याचिका में की गई संक्षिप्त शिकायत यह है कि विद्यालय के अभिलेखों में उसकी वास्तविक जन्मतिथि 28 मार्च, 1963 थी लेकिन प्रत्यर्थी-1 जम्मू-कश्मीर स्कूल शिक्षा परिषद् द्वारा जारी लिपिकीय त्रुटि के कारण अर्हता प्रमाणपत्र में 5 अप्रैल, 1961 लिख दी गई है । उसका दावा है कि उसने अपनी जन्मतिथि 5 अप्रैल, 1961 को सुधार कर 28 मार्च, 1963 करने के लिए वर्ष 2009 में एक औपचारिक आवेदन किया था और 29 सितंबर, 2009 को हुई बैठक में प्रत्यर्थियों द्वारा गठित सुधार समिति ने उसके मामले पर विचार किया और इस आधार पर उसके मामले को खारिज कर दिया कि विद्यालय और परिषद् के अभिलेखों के बीच कोई अंतर नहीं था । यह याची को परिषद् के सहायक सचिव द्वारा सं. एफ 1415 (सुधार-प्रमाणपत्र-1) ख/2009 मद सं. 15/IV तारीख 25 अक्तूबर, 2009 के माध्यम से संसूचित कर दिया गया था ।

2. यह दावा किया जाता है कि वर्ष 2009 में उसका मामला खारिज किए जाने के तत्पश्चात् उसे जानकारी मिली कि परिषद् द्वारा उसके मामले को खारिज करते समय जो आधार लिया गया था वह तथ्यात्मक रूप से गलत और अभिलेखों के प्रतिकूल था । याची का यह दावा है कि उसने एक बार पुन: प्रत्यर्थियों को सुधार करने का प्रस्ताव दिया किंतु विहित फार्म भर कर पुन: आवेदन करने के लिए कहा गया था । तद्नुसार याची ने 28 अगस्त, 2015 को विहित फार्म पर नया आवेदन प्रस्तुत किया । जब याची का आवेदन विचाराधीन था तभी याची को सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत फाइल किए गए एक आवेदन के उत्तर में परिषद् से एक जानकारी प्राप्त हुई जो याची के अभिकथन को सिद्ध करती है कि विद्यालय के प्राधिकारियों द्वारा परिषद् को अग्रेषित उसकी अभिलिखित जन्मतिथि 28 मार्च, 1963 है ।

3. ऐसा प्रतीत होता है कि परिषद् के प्राधिकारियों की ओर से उसके मामले पर विचार करने में निष्क्रियता से व्यथित होकर याची ने मूल रिट याचिका सं. 356/2016 फाइल की । न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को औपचारिक नोटिस जारी किए बिना रिट याचिका का निपटारा अपने तारीख 15 मार्च, 2016 के आदेश द्वारा प्रारंभ में ही कर दिया था । प्रत्यर्थी परिषद् को यह निर्देश दिया गया था कि वह विद्यालय के अभिलेखों में अभिलिखित स्थिति को ध्यान में रखते हुए परिषद् द्वारा जारी जन्मतिथि प्रमाणपत्र में त्रुटि की परिशुद्धि के लिए याची के दावे पर विचार करें । इसके लिए परिषद् के प्राधिकारियों को आवश्यक कार्य करने के लिए चार सप्ताह का समय दिया गया था । इसके अनुपालन में बोर्ड ने याची के मामले पर नए सिरे से विचार किया और इस याचिका में आक्षेपित संसूचना सं. एफ-1915 (सीसी- सुधार-प्रमाणपत्र-03एमसी) बी/16 तारीख 6 मई, 2016 के माध्यम से एक बार फिर याची के मामले को इस आधार पर खारिज कर दिया कि जन्मतिथि के संशोधन को नियंत्रित करने वाले नियमों और विनियमों के अंतर्गत यह नहीं आता है । प्रत्यर्थी की इस संसूचना को याची द्वारा इस याचिका में प्रश्नगत किया गया है । याची ने बोर्ड के प्राधिकारियों को परमादेश रिट जारी करके उसकी जन्मतिथि को 5 अप्रैल, 1961 से सुधार कर 28 मार्च, 1963 करने की मांग की है और यह कि उसके बाद उसे नया जन्म प्रमाणपत्र को जारी किया जाए ।

4. प्रत्यर्थियों का प्रतिनिधित्व कर रहे श्री एम. आई. दार ने जम्मू-कश्मीर स्कूल बोर्ड विनियम 1992 (विनियमों) सं. 17 का दृहणतापूर्वक अवलंब लेते हुए याचिका का विरोध किया । प्रत्यर्थियों के काउंसेल ने यह दलील दी कि याची द्वारा अपनी जन्मतिथि में सुधार करने के लिए किया गया दावा जिसे 1980 में बोर्ड के अभिलेखों में दर्ज किया गया था वह अत्यधिक विलंबित और परिसीमा से वर्जित है, इसलिए वह विनियमों के अंतर्गत नहीं आता है ।

5. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और अभिलेखों पर विश्वास करने पर पहले विनियमों के विनियम सं. 17 को उद्धृत करना

आवश्यक है जिसके अधीन जन्मतिथि के सुधार के लिए विस्तृत प्रक्रिया निर्धारित की गई है :–

"17(i) आम तौर से बोर्ड के अभिलेखों में किसी भी परीक्षा के लिए बोर्ड में पंजीकृत किसी भी अभ्यर्थी की जन्मतिथि में कोई भी सुधार नहीं किया जाएगा परंतु यदि जन्मतिथि में सुधार के लिए आवेदन आवश्यक शुल्क के साथ किया जाता है तो उक्त उद्देश्य के लिए नामित बोर्ड या समिति द्वारा आवेदन पर विचार किया जा सकता है –

(क) जहां यह दावा किया जाता है कि आवेदक की आयु के उस मान्यता प्राप्त विद्यालय के दाखिला रजिस्टर से अनुलिपि करने में असलियत में लिपकीय गलती हुई है, जिसके माध्यम से वह बोर्ड की माध्यमिक विद्यालय परीक्षा में अपने दाखिले के लिए आवेदन पत्र द्वारा उक्त परीक्षा में बैठा था/बैठी थी ।

(ख) जहां एक अभ्यर्थी द्वारा यह दावा किया जाता है कि उसकी जन्मतिथि, जो अभ्यर्थी को भेजने वाले माध्यमिक विद्यालय परीक्षा के लिए संस्थान के अभिलेख में अभिलिखित है, सही नहीं है और अभ्यर्थी की शुद्ध प्रविष्टि, जैसाकि उसके द्वारा दावा किया गया है, को परीक्षा प्रवेश पत्र में अंकित की जाने की अनुमति प्रदान की जाए जिसे बोर्ड तक भेजा जाना है । इस प्रयोजनार्थ अभ्यर्थी जिस प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय के विभाग में पढ़ रहा है उसके अभिलेखों की परीक्षा की जाएगी तथा यदि अभ्यर्थी द्वारा किया गया दावा सही पाया जाता है तो जन्मतिथि के संशोधन से संबंधित मामले को अध्यक्ष के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा जिसके साथ मिडिल विभाग या मिडिल प्राथमिक विद्यालय के संस्थान के प्रमुख द्वारा इस आशय का एक शपथपत्र फाइल किया जाएगा कि जन्मतिथि जिसकी प्रविष्टि मिडिल विभाग या मिडिल प्राथमिक विद्यालय द्वारा जारी विद्यालय

को छोड़ने या उन्मोचन प्रमाणपत्र में की गई है, वह विद्यालय में प्रवेश और निकासी रजिस्टर में मौजूद प्रविष्टि की सही प्रति नहीं है जिसमें जन्मतिथि (यहां सही प्रविष्टि का उल्लेख करें) को उचित रूप से अभिलिखित किया गया है और उन्मोचन या विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र में जन्मतिथि की प्रविष्टि अनजाने में की गई थी न कि जानबूझकर । तथापि, ऐसे मामले जो समय-वर्जित हैं अध्यक्ष की अनुमति के बिना खोला नहीं जाएंगे और अध्यक्ष का इस बात से संतुष्ट होना आवश्यक है कि अभ्यर्थी अपने नियंत्रण से परे कारणों से समय से आवेदन नहीं कर सका था ।

(ग) यह कि आवेदन, विद्यालय से या निजी आवेदक के मामले में बोर्ड के कार्यालय से माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र जारी होने की तारीख से एक वर्ष के भीतर विहित शुल्क, जो प्रतिदेय नहीं होगा, के साथ फार्म भर कर आवेदन को किया जाता है ।

(घ) यह कि जब संबंधित आवेदन प्रधानाध्यापक/प्रधानाध्यापिका/प्रधानाचार्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तो वह आवेदन के समर्थन में सुसंगत रजिस्टर प्रस्तुत करने के साथ आवेदक का बयान प्रमाणित करने वाले अपने स्वयं के शपथपत्र को भी प्रस्तुत करेगा ।

(ii) यदि आवेदक के समर्थन में भेजे गए साक्ष्यों का परीक्षण करने पर अध्यक्ष के समाधानप्रद रूप से यह सिद्ध किया जाता है कि जन्मतिथि में गलती लिपिकीय/अनुलिपि/टंकण त्रुटि के कारण हुई है तो वह अपने विवेकानुसार बोर्ड के अभिलेखों में आवेदक की जन्मतिथि में आवश्यक सुधार किए जाने को प्राधिकृत कर सकता है ।

(iii) जो छात्र जन्मतिथि की प्रथम प्रविष्टि का अभिलेख प्रस्तुत नहीं कर सकते हैं उन छात्रों द्वारा जन्मतिथि में सुधार के लिए किए गए सभी आवेदनों पर बोर्ड

या उसके द्वारा नियुक्त समिति उनके गुणागुण के आधार पर विचार करेगा/करेगी ।

स्पष्टीकरण – निम्नलिखित को लिपिकीय, अनुलिपीय और टंकण त्रुटि माना जाए –

(i) कोई गलती जो विद्यालय के अभिलेख में अभ्यर्थी के विवरण की अनुलिपि प्राथमिक से मध्य विभाग या मध्य से उच्च विभाग या संबंधित विद्यालय से बोर्ड में करते समय हुई है ।

(ii) किसी नाम की वर्तनी में कोई गलती जो अभिलेख को देखने से ही स्पष्ट है ।

(iii) कोई गलती जो संस्था से प्राप्त रजिस्ट्रीकृत विवरणियों से बोर्ड के अभिलेख में अनुलिपि करने के कारण हुई है ।"

6. विनियम संख्या 17 के संपूर्ण परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामान्यत: किसी भी परीक्षा के लिए बोर्ड में रजिस्ट्रीकृत किसी भी अभ्यर्थी की जन्मतिथि में कोई भी संशोधन बोर्ड के अभिलेखों में करने की अनुमति नहीं है । यद्दपि यह एक अपवाद के अध्यधीन ऐसा किया जा सकता है जब जन्मतिथि में सुधार के लिए आवश्यक शुल्क के साथ आवेदन किया जाता है जिसमें अन्य बातों के साथ यह दावा किया जाता है कि आवेदक की आयु को उस मान्यता प्राप्त विद्यालय के दाखिला रजिस्टर से अनुलिपि करने में वास्तव में लिपिकीय गलती हुई है जिसके माध्यम से वह बोर्ड की माध्यमिक विद्यालय परीक्षा में अपने दाखिले के लिए आवेदन पत्र द्वारा उक्त परीक्षा में बैठा था/थी । ऐसी स्थिति में बोर्ड द्वारा गठित एक समिति आवेदन पर विचार कर सकती है यदि वह आवेदन माध्यमिक विद्यालय परीक्षा का प्रमाणपत्र जारी होने के एक वर्ष के भीतर किया जाता है ।

7. यह सच है कि बोर्ड के अध्यक्ष को विलंब के लिए माफ करने का अधिकार है यदि वह इस बात से संतुष्ट है कि अभ्यर्थी अपने

नियंत्रण से परे कारणों की वजह से समय पर आवेदन नहीं कर सका था । अध्यक्ष में निहित इस विवेक को विनियमित करने की दृष्टि से बोर्ड ने अधिसूचना सं. एफ (एकेडमी-सी) करेक्शन/बी तारीख 16 फरवरी, 2009 को जारी किया और यह उपबंधित किया गया कि वास्तविक और असाधारण प्रकृति के मामलों में उपाधि-पत्र/अर्हता प्रमाणपत्र के जारी होने की तिथि से एक वर्ष के परे तीन वर्ष की परिसीमा अवधि के भीतर नियमों के अधीन आवश्यक सुधार के लिए किए गए आवेदन को ग्रहण किया जा सकता है । पूर्वोक्त अधिसूचना में इस पर भी बल दिया गया कि तीन वर्षों के बाद प्रस्तुत और प्राप्त किया गया कोई भी आवेदन किसी भी परिस्थिति में ग्रहण नहीं किया जाएगा और न ही उस पर कोई विचार किया जाएगा ।

8. यहां यह टिप्पण करना आवश्यक है कि याची द्वारा इस याचिका में न तो विनियम सं. 17 और न ही पूर्वोक्त अधिसूचना को आक्षेप किया गया है । इस पर भी विचार करना महत्वपूर्ण है कि विनियम सं. 17 में स्पष्टीकरण के माध्यम लिपिकीय, अनुलिपीय और टंकण गलती को परिभाषित किया गया है । स्पष्टीकरण का खंड (iii) यहां सुसंगत है और उसे यहां पुन: प्रस्तुत किया जाता है :–

> (iii) कोई गलती जो संस्था से प्राप्त रजिस्ट्रीकृत विवरणियों से ब्यौरे अनुलिपि करने के कारण बोर्ड के अभिलेख में हुई है ।

9. इस प्रकार देखा जाए तो यह संदेह से परे है कि विनियम सं. 17 के अनुसार जन्मतिथि में सुधार के लिए आवेदन माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र के जारी होने की तिथि से एक वर्ष के भीतर किया जाना आवश्यक है और वर्ष 2009 में जारी अधिसूचना के अनुसार, वास्तविक और असाधारण प्रकृति के मामलों में एक वर्ष के परे किन्तु तीन वर्ष के भीतर इसे ग्रहण किया जा सकता है लेकिन किसी भी परिस्थिति में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र के जारी होने की तारीख से तीन वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता । वर्तमान मामले में याची के पक्ष में माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र निश्चित रूप से वर्ष 1980 में जारी किया

गया था और याची द्वारा वर्ष 2009 में अर्थात 29 वर्ष बाद जन्मतिथि में सुधार की मांग के लिए पहला आवेदन फाइल किया गया । दावा चाहे वह कितना भी वास्तविक क्यों न हों, बहुत देर से किया गया था और बोर्ड ने इसको ग्रहण करने से इनकार किया है । याची को 1980 में ही अपनी जन्मतिथि में गलती, यदि कोई थी, के संबंध में जानकारी हो गई थी और इसलिए, बोर्ड के प्राधिकारियों के समक्ष इस संबंध में आवेदन प्रस्तुत करने के लिए 29 वर्षों तक प्रतीक्षा करने का कोई कारण या अवसर नहीं था ।

10. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **माध्यमिक शिक्षा बोर्ड असम** बनाम **मोहम्मद शरीफुज जमां और अन्य**[1] वाले मामले में एक समान तथ्य पर कार्यवाही के दौरान और माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, असम के विनियम सं. 8 का निर्देश देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "विलंब विवेक को विफल कर देता है और परिसीमा की हानि उपचार को नष्ट कर देती है । ऐसा विलंब अत्यधिक समय तक प्रतीक्षा करने की कोटि में आता है जिसके परिणामस्वरूप साम्या के सिद्धांतों पर वैवेकिक शक्ति का लाभ नहीं दिया जा सकता । परिसीमा की हानि के परिणामस्वरूप उपचार से वंचित होना केवल साम्या पर ही नहीं अपितु सार्वजनिक निति और उपयोगिता पर आधारित एक सिद्धांत है । समय की एक सीमा होनी चाहिए जिसके द्वारा मानवीय मामलों का निपटारा हो जाए और अनिश्चितता समाप्त हो जाए । विनियम सं. 8 आवेदक को अधिकार प्रदत्त करता है और गलत गणना या लिपिकीय गलती के आधार पर जन्मतिथि में सुधार करने के लिए बोर्ड को दायित्व के साथ एक शक्ति प्रदान करता है । विद्यालय के निरीक्षक के माध्यम से आवेदन पर कार्यवाही करने के लिए एक उचित प्रक्रिया निर्धारित की गई है जिसके अंतर्गत वह निरीक्षक विद्यालय के अभिलेख का सत्यापन करेगा और बोर्ड को रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा ताकि विनियम-8 के अधीन अनुज्ञेय दावों से भिन्न दावों को विचार में लाने से अपवर्जित किया जा सके ।

---

[1] [2003] सप्ली. 6 एस. सी. आर. 1273.

सुधार के लिए आदेश पारित करने की शक्ति उच्च अधिकारी, जैसेकि बोर्ड के सचिव, में निहित है । यद्यपि अन्य सभी पूर्व दस्तावेजों के सभी पहलुओं के सही होने के बावजूद प्रमाणपत्र को लिखते समय हुई अशुद्धि को प्रमाणपत्र जारी होने के तीन वर्षों के भीतर ठीक किया जा सकता है । विनियम द्वारा प्रदान की गई तीन वर्षों की अवधि बहुत ही युक्तियुक्त अवधि है । प्रमाणपत्र जारी होने की तारीख पर संबंधित छात्र को प्रमाणपत्र में की गई प्रविष्टियों के बारे में जानकारी हो जाती है । सभी को अपनी आयु और जन्मतिथि याद होती है । यदि एक बार छात्र के हाथ में प्रमाणपत्र रख दिया जाता है तो उसे कुछ समय में ही यह पता चल जाता है कि प्रमाणपत्र में उल्लिखित उसकी जन्मतिथि सही नहीं है । प्रमाणपत्र के आधार पर आवेदक संभवतः किसी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश या नौकरी या वृत्ति के लिए ईप्सा कर सकता है जहां उसे अपनी आयु और जन्मतिथि का उल्लेख करना पड़ता । यहां तक की यदि वह प्रमाणपत्र जारी होने की तिथि पर भी गलती पकड़ने में विफल रहता है तब भी उसे शीघ्र ही इस गलती के बारे में जानकारी हो जाएगी । इस प्रकार तीन वर्षों की अवधि, जैसाकि विनियम-3 द्वारा निर्धारित की गई है, पूर्णतया उचित है । यह वाद फाइल करने के लिए परिसीमा अवधि निर्धारित करने जैसा कुछ भी नहीं है । तीन वर्ष के लिए दिया गया निर्देशन इसलिए अधिकथित किया गया है ताकि बोर्ड सुधार करने की शक्ति का अवलंब इस अवधि के पहले-पहले ले ले जिसके बाद इसका अवलंब नहीं लिया जा सकता । यदि विलंबित आवेदन प्राप्त करने की अनुमति दी जाती है, तो इससे एक नई समस्या उत्पन्न हो सकती है । ऐसा हो सकता है कि गलती सुधारने सम्बन्धी अभिलेख उपलब्ध न हो और साक्ष्य भी नष्ट हो गया हो । इस तरह के बनावटी साक्ष्य यहां तक कि सुविधाजनक साक्ष्य को भी अस्तित्व में लाया जा सकता है जिनकी जांच करना भी कठिन होगा । तीन वर्ष की अवधि विहित किए जाने से ऐसी सभी परिस्थितियों का समाधान हो जाता है । यह उपबंध न तो अवैध है और न ही अधिनियम की धारा 24 की परिधि के बाहर है और इसे मनमाना या अनुचित भी नहीं कहा जा सकता है । तीन वर्ष की अवधि के

भीतर सुधार की मांग करने वाले आवेदक अपने आप में एक वर्ग हैं और इस प्रकार के निर्धारण के उद्देश्य की प्राप्ति के साथ इस उपबंध का उचित अंतर्संबंध है । संविधान के अनुच्छेद 19 के आधार पर इसमें कोई दोष नहीं है ।

11. माननीय उच्चतम न्यायालय का पूर्वोक्त निर्णय सभी चार मामलों पर लागू होता है और इसलिए विद्वान् काउंसेल द्वारा उठाए गए मुद्दे पर विचार करने के लिए निश्चित करता है ।

12. मुझे विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए समान तथ्यों के सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित किए गए पूर्वोक्त निर्णयों पर सर सरसरी तौर पर विचार करने से ही यह पता चलता है कि इन निर्णयों को निर्दिष्ट करने का कोई औचित्य नहीं है ।

13. याची के विद्वान् काउंसेल श्री एम. अशरफ वानी ने निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया है :–

(1) **भारत कुकिंग कोल लिमिटेड** बनाम **छोटा बिरसा उरनाव**[1]

(2) **लतीफ अहमद और अन्य** बनाम **राज्य और अन्य**[2]

(3) **फुरकान इशरतदार** बनाम **केन्द्रीय माध्यमिक विद्यालय शिक्षा बोर्ड और एक अन्य**[3]

(4) **मुख्य कार्यकारी अधिकारी** बनाम **एशियाटिक इस्पात उद्योग लिमिटेड**[4]

प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री एम. आई. दार ने निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया –

(1) **एस. मोहन सिंह सेठी** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य/विद्यालय शिक्षा बोर्ड और अन्य**[5]

---

[1] (2014) 12 एस. सी. सी. 570 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 1975.

[2] (2014) 1 जे. के. जे. 431 (एच. सी.).

[3] मूल रिट याचिका सं. 150/2019.

[4] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 949.

[5] (2011) 2 जे. के. जे एच. सी. 809.

(2) **मध्यप्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **प्रेमलाल श्रीवास**[1]

14. **भारत कुकिंग कोल लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय वास्तव में **सचिव और आयुक्त, गृह विभाग** बनाम **आर किरुबाकरन**[2] वाले मामले में निर्धारित कानूनी प्रतिपादना पर आधारित हैं जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब तक सामग्री के आधार पर प्रत्यर्थी द्वारा एक स्पष्ट निश्चायक प्रकृति का मामला नहीं बनाया जाता है तब तक न्यायालय या ट्रायब्युनल को सामग्री के आधार पर ऐसा निदेश नहीं देना चाहिए जो इस प्रकार के दावों को केवल युक्तिसंगत बनाते हैं । यह भी उपबंध किया गया है कि इस प्रकार का निदेश जारी करने से पहले न्यायालय या ट्रायब्युनल का पूर्ण रूप से यह समाधान होना चाहिए कि संबंधित व्यक्ति के साथ वास्तव में अन्याय हुआ है और जन्मतिथि में सुधार के लिए उसके द्वारा किया गया दावा विहित प्रक्रिया के अनुसार और नियम या आदेश में उल्लिखित नियत समय के भीतर किया गया है । यदि कोई ऐसा नियम या आदेश विरचित नहीं किया गया है कि किस अवधि के भीतर इस प्रकार के आवेदन को फाइल करना चाहिए तब ऐसी अवधि के भीतर आवेदन फाइल किया जाना चाहिए जिसे युक्तियुक्त अभिनिर्धारित किया जा सके ।

15. **लतीफ अहमद और फरकान इशरतदार** (उपरोक्त) वाले मामले में जो विवाद्यक सीधे इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया वह जाति/उपनाम के सुधार के संबंध में था न कि जन्मतिथि के सुधार के संबंध में था । पूर्वोक्त दोनों निर्णय अपने विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में पारित किए गए हैं और इसलिए यह याची द्वारा दिए गए तथ्यों और मामलों की परिस्थितियों में इसका लाभ नहीं लिया जा सकता ।

16. **मुख्य कार्यकारी अधिकारी** बनाम **एशियाटिक इस्पात उद्योग लिमिटेड** (उपरोक्त) वाला मामला इस विवाद्यक से संबंधित नहीं है इसलिए यहां इस मामले से याची को किसी प्रकार सहायता नहीं मिल सकती ।

---

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 3418.

[2] (1994) सप्ली. 1 एस. सी. सी. 155 = ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 2647.

17. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री एम. आई दार के प्रति निष्पक्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि **एस. मोहन सिंह सेठी** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा दिया गया निर्णय और **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **प्रेमलाल श्रीवास** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से प्रत्यर्थियों के इस अभिवाक् का समर्थन होता है कि जन्मतिथि या अधिकारिक अभिलेखों में की गई प्रविष्टियों में सुधार के लिए किए गए पुराने दावों पर विचार नहीं किया जाना चाहिए ।

18. श्री वानी द्वारा सूचना के अधिकार अधिनियम के अधीन याची को उसके आवेदन के प्रत्युत्तर में प्राप्त जानकारी पर जोर देते हुए निवेदन किया है कि जन्मतिथि को अभिलिखित करने में गलती उस बोर्ड द्वारा विद्यालय के अभिलेखों से अनुलिपि करते समय हुई थी जिसने माध्यमिक विद्यालय परीक्षा प्रमाणपत्र याची के पक्ष में जारी किया गया था ।

19. मैंने याची के विद्वान् काउंसेल के द्वारा मामले में प्राप्त संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों के दिग्दर्शन में उठाए गए विवाद्यक का परिशीलन किया है और मेरा यह विचार है कि प्रत्यर्थी बोर्ड के निर्णय में किसी भी प्रकार से कोई त्रुटि नहीं है । तद्नुसार, मुझे इस याचिका में कोई गुणता दिखाई नहीं देती है और इसे संबंधित प्रकीर्ण आवेदनों के साथ खारिज किया जाता है ।

याचिका खारिज की गई ।

अम./अस.

अनुज कुमार

बनाम

बिहार राज्य

(2020 की सिविल रिट याचिका सं. 7646)

तारीख 28 जून, 2021

न्यायमूर्ति अंजनी कुमार शरण

बिहार पंचायत राज अधिनियम, 2006 (2006 का 6) – धारा 18(5) – मुखिया का हटाया जाना – वित्तीय अनियमितताएं और रिश्वत – कर्तव्य की अवहेलना तथा पदीय शक्ति का दुरुपयोग – जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत – बी. डी. ओ. और डी. डी. सी. के माध्यम से जांच रिपोर्ट का मुख्य सचिव पंचायती राज विभाग को भेजा जाना और साथ ही सतर्कता पुलिस थाने में मामला दर्ज किया जाना – विशेष न्यायाधीश (सतर्कता) के समक्ष मामला लंबित पाया जाना किंतु मुख्य सचिव द्वारा जांच में याची का दोषी पाया जाना – यदि विशेष न्यायालय (सतर्कता) के समक्ष मामला लंबित है तब भी मुख्य सचिव, पंचायती राज विभाग द्वारा चलाई गई याची को मुखिया के पद से हटाए जाने की प्रक्रिया को अवैध और निराधार नहीं कहा जा सकता ।

इस मामले में याची नालंदा जिले के राजगीर ब्लॉक के अन्तर्गत पथरौरा ग्राम पंचायत का निर्वाचित मुखिया है जिसका निर्वाचन वर्ष 2016 में हुआ था । याची ने अपर मुख्य सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार (प्रत्यर्थी सं. 2) द्वारा तारीख 3 अगस्त, 2020 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए तारीख 19 अगस्त, 2020 को पत्र (प्रदर्श पी-10) प्रेषित किया जिसके द्वारा याची को बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 2006" कहा गया है) की धारा 18(5) के उपबंधों के अधीन मुखिया के पद से हटा दिया गया था और आनुषंगिक अनुतोष के लिए भी निवेदन किया । इसी

आदेश से व्यथित होकर याची ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । याचिका ख़ारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों तथा पक्षकारों द्वारा किए गए अभिवाक् एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के पश्चात् यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि जिला पंचायती राज अधिकारी, नालंदा ने और उसके पश्चात् पंचायती राज विभाग ने इस मामले में पूरी कार्यवाही की है और आक्षेपित निर्णय याची को कारण बताओ नोटिस जारी किए जाने और उसके पश्चात् याची की ओर से दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार किए जाने जैसी सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् पारित किया गया है, इसलिए मात्र यह दर्शाने से कि सतर्कता मामला विद्वान् विशेष न्यायाधीश, सतर्कता, पटना के न्यायालय में अभी तक लंबित है, याची यह साबित नहीं कर सकता कि प्राधिकारियों द्वारा अपनाई गई संपूर्ण प्रक्रिया अवैध और निराधार है । उक्त परिस्थितियों में, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में कोई भी अवैधता और अनियमितता नहीं है । इसके अतिरिक्त यह पूर्णतया स्पष्ट है कि जांच के दौरान विशिष्ट रूप से यह पाया गया था कि याची को 50,000/- रुपए रिश्वत के रूप में लेते हुए सतर्कता प्राधिकारियों द्वारा रंगे हाथों गिरफ्तार किया गया था । यह याची, जोकि ग्राम पंचायत का मुखिया था, के विरुद्ध एक गंभीर आरोप है और उसका यह कृत्य ग्राम पंचायत, जिसका प्रतिनिधित्व याची ने किया था, के लोगों के प्रति अहितकर है । इस प्रकार यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि याची ने न केवल गंभीर रूप से अवैधता/कदाचार कारित किया है बल्कि उन लोगों का विश्वास खोया है जिन्होंने याची को मुखिया के रूप में निर्वाचित किया था । जहां तक शारदा कैलाश मित्तल वाले मामले और सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 14207/2010 में पारित आदेश का संबंध है, यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि याची ने कोई तुच्छ अनियमितता कारित नहीं की है अपितु उसने एक गंभीर कदाचार और अवैधता कारित की है जो पंचायती राज के संपूर्ण तंत्र और स्वयं लोकतंत्र के लिए अहितकर है ।

इसके अतिरिक्त, याची के विरुद्ध लगाए गए आरोप पूर्णतया साबित हो गए हैं और जैसाकि आक्षेपित आदेश, जांच रिपोर्ट, जिला मजिस्ट्रेट की संसूचना और अभिलेख पर उपलब्ध अन्य सामग्री से पूर्णतया यह स्पष्ट हो जाता है कि संबद्ध प्राधिकारियों ने याची के विरुद्ध जो आक्षेपित आदेश पारित किया है वह पूर्णतया न्यायोचित है । (पैरा 21, 22 और 23)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2011] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 9384/2011 : **राजेश कुमार मांझी** बनाम **बिहार राज्य और अन्य** ; 11

[2010] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 7893/2010 : **दिनेश पाण्डेय** बनाम **बिहार राज्य और अन्य** ; 11

[2010] (2010) 2 एस. सी. सी. 319 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3450 : **शारदा कैलाश मित्तल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** ; 13

[2010] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 14207/2010 : **मकसूदन पासवान** उर्फ़ **मधुसूदन** बनाम **बिहार राज्य और अन्य** । 13

सिविल रिट अधिकारिता : 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 7646.

अपर मुख्य सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार के तारीख 3 अगस्त 2020 के आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री चंदन कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से श्री पुष्कर नारायण शाही (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और श्री संजीव कुमार सिंह

आदेश

याची और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेलों की सुनवाई की गई है ।

2. याची नालंदा जिले के राजगीर ब्लॉक के अन्तर्गत पथरौरा ग्राम पंचायत का निर्वाचित मुखिया है जिसका निर्वाचन वर्ष 2016 में हुआ था । याची ने अपर मुख्य सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार (प्रत्यर्थी सं. 2) द्वारा तारीख 3 अगस्त, 2020 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए तारीख 19 अगस्त, 2020 को पत्र (प्रदर्श पी-10) प्रेषित किया जिसके द्वारा याची को बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 2006" कहा गया है) की धारा 18(5) के उपबंधों के अधीन मुखिया के पद से हटा दिया गया था और आनुषंगिक अनुतोष के लिए भी निवेदन किया ।

3. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि रंजीत कुमार अर्थात् पथरौरा ग्राम पंचायत के भूतपूर्व मुखिया और उसके मित्र सागर पासवान ने जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा के समक्ष तारीख 24 दिसंबर, 2018 को याची को उसके निर्वाचित पद अर्थात् मुखिया से हटाने के संबंध में अधिनियम, 2006 के अधीन आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें वित्तीय विसंगतियों और रिश्वत लेने का अभिकथन किया । उपरोक्त आवेदन के अनुसरण में जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने यह मामला विकास उपायुक्त (डी. डी. सी.), नालंदा को जांच हेतु अग्रप्रेषित कर दिया । विकास उपायुक्त नालंदा ने तारीख 31 दिसंबर, 2018 के अपने पत्र सं. 2568 (उपाबंध पी-1) द्वारा राजगीर, ब्लॉक विकास अधिकारी को जांच करने और उसकी रिपोर्ट भेजने का निदेश दिया । पथरौरा ग्राम पंचायत के वार्ड सं. 6 के वार्ड सदस्य ने याची द्वारा रिश्वत की मांग किए जाने के संबंध में आवेदन फाइल किया और इस संबंध में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन सतर्कता पुलिस थाना, जिला पटना में तारीख 6 अगस्त, 2018 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (उपाबंध पी-2) दर्ज कराई जो अभी भी विद्वान् विशेष न्यायाधीश, सतर्कता, पटना के न्यायालय में लंबित है । याची को गिरफ्तार किया गया और तारीख 14 दिसंबर, 2018 को जमानत पर छोड़ दिया गया ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि ब्लॉक विकास अधिकारी, राजगीर ने विकास उपायुक्त, नालंदा को जांच संबंधी विस्तृत रिपोर्ट तारीख 17 जनवरी, 2019 के पत्र सं. 89 (उपाबंध पी-4) के माध्यम से भेजी जिसमें ब्लॉक विकास अधिकारी, राजगीर ने स्वयं यह निवेदन किया कि जिला स्तर पर जांच की जाए, चूंकि ब्लॉक विकास अधिकारी के अनुसार कनिष्ठ अभियंता/पंचायत सेवक/पंचायत रोजगार सेवक/प्रोग्राम अधिकारी इस अपराध में अंतर्वलित हैं । उपखंड मजिस्ट्रेट, राजगीर ने जांच कराई और इस संबंध में तारीख 26 अप्रैल, 2019 को तैयार की गई विस्तृत रिपोर्ट (उपाबंध पी-3) जिला पंचायती राज अधिकारी, नालंदा को अपने पत्र सं. 261 के माध्यम से भेजी ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची को तारीख 27 अप्रैल, 2019 के पत्र सं. 622 के माध्यम से कारण बताओ नोटिस (उपाबंध पी-5) तामील कराया गया और ब्लॉक विकास अधिकारी नालंदा की जांच रिपोर्ट और वित्तीय विसंगतियों तथा वर्तमान सेवाकाल से संबंधित सर्तकता मामले के बाबत जारी किया गया कारण बताओ नोटिस फाइल किया गया ।

6. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची ने अपने पूर्ववर्ती और वर्तमान सेवाकाल से संबंधित वित्तीय विसंगतियों को लेकर तारीख 4 मई, 2019 को विस्तृत कारण बताओ नोटिस (उपाबंध पी-6) प्रस्तुत किया था और इसके समर्थन में साक्ष्य भी प्रस्तुत किया था । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने याची को कोई भी नोटिस तामील नहीं कराया था और बिना सुनवाई के तथा साक्ष्य संबंधी किसी भी सामग्री पर विचार किए बिना याची को पथरौरा ग्राम पंचायत के मुखिया के पद से हटाए जाने की सिफारिश की और याची को इस संबंध में तब पता चला जब तारीख 6 सितंबर, 2019 के पत्र सं. 1642/पी के माध्यम से प्रधान सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार की ओर से उसे नोटिस भेजा गया जिसके पश्चात् जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने प्रधान सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार को एक पत्र (उपाबंध पी-7) भेजा जिसमें याची को मुखिया के पद से हटाए जाने की सिफारिश की गई ।

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि मुख्य सचिव, पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार (प्रत्यर्थी सं. 2) ने तारीख 26 जुलाई, 2019 के पत्र सं. 4715 तथा तारीख 6 मई, 2019 के पत्र सं. 671 (जिसमें जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने बिहार पंचायती राज अधिनियम की धारा 18(5) के अधीन याची के हटाए जाने की सिफारिश की थी) के अनुसार तारीख 13 अगस्त, 2019 को कारण बताओ नोटिस (उपाबंध पी-8) भेजा ।

8. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची ने अपने दोनों सेवाकाल से संबंधित कारण बताओ नोटिस का उत्तर तारीख 13 अगस्त, 2019 को प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा दिए गए निदेशानुसार प्रस्तुत कर दिया था, यह भी दलील दी गई है कि कारण स्पष्ट करने के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा कोई भी सुनवाई नहीं की गई । तथापि, सुनवाई की तारीख नियत की गई और याची स्वयं या अपने काउंसेल (उपाबंध पी-9) के माध्यम से कार्यवाही में पेश हुआ ।

9. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने याची के विरुद्ध उसे उसके पद से हटाने के लिए तारीख 3 अगस्त, 2020 का आदेश पारित किया और यह आदेश बिहार राज्य की मंजूरी से किया गया है । पद से हटाए जाने के आदेश से यह उपदर्शित होता है कि याची को अपने कर्तव्य का निर्वहन करने के दौरान कदाचार का दोषी पाया गया है और उसने अपनी शक्ति का दुरुपयोग इस आधार पर किया है कि वर्तमान सेवाकाल के दौरान रिश्वत लेने का अभिकथन सत्य पाया गया है । पद से हटाने के उपरोक्त आदेश में प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह कथन किया है कि रिश्वत लेने का आरोप बिहार पंचायती राज अधिनियम की धारा 18(5) (उपाबंध पी-10) के अधीन कार्रवाई किए जाने का एकमात्र आधार है ।

10. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची अर्थात् अभियुक्त मुखिया के विरुद्ध जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा द्वारा तारीख 6 मई, 2019 के पत्र के अधीन निम्न आरोप विरचित किए गए :–

(i) महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन गारंटी अधिनियम,

2005 के अधीन वर्ष 2012 के लिए 5,00,000/- रुपए का अवैध प्रत्याहरण ;

(ii) प्रधानमंत्री आवास योजना (वर्ष 2011-2015) के अन्तर्गत 14 लाभार्थियों के नाम बदलकर दोहरा लाभ उपलब्ध कराना ;

(iii) प्रधानमंत्री आवास योजना (वर्ष 2011-2015) के अन्तर्गत 17 नकली लाभार्थियों को भुगतान के माध्यम से निधि का गबन ;

(iv) महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन गारंटी अधिनियम, 2005 के अधीन वर्ष 2012-2013 की योजना के अन्तर्गत 55 हैंड-पंप लगवाए बिना धन का अवैध प्रत्याहरण ;

(v) तत्कालीन मुखिया के रूप में अपने सेवाकाल में याची द्वारा निधि का अवैध प्रत्याहरण किया जाना और इसी काम के लिए चौथे और पांचवें राज्य वित्त आयोग, पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि (बी. आर. जी. एफ.) और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन गारंटी अधिनियम, 2005 (मनरेगा) के अधीन पुन: योजनाओं का नाम बदलकर अवैध प्रत्याहरण किया जाना ;

(vi) याची अर्थात् तत्कालीन मुखिया को सतर्कता विभाग द्वारा, अपने वर्तमान सेवाकाल के दौरान 50,000/- रुपए की रिश्वत लेने के कारण गिरफ्तार किया गया ।

11. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि पांचवें और छठे अभिकथन के अतिरिक्त शेष अभिकथन याची के मुखिया के रूप में किए गए पूर्ववर्ती सेवाकाल से संबंधित हैं जिनमें याची को वित्तीय विसंगतियों को लेकर दोषी नहीं पाया गया है और **दिनेश पांडे** बनाम **बिहार राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में किए गए आदेश जो **राजेश कुमार मांझी** बनाम **बिहार राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में भी दोहराया गया है, के आधार पर मुखिया के पूर्ववर्ती सेवाकाल से संबंधित अभिकथन प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा खारिज कर दिए गए हैं ।

---

[1] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 7893/2010.

[2] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 9384/2011.

12. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची ने तारीख 17 अक्तूबर, 2019 के पत्र सं. 2पी/एए-15-18/2018/6589/पीआरए के बाबत प्रत्युत्तर-सह-उत्तर तथा स्पष्टीकरण प्राधिकारी को भेजा ।

13. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने याची को उसके पद से हटाए जाने के संबंध में बिहार पंचायती राज अधिनियम की धारा 18(5) के अधीन मनमाना, अयुक्तियुक्त और अनुचित आदेश पारित किया है जिसमें मुखिया याची को अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के दौरान कदाचार और अपनी शक्ति का दुरुपयोग करने का दोषी अभिनिर्धारित किया । यह भी दलील दी गई है कि याची को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन विशेष सतर्कता न्यायालय, पटना द्वारा सतर्कता मामला सं. 34/2018 में अभी तक दोषी नहीं पाया गया है, अत: प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा पूर्वोक्त उपबंध के अधीन ग्राम पंचायत के निर्वाचित मुखिया को उसके पद से हटाने का आदेश पारित करने के संबंध में गलत निर्वचन किया है और ऐसा निर्वचन इस न्यायालय द्वारा अपास्त किया जाना चाहिए । इस संबंध में याची के विद्वान् काउंसेल ने **शारदा कैलाश मित्तल** बनाम **मध्यप्रदेश राज्य और अन्य**[1] और **मकसूदन पासवान** उर्फ **मधुसूदन पासवान** बनाम **बिहार राज्य और अन्य**[2] (तारीख 12 दिसंबर, 2010 को पारित आदेश का पैरा सं. 18 और 19) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है ।

14. प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री पी. एन. शाही ने यह दलील दी है कि कारण बताओ नोटिस के संबंध में जिला पंचायती राज अधिकारी, नालंदा तथा पंचायती राज विभाग, बिहार सरकार, पटना को पर्याप्त अवसर दिए गए कि वे याची से स्पष्टीकरण मांगें जिसके परिणामस्वरूप याची ने संबद्ध प्राधिकारियों के समक्ष अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया और पंचायती राज विभाग ने अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण

---

[1] (2010) 2 एस. सी. सी. 319 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3450.

[2] सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 14207/2010.

सामग्री का परिशीलन करने के पश्चात् अंतिम आदेश पारित किया और इसी आदेश को वर्तमान रिट याचिका में चुनौती दी गई है ।

15. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने तत्कालीन मुखिया को अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन तारीख 6 मई, 2019 के पत्र सं. 671 (उपाबंध पी-8) के अनुसरण में पद से हटाए जाने की सिफारिश उस रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों के आधार पर की जो तारीख 26 अप्रैल, 2019 के पत्र सं. 261 (तारीख 5 नवंबर, 2019 का उपाबंध पी-3) द्वारा उपखंड अधिकारी, नालंदा के आदेशानुसार तैयार की गई थी । यह दलील दी गई है कि याची से कारण बताओ नोटिस का स्पष्टीकरण डीपीआरओ, नालंदा द्वारा तारीख 24 जुलाई, 2019 के पत्र सं. 622 (उपाबंध पी-5) के अनुसार मांगा गया । याची ने तारीख 4 मई, 2019 को अपना स्पष्टीकरण (उपाबंध पी-6) प्रस्तुत किया । पूर्वोक्त पत्र/स्पष्टीकरण जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा द्वारा तारीख 6 मई, 2019 के अपने सिफारिशी आदेश (उपाबंध पी-8) के साथ संलग्न किए गए ।

16. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची ने तारीख 4 मई, 2019 और 13 अगस्त, 2019 के अपने उत्तर (क्रमश: उपाबंध पी-6 और पी-9) में यह निवेदन किया है कि उसके विरुद्ध किए गए अभिकथनों में अधिकांश अभिकथन उसके पूर्ववर्ती सेवाकाल से संबंधित हैं, अत: वर्तमान सेवाकाल में अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन उसके विरुद्ध कार्यवाही नहीं की जा सकती । तथापि, याची ने अपने वर्तमान सेवाकाल के दौरान लोक निधि का गबन करने और रिश्वत लेने तथा सतर्कता विभाग द्वारा गिरफ्तार किए जाने से संबंधित आरोपों की प्रतिरक्षा में कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सका है । यह भी दलील दी गई है कि बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006 की धारा 170 के अधीन पंचायत का मुखिया और उसके सभी निर्वाचित प्रतिनिधि लोक सेवक होते हैं, इसलिए बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006 की धारा 170 तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 2(ख) के अधीन ग्राम पंचायत के मुखिया सहित सभी निर्वाचित प्रतिनिधि लोक सेवक हैं और उनके विरुद्ध कार्रवाई की जा सकती है ।

17. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि कानूनी योजना को दृष्टिगत करते हुए, याची के विरुद्ध अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन कार्यवाही आरंभ की गई और याची से कारण बताओ नोटिस (उपाबंध पी-8) का उत्तर मांगा गया और जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा द्वारा याची के विरुद्ध विरचित आरोपों का स्पष्टीकरण दिए जाने के लिए याची को युक्तियुक्त अवसर दिया गया । याची को तारीख 13 अगस्त, 2019 को अपर मुख्य सचिव के समक्ष पेश होकर सभी आरोपों का स्पष्टीकरण देने को कहा गया । याची अपना स्पष्टीकरण देने के लिए तारीख 13 अगस्त, 2019 को पेश हुआ । याची का स्पष्टीकरण जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा को तारीख 16 अगस्त, 2019 के पंचायती राज विभाग के पत्र सं. 5121 द्वारा भेज दिया गया ताकि जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा याची द्वारा दिए गए इस स्पष्टीकरण पर अपनी राय व्यक्त कर सकें । सुनवाई की अगली तारीख 27 अगस्त, 2019 नियत की गई और इसकी संसूचना तारीख 16 अगस्त, 2019 के पत्र सं. 5122 द्वारा दी गई । याची जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश हुआ किंतु अभी तक जिला मजिस्ट्रेट की राय प्राप्त नहीं हो सकी थी, इसलिए अगली तारीख 17 सितंबर, 2019 नियत की गई और इस संबंध में तारीख 2 सितंबर, 2019 का पत्र सं. 5488 जारी किया गया । जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा को अपनी राय प्रेषित करने के लिए तारीख 2 सितंबर, 2019 का एक डीओ पत्र सं. 5483 भेजा गया । जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा ने याची द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण पर अपनी राय व्यक्त की जो तारीख 6 सितंबर, 2019 के पत्र सं. 1642 के माध्यम से तारीख 12 सितंबर, 2019 को विभाग द्वारा प्राप्त की गई । अगले दिन याची अपने काउंसेल के साथ पेश हुआ किंतु उस दिन अपरिहार्य कारणों से मामले में सुनवाई न हो सकी । अगली तारीख 15 अक्तूबर, 2019 नियत की गई और उस समय याची और उसके काउंसेल भी मौजूद थे । जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा की राय याची को भेज दी गई जिस पर याची की ओर से उत्तर मांगा गया । तारीख 5 नवंबर, 2019, 26 नवंबर, 2019, 17 दिसंबर, 2019 और 31 दिसंबर, 2019 को अपरिहार्य कारणों से सुनवाई न हो सकी । याची ने जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा द्वारा प्रस्तुत

की गई राय पर अपना उत्तर अभी तक प्रस्तुत नहीं किया था, इसलिए याची को तारीख 7 नवंबर, 2019 के विभागीय पत्र सं. 7153 के माध्यम से अनुस्मारक भेजा गया और इसके पश्चात् तारीख 3 दिसंबर, 2019 को एक अन्य अनुस्मारक पत्र सं. 7832 भेजा गया और तब जाकर तारीख 7 दिसंबर, 2019 को याची का उत्तर विभाग को प्राप्त हो सका ।

18. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजी साक्ष्य और महत्वपूर्ण तथ्यों के आलोक में मामले का स्वतंत्रतापूर्वक परिशीलन किया गया है । याची द्वारा मुखिया के कार्यालय का दुरुपयोग किए जाने और अपने कर्तव्य की अवहेलना किए जाने के संबंध में अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है । इस मामले की कार्यवाही के दौरान दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर निम्न महत्वपूर्ण बिन्दु यह सामने आते हैं जिन पर न्यायालय द्वारा विचार किया जाना चाहिए :–

(i) क्रम सं. 1 से क्रम सं. 4 तक याची के विरुद्ध शिकायतें/अभिकथन मुखिया के पूर्ववर्ती सेवाकाल (2011-2016) से संबंधित पाए गए जो दिनेश पांडे **बनाम** बिहार राज्य और अन्य (सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 7893/2010) में तारीख 13 मई, 2010 को पारित आदेश द्वारा सुस्थापित विधि तथा विद्वान् महाधिवक्ता, बिहार की राय को दृष्टिगत करते हुए अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) की परिधि में नहीं आते हैं ।

(ii) शेष दो आरोप याची के मुखिया के रूप में वर्तमान सेवाकाल से संबंधित पाए गए । मनरेगा योजना के अधीन निधि की विसंगतियों और उसके दुर्विनियोग के आरोप के लिए जिला प्राधिकारी आरोप साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत न कर सके, इसलिए इस आरोप पर कोई भी निर्णय नहीं लिया जा सका ।

(iii) सतर्कता प्राधिकारियों द्वारा याची की गिरफ्तारी से यह साबित होता है कि याची ने गंभीर कदाचार कारित किया है जो अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन पदेन मुखिया के

विरुद्ध कार्रवाई किए जाने के लिए ठोस कारण है । अधिनियम, 2006 की धारा 170 के अधीन पंचायत का मुखिया और उसके सभी निर्वाचित प्रतिनिधि लोक सेवक होते हैं । लोक सेवक होने के आधार पर याची भ्रष्ट कृत्यों में अंतर्वलित हो गया जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन गंभीर अपराध है और भ्रष्टाचार से संबंधित राज्य सरकार की शून्य सहिष्णुता योजना (जीरो टालरेंस पॉलिसी) को दृष्टिगत करते हुए गंभीर कदाचार और कर्तव्य की अवहेलना है । मुखिया के रूप में अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में जो कदाचार किया गया है वह लोक सेवक के विरुद्ध अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन कार्रवाई किए जाने के लिए पर्याप्त आधार है ।

19. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन प्राधिकारियों को विधि की प्रक्रिया का अनुसरण करने के पश्चात् कार्रवाई करने की पर्याप्त शक्ति दी गई है और अभिलेख से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि संबद्ध प्राधिकारियों ने विधि के अनुसरण में समुचित प्रक्रिया अपनाई है और उसके पश्चात् ही आक्षेपित आक्षेप पारित किया है । इस प्रकार, संबद्ध प्राधिकारियों ने आक्षेपित आदेश पारित करने में विधि की दृष्टि से कोई भी अवैधता कारित नहीं की है और न ही इस प्रक्रिया में कोई अनियमितता पाई गई है ।

20. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची के विरुद्ध अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन कार्यवाही के दौरान विरचित आरोप की सुनवाई, याची द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण, जिला मजिस्ट्रेट, नालंदा की राय और अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए दस्तावेजी साक्ष्य से यह पता चलता है कि याची को मुखिया के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के दौरान लोक निधि में की गई वित्तीय अनियमितताओं और दुर्विनियोग संबंधी कदाचार करने का दोषी पाया गया है । कर्तव्य की अवहेलना करना स्पष्ट रूप से अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन गंभीर कदाचार की श्रेणी में आता है । याची

को सतर्कता प्राधिकारी द्वारा 50,000/- रुपए रिश्वत के रूप में लेते हुए रंगे हाथों गिरफ्तार किया गया था । उसे वित्तीय भ्रष्टाचार में अन्तर्वलित होने का दोषी पाया गया है । याची के विरुद्ध गंभीर वित्तीय भ्रष्टाचार, मुखिया के रूप में अपने कर्तव्य की अवहेलना करने और अपने पद का दुर्विनियोग करने के आरोप सिद्ध किए गए हैं और पूर्णतया साबित हैं । तद्नुसार याची को ग्राम पंचायत राज, पथरौरा, ब्लॉक राजगीर, जिला नालंदा के मुखिया के पद से अधिनियम, 2006 की धारा 18(5) के अधीन तारीख 3 अगस्त, 2020 के आदेश द्वारा हटा दिया गया है और इस संबंध में सभी संबंधित प्राधिकारियों को तारीख 19 अगस्त, 2020 की ज्ञापन सं. 4817 के अधीन संसूचित कर दिया गया है और इस ज्ञापन को चुनौती दी गई है ।

21. इस मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों तथा पक्षकारों द्वारा किए गए अभिवाक् एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के पश्चात् यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि जिला पंचायती राज अधिकारी, नालंदा ने और उसके पश्चात् पंचायती राज विभाग ने इस मामले में पूरी कार्यवाही की है और आक्षेपित निर्णय याची को कारण बताओ नोटिस जारी किए जाने और उसके पश्चात् याची की ओर से दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार किए जाने जैसी सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् पारित किया गया है, इसलिए मात्र यह दर्शाने से कि सतर्कता मामला विद्वान् विशेष न्यायाधीश, सतर्कता, पटना के न्यायालय में अभी तक लंबित है, याची यह साबित नहीं कर सकता कि प्राधिकारियों द्वारा अपनाई गई संपूर्ण प्रक्रिया अवैध और निराधार है । उक्त परिस्थितियों में, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में कोई भी अवैधता और अनियमितता नहीं है ।

22. इसके अतिरिक्त यह पूर्णतया स्पष्ट है कि जांच के दौरान विशिष्ट रूप से यह पाया गया था कि याची को 50,000/- रुपए रिश्वत के रूप में लेते हुए सतर्कता प्राधिकारियों द्वारा रंगे हाथों गिरफ्तार किया गया था । यह याची, जोकि ग्राम पंचायत का मुखिया था, के विरुद्ध एक

गंभीर आरोप है और उसका यह कृत्य ग्राम पंचायत, जिसका प्रतिनिधित्व याची ने किया था, के लोगों के प्रति अहितकर है । इस प्रकार यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि याची ने न केवल गंभीर रूप से अवैधता/कदाचार कारित किया है बल्कि उन लोगों का विश्वास खोया है जिन्होंने याची को मुखिया के रूप में निर्वाचित किया था ।

23. जहां तक **शारदा कैलाश मित्तल** (उपरोक्त) वाले मामले और सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 14207/2010 में पारित आदेश का संबंध है, यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि याची ने कोई तुच्छ अनियमितता कारित नहीं की है अपितु उसने एक गंभीर कदाचार और अवैधता कारित की है जो पंचायती राज के संपूर्ण तंत्र और स्वयं लोकतंत्र के लिए अहितकर है । इसके अतिरिक्त, याची के विरुद्ध लगाए गए आरोप पूर्णतया साबित हो गए हैं और जैसाकि आक्षेपित आदेश, जांच रिपोर्ट, जिला मजिस्ट्रेट की संसूचना और अभिलेख पर उपलब्ध अन्य सामग्री से पूर्णतया यह स्पष्ट हो जाता है कि संबद्ध प्राधिकारियों ने याची के विरुद्ध जो आक्षेपित आदेश पारित किया है वह पूर्णतया न्यायोचित है ।

24. उक्त परिस्थितियों में, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि आक्षेपित निर्णय में कोई भी अवैधता नहीं है और इस रिट याचिका में कोई सार नहीं है इसलिए यह खारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

अस.

क्यूटिस बायोटेक सोल प्रोप्राइटरशिप कन्सर्न

बनाम

सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ़ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड

(2021 की सिविल अपील सं. 53)

तारीख 20 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति नितिन जामदार और न्यायमूर्ति सी. वी. भदंग

व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 (1999 का 47) – धारा 15, 23, 29 और 31 – व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' – व्यादेश – प्रत्यर्थी द्वारा व्यापार चिह्न प्रयोग किए जाने पर अपीलार्थी की ओर से आक्षेप किया जाना – प्रत्यर्थी-सीरम इंस्टीट्यूट में व्यापार चिह्न अर्थात् 'कोविशील्ड' शब्द का सृजन किया है और इसके अंतर्गत वैक्सीन के विकास और विनिर्माण की दिशा में पर्याप्त कदम उठाए हैं, इस प्रकार प्रत्यर्थी द्वारा इस चिह्न का प्रयोग पूर्व में किए जाने से संबंधित अभिलेख पर यथोचित और विश्वसनीय सामग्री उपस्थित है, अत: निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 – धारा 15, 23, 29 और 31 – प्रत्यर्थी द्वारा व्यापार चिह्न का अतिक्रमण किए जाने से संबंधित अपीलार्थी की ओर से आरोप लगाया जाना – व्यादेश की प्रार्थना – सुविधा का संतुलन प्रत्यर्थी के पक्ष में पाया जाना – प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा भारत सरकार को पहले ही वैक्सीन की खुराक की पूर्ति की जा चुकी है और पुन: 10 करोड़ खुराक का क्रय किए जाने हेतु आर्डर दिया गया है और साथ ही प्रत्यर्थी ने यह भी साबित किया है कि इस दौरान वैक्सीन के विकास और अनुसंधान पर 28 करोड़ रुपए खर्च किए गए हैं, इस प्रकार सुविधा का संतुलन प्रत्यर्थी के पक्ष में है क्योंकि प्रत्यर्थी के विरुद्ध व्यादेश पारित करने में उसके कारबार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, अत: निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

इस मामले में फाइल की गई अपील की विषयवस्तु व्यापार चिह्न

'कोविशील्ड' है । अपीलार्थी 'क्यूटिस बायोटेक' और प्रत्यर्थी 'सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड' दोनों ने 'कोविशील्ड' व्यापार चिह्न के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन किया है जो अभी लंबित हैं । क्यूटिस बायोटेक ने पुणे के वाणिज्यिक न्यायालय में सीरम इंस्टीट्यूट के विरुद्ध वाद फाइल किया है । इस वाद में क्यूटिस बायोटेक ने सीरम इंस्टीट्यूट का व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' का उपयोग करने से अवरुद्ध करने के लिए अंतरिम व्यादेश और विक्रय के संबंध में खाते के अनुरक्षण की ईप्सा की है । विद्वान् जिला न्यायाधीश/वाणिज्यिक न्यायालय ने अंतरिम व्यादेश को खारिज कर दिया था । इसलिए क्यूटिस बायोटेक ने वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 की धारा 13 के अधीन हमारे समक्ष वर्तमान अपील प्रस्तुत की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पूर्व में सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा इस व्यापार चिह्न को अपनाए जाने तथा उपयोग किए जाने का न केवल पर्याप्त साक्ष्य है बल्कि यह भी साक्ष्य है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने बिना व्यवधान के अपने इस उपयोग को जारी रखा । यह अभिलेख पर है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने प्रति माह 'कोविशील्ड' वैक्सीन की 60 मिलियन खुराक का उत्पादन किया है और भारत सरकार को 98 मिलियन खुराक की आपूर्ति भी की है । सीरम इंस्टीट्यूट ने व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के अंतर्गत वैक्सीन के विनिर्माण के लिए आवश्यक विभिन्न अनुज्ञाओं और अनुज्ञप्तियों को अभिप्राप्त किया है । अभिप्राप्त की गई अनुज्ञाओं और अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का ब्यौरा सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा फाइल किए गए कथन में दिया गया है । ये ब्यौरे इस प्रकार हैं – व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के साथ वैक्सीन के विनिर्माण में आवश्यक प्रक्रिया के अनुरूप में ओषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 नियम 1945 और नवीन ओषधि और नैदानिक परीक्षण नियम 2019 का अनुपालन करना सम्मिलित है । विनिर्माण की विन्यास योजना की स्वीकृति को मंजूर करना ; विशेषज्ञों और ओषधि निरीक्षक के समूह द्वारा परिसर का संयुक्त निरीक्षण करना ; ओषधि और प्रसाधन सामग्री नियम की अनुसूची एम और अनुसूची एल-I ; अधिकथित जीएमपी/जीएलपी अपेक्षाओं का अनुपालन करने वाले परिसर की स्थापना करना ; वैक्सीन

के विनिर्माण और गुणवत्ता नियंत्रक के लिए अर्हित तकनीकी कर्मचारियों को लगाना ; मास्टर सूत्र निर्मित करना ; मानक संक्रिया प्रक्रियाओं को विरचित करना ; सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के पर्यवेक्षण में विस्तृत बैच विनिर्माण प्रोटोकॉल के अनुसार बैचों का विनिर्माण करना ; मानकों के साथ उत्पादित वैक्सीन के प्रत्येक बैच के नमूने को राष्ट्रीय नियंत्रण प्रयोगशाला में प्रत्येक बैच के परीक्षण और प्रमाणन के लिए भेजना और बैच को सीधे बाजार में या सरकारी स्वास्थ्य प्राधिकारियों के माध्यम से अंतिम उपयोगकर्ताओं को वितरित करना । यह कथन किया गया है कि 'कोविशील्ड' वैक्सीन का परिवर्धन करने के लिए विभिन्न आज्ञापक नैदानिक प्रक्रमों को पूर्ण किया गया था । इसमें पूर्व नैदानिक (जीव परीक्षण) अध्ययन, पूर्व नैदानिक डेटा का संकलन और चरण-1 के लिए मनुष्यों पर इसका अनुप्रयोजन करना सम्मिलित है । कई विनियामक उपायों/प्रक्रियाओं का अनुपालन करते हुए वैक्सीन की सुरक्षा की जांच के लिए 2 हज़ार स्वस्थ सेवकों पर आगे का नैदानिक परीक्षण चरण-1 किया गया । वैक्सीन का नैदानिक परीक्षण चरण-II कई विनियामक उपायों/प्रक्रियाओं का अनुपालन करते हुए उसकी विस्तारित सुरक्षा और प्रभावकारिता की जांच के लिए लगभग पांच सौ स्वस्थ स्वयं सेवकों पर किया गया । एक हजार से अधिक स्वयं सेवकों पर वैक्सीन का नैदानिक परीक्षण चरण-III उसकी सुरक्षा और प्रभावकारिता की पुष्टि करने के लिए किया गया तथा इस प्रकार से उत्पन्न/संकलित विशाल डेटा को प्रस्तुत और विशेषज्ञ समिति/भारत के ओषधि महानियंत्रक द्वारा इसका पुनर्विलोकन करने और अनुमोदन करने के लिए इसे उन्हें सुपुर्द किया गया । ये घटनाएं चिह्न का उपयोग करते हुए वैक्सीन को विकसित करने में सीवनहीन गतिविधि की एक श्रृंखला बनाती है । इसलिए यह स्पष्ट है कि मार्च, 2020 से ही सीरम इंस्टीट्यूट 'कोविशील्ड' चिह्न का उपयोग करने की दिशा में कदम उठा रहा था । अंतर-विभागीय पत्राचार के अलावा सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा वैक्सीन को विकसित करने की बात मीडिया में होने से इनकार नहीं किया जा रहा है । अभिलेख पर उपस्थित साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने 'कोविशील्ड' शब्द को चुना था और इसके विकास और विनिर्माण की दिशा में पर्याप्त कदम उठाए थे । इस प्रकार से

सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा चिह्न को पूर्व में अपनाए जाने को प्रदर्शित करने के लिए अभिलेख पर यथोचित और विश्वसनीय सामग्री उपस्थित है । इस निष्कर्ष में कोई विकृति नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक 'कोविशील्ड' शब्द का पूर्विक उपयोगकर्ता होने का दावा नहीं कर सकता है । गुडविल सिद्ध करने के लिए क्यूटिस बायोटेक ने यह दावा किया है कि तारीख 30 मई, 2020 से तारीख 31 दिसंबर, 2020 तक उसका आवर्तन 16 लाख रुपए था और उसने विज्ञापनों पर 1.2 लाख रुपए व्यय किए थे । यदि इसे सात माह में विभाजित किया जाए तो यह रकम करीब 2 लाख रुपए प्रति माह से कम आएगी । गुडविल बनाने के लिए आवर्तन का बहुत अधिक होना आवश्यक नहीं है । यदि आवेदक का छोटा कारबार है, तो इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि चूंकि उसके कारबार का पर्याप्त आवर्तन नहीं है इसलिए उसने गुडविल अर्जित नहीं की है । लेकिन जैसाकि सीरम इंस्टीट्यूट ने ठीक दलील दी है कि क्यूटिस बायोटेक ने हस्त सैनिटाइजर्स और विसंक्रामकों का विक्रय उस समय से किया है, जब महामारी के दौरान इन उत्पादों की उच्च मांग थी तो इसलिए सात माह में 16 लाख रुपए का आवर्तन महत्वपूर्ण नहीं है । वर्तमान मामले में यदि आवर्तन के पहलू को अन्य कारकों के साथ संचयी रूप से लिया जाता है, तो यह सुसंगत हो जाता है । आवर्तन की इस छोटी-सी रकम को क्यूटिस बायोटेक के पूर्विक उपयोगकर्ता के दावे के साथ देखा जाना चाहिए । जैसाकि पूर्व में अभिनिर्धारित किया गया था । अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से पूर्विक उपयोग और चिह्न को अपनाया जाना प्रदर्शित नहीं होता है । हमारे अनुसार अभिलेख पर यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक ने व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के संबंध में पर्याप्त गुडविल बना ली थी । अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए इस साक्ष्य से, क्यूटिस बायोटेक द्वारा अपने इस प्राख्यान कि वह चिह्न का पूर्विक उपयोगकर्ता था और उसने गुडविल अर्जित कर ली थी, सिद्ध करने में स्पष्ट रूप से विफल हो गया । जिला न्यायालय के इस निष्कर्ष में कोई विकृति नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक ने व्यादेश को प्रदान किए जाने के लिए इस परीक्षण को सिद्ध नहीं किया था । अगला पहलू प्रवंचना की संभाव्यता है, और क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पाद एक ही क्षेत्र से हैं । यह ग्राहकों के मन में दुर्व्यपदेशन और भ्रम के संदर्भ में सुसंगत है ।

यदि किसी प्रवंचना की कोई अधिसंभाव्यता नहीं है, तो यह व्यादेश को प्रदान करने से इनकार करने का एक कारक होगा । औसत बुद्धिमत्ता और अपूर्ण स्मरण वाले ग्राहक के मन में भ्रम उत्पन्न होना चाहिए । वास्तविक भ्रम को स्थापित करना अपेक्षित नहीं है और भ्रम की संभाव्यता चला देने के अवयवों को स्थापित करने के लिए पर्याप्त है । यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी के कार्य से प्रवंचना या भ्रम होने की संभावना है, जो चला देने के लिए प्रेरित करता है तो इसे विशिष्ट तथ्यों पर निर्भर होना होगा । यह पता लगाने के लिए एक सामान्य विवेक के दृष्टिकोण को अपनाना होगा कि क्या सीरम इंस्टीट्यूट का आचरण क्यूटिस बायोटेक के माल को अपने माल के रूप में चला देने में प्रकल्पित होता है या कम से कम ग्राहकों के मन में ऐसा भ्रम उत्पन्न करता हो जो क्यूटिस बायोटेक के व्यय पर सीरम इंस्टीट्यूट को लाभ पहुंचाता हो । जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उपभोक्ता भिन्न-भिन्न हैं और उनकी व्यापार प्रणाली भी भिन्न है । क्यूटिस बायोटेक के अनुसार यह निष्कर्ष इसलिए गलत है क्योंकि उत्पादों के बीच व्यापार संबंध, पक्षकारों के औषधीय उत्पाद भ्रम को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त हैं और यदि व्यापार प्रणाली भिन्न भी है तो जब तक कि चिह्न इतना समरूप है कि जिससे भ्रम हो सके तो चला देने का मामला बनता है । यह प्रतिवाद किया गया कि जब अंतरिम प्रक्रम के व्यादेश की ईप्सा की जाती है, तो वास्तविक भ्रम को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती है । सर्वप्रथम यह ध्यान में रखना होगा कि चला देने की क्रिया को स्थापित करने के लिए आवश्यक सामग्री को संचयी रूप से और परिस्थितियों की समग्रता में लिया जाना है । दूसरा, औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम के विवाद्यक पर विचार इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए ही करना होगा । क्यूटिस बायोटेक ने यह स्थापित नहीं किया है कि वह चिह्न का एक पूर्विक उपयोगकर्ता है या उसने गुडविल अर्जित कर ली है । (पैरा 18, 19, 20 और 21)

न्यायालय क्यूटिस बायोटेक के इस प्रतिवाद से सहमत नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पादों के बीच भ्रम होने की संभावना है । सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा विनिर्मित वैक्सीन 'कोविशील्ड'

काउंटर पर उपलब्ध नहीं है । वैक्सीन को सरकारी अभिकरणों के माध्यम से प्रशासित किया जाएगा । सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पाद 'कोविशील्ड' का क्रेता भारत सरकार है । वैक्सीन का संचालन एक इंजेक्शन के माध्यम से होता है । विसंक्रामक या हस्त सैनिटाइजर की बिक्री, यद्यपि यह उसी क्षेत्र से संबंधित हो सकती है जो कि स्वास्थ्य देखभाल उत्पाद से है लेकिन इसे औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम उत्पन्न करने वाला नहीं कहा जा सकता है । इंजेक्शन के माध्यम से वैक्सीन को संचालित किया जाना सुविख्यात है । यह अभिनिर्धारित करना बहुत असुगम होगा कि अभिहित स्थानों पर सरकार द्वारा प्रशासित वैक्सीन पर तथा सैनिटाइजर उत्पादों पर व्यापार चिह्न का उपयोग करना औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम उत्पन्न करेगा । दृश्य रूप से भी उत्पाद भिन्न हैं । जिला न्यायालय का यह अभिनिर्धारित करना सही था कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पादों में कोई प्रवंचना या भ्रम की संभाव्यता नहीं होगी । सीरम इंस्टीट्यूट ने अपने लिखित निवेदन के माध्यम से कुछ तथ्यों को प्रस्तुत किया है, जो विवादग्रस्त नहीं हैं । तारीख 4 जनवरी, 2021 को वर्तमान वाद को फाइल किए जाने के पश्चात् तारीख 16 जनवरी, 2021 से सीरम इंस्टीट्यूट की वैक्सीन 'कोविशील्ड' का प्रयोग आरंभ हो गया । भारत सरकार ने एक व्यापक वैक्सीन दिए जाने का कार्यक्रम आरंभ किया है । भारत सरकार ने प्रथम चरण में वैक्सीन के लिए तीन सौ मिलियन लोगों की पहचान की और 'कोविशील्ड' वैक्सीन के लिए ग्यारह मिलियन खुराक का पहला आदेश दिया है । नियत सप्ताह के पश्चात् दूसरी खुराक दी जाएगी । तारीख 1 मार्च, 2021 को सह-रुग्णता वाले साठ वर्ष से अधिक आयु और पैंतालीस वर्ष की आयु वाले लोगों के लिए टीकाकरण अभियान आरंभ किया गया है । सीरम इंस्टीट्यूट की 'कोविशील्ड' वैक्सीन की पूर्ति राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के माध्यम से की गई है । तारीख 16 मार्च, 2021 तक भारत सरकार को 'कोविशील्ड' की 6 करोड़ 60 लाख खुराक की पूर्ति की जा चुकी है । इसके अलावा 72 से अधिक देशों को लगभग 5 करोड़ 90 लाख खुराक की पूर्ति की गई है । भारत सरकार ने सीरम इंस्टीट्यूट की 'कोविशील्ड' वैक्सीन की 10 करोड़ खुराक के लिए एक और क्रय आदेश दिया है ।

सीरम इंस्टीट्यूट ने अभी तक 37 हजार 507 लाख रुपए का विक्रय 'कोविशील्ड' की वैक्सीन से प्राप्त किया है । सीरम इंस्टीट्यूट ने अभिलेख पर यह भी प्रस्तुत किया है कि उसने विकास, अनुसंधान पर 28 करोड़ रुपए व्यय किए हैं और आगे 20 करोड़ रुपए व्यय करने की प्रत्याशंका है । इन तथ्यों के साथ, सुविधा का संतुलन क्यूटिस बायोटेक के पक्ष में नहीं है । सीरम इंस्टीट्यूट के विरुद्ध व्यादेश को प्रदान करने पर उसके कारबार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । सुविधा की दृष्टि को निश्चित करने के लिए एक और पहलू पर विचार किया जाना है । कोरोना वायरस का प्रतिकार करने के लिए 'कोविशील्ड' एक टीका है और यह व्यापक रूप से ज्ञात है । सीरम इंस्टीट्यूट को उसके टीके 'कोविशील्ड' चिह्न के उपयोग को बंद करने का निदेश देने वाला अस्थायी व्यादेश राज्य के वैक्सीन प्रशासन कार्यक्रम में भ्रम और भंग कारित करेगा । इस प्रकार इस मामले में व्यादेश प्रदान करने से वाद के पक्षकारों से परे बड़े पैमाने पर अनुचित प्रभाव पड़ेगा । (पैरा 22, 29 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018] (2018) 2 एस. सी. सी. 1 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 167 : **टोयोटा जिदोशा काबुशिकी कैशा** बनाम **प्रियस ऑटो इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य** ; 4

[2016] (2016) 2 एस. सी. सी. 672 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6470 : **नियॉन लेबोरेटरीज लिमिटेड** बनाम **मेडिकल टेक्नोलॉजीज लिमिटेड और अन्य** ; 4

[2005] (2005) 3 एस. सी. सी. 63 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 1999 : **धारीवाल इंडस्ट्रीज लिमिटेड और एक अन्य** बनाम **एम. एस. एस. फूड प्रोडक्टस** ; 4

[2002] (2002) 3 एस. सी. सी. 65 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 275 : **लक्ष्मीकांत वी. पटेल** बनाम **चेतनभाई शाह और एक अन्य** ; 4

[1998] (1998) 5 एस. सी. सी. 69 = ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 1952 : **इंडियन बैंक** बनाम **महाराष्ट्र राज्य को-ऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन लिमिटेड** ; 4

[1997] 1997 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम्बई 578 = 1998 सप्ली. आर्बिट्रेशन एल. आर. 627 : **एक्टीबोलागेट वोल्वो आफ स्वीडन** बनाम **वोल्वो स्टील्स लिमिटेड आफ गुजरात (भारत)** ; 4

[1997] (1997) 99 (2) बम्बई एल. आर. 538 = (1998) 18 पी. टी. सी. 267 बम्बई : **बायोकेम फार्मास्युटिकल इंडस्ट्रीज और अन्य** बनाम **बायोकेम सिनर्जी लिमिटेड** ; 4

[1979] आई. एल. आर. (1979) II दिल्ली 481 = ए. आई. आर. 1980 दिल्ली 254 : **एलोरा इंडस्ट्रीज** बनाम **बनारसी दास गोयल और अन्य** ; 24, 25

[1965] [1965] 1 एस. सी. आर. 737 = ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 980 : **कविराज पंडित दुर्गा दत्त शर्मा** बनाम **नवरत्न फार्मास्युटिकल लेबोरेटरीज** ; 4

[1960] [1960] 1 एस. सी. आर. 968 = ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 142 : **कॉर्न प्रोडक्ट्स रिफाइनिंग कंपनी** बनाम **शांग्रीला फूड प्रोडक्ट्स लिमिटेड** । 4

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की सिविल अपील सं. 53.

विद्वान् जिला न्यायाधीश वाणिज्यिक न्यायालय के अंतरिम आदेश के विरुद्ध वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 की धारा 13 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री अभिनव चंद्रचूड़, आदित्य सोनी, चेतन अलाई, श्रीनिवास बड़े और स्वराज जाधव, व्हाइट एंड ब्रीफ एडवोकेट्स एण्ड सालिसिटर्स

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री बीरेन्द्र सराफ, एस. ए. रोहन सावंत, हितेश जैन (सुश्री) पुजा तिडके, (सुश्री) मोनिशा माणे भंगाले और (सुश्री) पारिशा पारकर को परिनाम द्वारा अनुदेश दिया गया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति नितिन जामदार ने दिया ।

न्या. जामदार – इस अपील की विषयवस्तु व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' है । अपीलार्थी 'क्यूटिस बायोटेक' और प्रत्यर्थी 'सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड' दोनों ने 'कोविशील्ड' व्यापार चिह्न के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन किया है जो अभी लंबित हैं । क्यूटिस बायोटेक ने पुणे के वाणिज्यिक न्यायालय में सीरम इंस्टीट्यूट के विरुद्ध वाद फाइल किया है । इस वाद में क्यूटिस बायोटेक ने सीरम इंस्टीट्यूट का व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' का उपयोग करने से अवरुद्ध करने के लिए अंतरिम व्यादेश और विक्रय के संबंध में खाते के अनुरक्षण की ईप्सा की है । विद्वान् जिला न्यायाधीश/वाणिज्यिक न्यायालय ने अंतरिम व्यादेश को खारिज कर दिया था । इसलिए क्यूटिस बायोटेक ने वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 की धारा 13 के अधीन हमारे समक्ष वर्तमान अपील प्रस्तुत की है ।

2. हमने अपीलार्थी क्यूटिस बायोटेक की ओर से विद्वान् अधिवक्ता सर्वश्री अभिनव चंद्रचूड़ और आदित्य सोनी को सुना और प्रत्यर्थी-सीरम इंस्टीट्यूट की ओर से विद्वान् वरिष्ठ अधिवक्ता डा. बीरेन्द्र सराफ को सुना ।

3. न तो क्यूटिस बायोटेक और न ही सीरम इंस्टीट्यूट के पास व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' का रजिस्ट्रीकरण है । व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 की धारा 27 की उपधारा (1) के अधीन यह आज्ञापक है कि कोई भी व्यक्ति किसी अरजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न के अतिलंघन के निवारण के लिए या उससे होने वाली नुकसानी की वसूली के लिए किसी भी कार्यवाही को संस्थित करने का हकदार नहीं होगा । तथापि, इसकी उपधारा (2) के अधीन यह उपबंध किया गया है कि किसी भी व्यक्ति द्वारा उसके माल या सेवाओं को आवेदक के माल या सेवाओं की तरह चला देने पर उसके विरुद्ध कार्रवाई करने का अधिकार प्रदान करती है और चला देने की कार्रवाइयों को रोकने के लिए उपचारों को परिरक्षित करती है । चूंकि क्यूटिस बायोटेक के पास रजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न नहीं है, इसलिए इसने अपना मामला चला देने की कार्रवाई पर आधारित किया है ।

4. विद्वान् अधिवक्ताओं द्वारा चला देने को रोकने के लिए व्यादेश प्रदान करने में प्रयोग किए जाने वाले सिद्धांतों के संबंध में विभिन्न पूर्व निर्णयों का अवलंब लिया गया है । वे इस प्रकार हैं – **टोयोटा जिदोशा काबुशिकी कैशा** बनाम **प्रियस ऑटो इंडस्ट्रीज लिमिटेड और अन्य**[1] **; नियॉन लेबोरेटरीज लिमिटेड** बनाम **मेडिकल टेक्नोलॉजीज लिमिटेड और अन्य**[2] **; धारीवाल इंडस्ट्रीज लिमिटेड और एक अन्य** बनाम **एम. एस. एस. फूड प्रोडक्टस**[3] **; लक्ष्मीकान्त वी. पटेल** बनाम **चेतनभाई शाह और एक अन्य**[4] **; कॉर्न प्रोडक्ट्स रिफाइनिंग कंपनी** बनाम **शांग्रीला फूड प्रोडक्टस लिमिटेड**[5] **; बायोकेम फार्मास्युटिकल इंडस्ट्रीज और अन्य** बनाम **बायोकेम सिनर्जी लिमिटेड**[6] **; एक्टीबोलागेट वोल्वो ऑफ स्वीडन** बनाम **वोल्वो स्टील्स लिमिटेड ऑफ गुजरात (भारत)**[7] **; कविराज पंडित**

---

[1] (2018) 2 एस. सी. सी. 1 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 167.

[2] (2016) 2 एस. सी. सी. 672 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6470.

[3] (2005) 3 एस. सी. सी. 63 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 1999.

[4] (2002) 3 एस. सी. सी. 65 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 275.

[5] [1960] 1 एस. सी. आर. 968 = ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 142.

[6] (1997) 99 (2) बम्बई एल. आर. 538 = (1998) 18 पी. टी. सी. 267 बम्बई.

[7] 1997 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम्बई 578 = 1998 सप्ली. आर्बिट्रेशन एल. आर. 627.

दुर्गा दत्त शर्मा बनाम **नवरत्ना फार्मास्युटिकल लेबोरेटरीज**[1] **; इंडियन बैंक** बनाम **महाराष्ट्र राज्य को-ऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन लिमिटेड**[2] ।

5. उपरोक्त विनिश्चयों के मूल सिद्धांत निम्नलिखित हैं । अरजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न के संबंध में अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए चला देना निर्णयज विधि में एक अपकृत्य है । यह साम्या में एक कार्रवाई है । यह इस सिद्धांत पर आधारित है कि किसी को भी अपने प्रतिस्पर्धियों के कारबार को नष्ट करने के लिए बेईमानी के साधनों का उपयोग नहीं करना चाहिए । एक ईमानदारी वाले कारबार द्वारा अर्जित की गई ख्याति और गुडविल से बेईमान व्यक्तियों को फायदा उठाने से रोकने के लिए चला देने की विधि को विकसित किया गया है । साम्या में मूलित इस सिद्धांत के आधार पर न्यायालय चला देने को रोकने के लिए उपायों को करना आरंभ करती है । ऐसे मामलों में व्यादेश का आदेश यह सुनिश्चित करता है कि किसी भी पक्षकार को अपने माल और सेवाओं को ग्राहक के समक्ष किसी अन्य पक्षकार के माल और सेवाओं के रूप में उक्त व्यापार चिह्न की गुडविल के साथ प्रस्तुत नहीं करना चाहिए और व्यापार चिह्न की गुडविल से किसी को भी फायदा नहीं प्राप्त करना चाहिए । प्रत्यर्थी द्वारा चला देने को स्थापित करने के लिए आवेदक को पहले अपने माल और सेवाओं से संबंधित ख्याति और गुडविल को स्थापित करना होगा । दूसरा, आवेदक को यह निश्चित रूप से दर्शित करना होगा कि प्रत्यर्थियों के कार्य से लोगों को यह विश्वास करना संभाव्य हो जाए कि दिया गया माल और सेवाएं आवेदक द्वारा दी गई माल और सेवाएं हैं और तीसरा आवेदक, को नुकसान होने की संभावना है या आवेदक को नुकसान हो चुका है । इन तीनों परीक्षणों के आगे के अंतर को विकसित किया गया है । भ्रम के अवधारण के लिए, परीक्षण औसत बुद्धिमत्ता और स्मृति वाले व्यक्ति का होता है । क्या ये तीन संघटक स्थापित होते हैं इसे प्रत्येक मामले के तथ्यों में अवधारित किया जाना है । न्यायालय औषधीय उत्पादों के संबंध में उच्च स्तर की

---

[1] [1965] 1 एस. सी. आर. 737 = ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 980.

[2] (1998) 5 एस. सी. सी. 69 = ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 1952.

जांच करती है क्योंकि इन उत्पादों के संबंध में कोई भी भ्रम सामान्य उत्पादों की तुलना में अधिक नुकसान पहुंचा सकता है । पूर्व निर्णयों की जांच करने के दौरान एक रजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न के अतिलंघन के कार्य को और चला देने के मध्य अंतर को ध्यान में रखना होगा । विधि की स्थिति पर इस उपसर्ग के साथ अब हम तथ्यों और चर्चा की ओर आते हैं ।

6. अर्चना आशीष काबरा 'क्यूटिस बायोटेक' का एकमात्र स्वत्वधारी हैं । क्यूटिस बायोटेक ने वर्ष 2013 में औषधीय उत्पादों को विक्रय करने का कारबार नांदेड़ महाराष्ट्र में प्रारंभ किया था । सीरम इंस्टीट्यूट पुणे में कंपनी अधिनियम, 1955 के अधीन निगमित कंपनी है । इसने अपना कारबार वर्ष 1996 में एक भागीदारी फर्म के रूप में प्रारंभ किया । सीरम इंस्टीट्यूट वैक्सीन और इम्यूनोबॉयोलाजिकल का विनिर्माता है और इस क्षेत्र में उसने कई पुरस्कार भी जीते हैं । यह दुनियाभर में प्रतिरक्षण कार्यक्रम के लिए विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को वैक्सीन की पूर्ति करता है ।

7. क्यूटिस बायोटेक ने तारीख 29 अप्रैल, 2020 को वर्ग-5 के अधीन व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन सं. 4493681 फाइल किया था । प्रस्तावित चिह्न पशु चिकित्सा, आयुर्वेदिक, एलोपैथिक ओषधि और औषधीय सामग्री तथा मनुष्यों और जानवरों के लिए विटामिन और खाद्य आहार संपूरक के लिए था । यह आवेदन व्यापार चिह्न कार्यालय में रजिस्ट्रीकरण के लिए लंबित है । तारीख 6 जून, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट ने वर्ग-5 के अधीन वैक्सीन के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन सं. 4522244 के अंतर्गत व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के लिए आवेदन किया । इसने अन्य रूपांतरों के लिए भी आवेदन किया था ।

8. तारीख 24 जुलाई, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट ने एक वैक्सीन जिसे भारत में 'कोविशील्ड' कहा जाना था, के चरण II/III का भारत में नैदानिक परीक्षण करने के लिए प्रपत्र सीटी-04 में ओषधि महानियंत्रक को आवेदन किया । तारीख 31 जुलाई, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट ने

नैदानिक परीक्षण करने के उद्देश्य से 'कोविशील्ड वैक्सीन' का विनिर्माण करने के लिए प्रपत्र सीटी-10 में भारत के ओषधि महानियंत्रक को आवेदन किया था । तारीख 2 अगस्त, 2020 को स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय, जैव प्रभाग ने नैदानिक परीक्षण के लिए सीरम इंस्टीट्यूट को परीक्षण वर्ग सीएचएड.एक्स1एन कोवी-19 कोरोनावायरस वैक्सीन (पुनर्योगज) के विनिर्माण की अनुज्ञा प्रदान की थी । खाद्य एवं ओषधि प्राधिकरण ने तारीख 8 अगस्त, 2020 को नैदानिक परीक्षण को संचालित करने के लिए सीरम इंस्टीट्यूट को अनुज्ञप्ति प्रदान की थी । खाद्य और ओषधि प्राधिकरण ने तारीख 20 अगस्त, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट को शर्तों के अधीन कोरोनावायरस वैक्सीन के लिए अतिरिक्त उत्पादों के विनिर्माण को अनंतिम रूप से अनुज्ञा प्रदान करते हुए संसूचना जारी की । स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार ने तारीख 10 दिसंबर, 2020 को कोविड-19 की वैक्सीन प्रक्रिया को प्रकाशित किया, जिसमें चरण-II/III के लिए एस्ट्रा-जेनेका अभिकरण के सहयोग से सीरम इंस्टीट्यूट के व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' को निर्देशित किया गया था ।

9. तारीख 11 दिसंबर, 2020 को क्यूटिस बायोटेक ने जिला न्यायालय, नांदेड़ में व्यापार चिह्न वाद सं. 1/2020 फाइल किया, जिसमें सीरम इंस्टीट्यूट को 'चला देने की विधि' का अवलंब लेते हुए 'कोविशील्ड' चिह्न का उपयोग करने से रोकने की ईप्सा की गई थी । अगली तारीख 12 दिसंबर, 2020 को क्यूटिस बायोटेक ने मानव उपयोग और अन्य की वैक्सीन के लिए एक अन्य आवेदन वर्ग-5 में व्यापार चिह्न रजिस्ट्री में व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के रजिस्ट्रीकरण के लिए फाइल किया ।

10. नांदेड़ में फाइल वाद में सीरम इंस्टीट्यूट ने अपने को उपसंजात किया । इसने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 7, नियम 11 के अधीन एक आवेदन फाइल किया, जिसमें इस आधार पर याचिका को खारिज करने की ईप्सा की गई थी कि वाद व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 की धारा 132(2) के अधीन पोषणीय नहीं था और

वाद को वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 के अधीन फाइल किया जाना चाहिए था । आवेदन पर सुनवाई हुई, लेकिन न्यायालय द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया ।

11. तारीख 4 जनवरी, 2021 को क्यूटिस बायोटेक ने वर्तमान वाणिज्यिक वाद सं. 1/2021 को पुणे के जिला न्यायालय (वाणिज्यिक न्यायालय) में अस्थायी व्यादेश के आवेदन के साथ फाइल किया । तारीख 20 जनवरी, 2021 को क्यूटिस बायोटेक ने नांदेड़ में फाइल वाद को वापस लेने के लिए आवेदन फाइल किया । सीरम इंस्टीट्यूट ने आवेदन पर अपना उत्तर फाइल किया और उक्त पर प्रतिवाद किया ।

12. जिला न्यायाधीश, पुणे ने व्यादेश आवेदन पर सुनवाई की । जिला न्यायाधीश ने पाया कि सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा क्यूटिस बायोटेक के कारबार को चला देने या उसका अपवर्तन करने की कोई दुर्भाग्यपूर्ण प्रवंचना नहीं की गई थी । क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पाद भिन्न-भिन्न हैं । व्यापार प्रणाली भिन्न थी । वहां पर उपभोक्ताओं के मन में किसी भ्रम की स्थिति उत्पन्न होने का कोई साक्ष्य नहीं था । क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पादों का उपयोग भिन्न-भिन्न उद्देश्यों के लिए किया गया था और उत्पादों का दृश्य रूप भी भिन्न था । जिला न्यायालय ने इस प्रकार के व्यादेश को प्रदान करने की विविक्षा पर भी विचार किया । न्यायालय ने महामारी द्वारा उत्पन्न प्रास्थिति और जन साधारण के लिए वैक्सीन के महत्व पर विचार किया । जिला न्यायालय ने तारीख 30 जनवरी, 2021 के आक्षेपित आदेश द्वारा अंतरिम आवेदन को खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर क्यूटिस बायोटेक ने अधिनियम, 2015 की धारा 13 के अधीन इस अपील को फाइल किया है ।

13. चला देने के मामले में व्यादेश देने के लिए व्यादेश के दोनों घटक अर्थात् प्रथमदृष्ट्या मामला और सुविधा की दृष्टि को आवेदक के पक्ष में विद्यमान होना चाहिए । न्यायालय को इससे संतुष्ट होना होगा कि वाद में गंभीर प्रश्न है जिनका वाद में विचारण करना है तथा आवेदक को इससे अपूरणीय क्षति होगी और आवेदक को इससे अत्यधिक

कठिनाई भी होगी और इसलिए एक अंतरिम व्यादेश आवश्यक है । आवेदक को एक मजबूत मामला बनाना होगा कि प्रत्यर्थी का कार्य उसके कारबार को तात्विक रूप से हानि पहुंचाएगा और उसके कारबार को आसन्न संकट है । कुछ मामलों में व्यादेश देने से या इनकार करने से सामान्य जनहित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है यह भी एक सुसंगत कारक है ।

14. प्रथमदृष्ट्या मामले पर ध्यान देने और सुविधा की दृष्टि का अवधारण करने पर सुसंगत कारकों पर संचयी रूप से विचार करना होगा । क्यूटिस बायोटेक ने जिला न्यायालय द्वारा पारित आदेश की आलोचना की ईप्सा ऐसे आधार पर पृथक् रूप से व्यवहार करते हुए की है जैसे वह आधार एक स्वतंत्र आधार है । लेकिन जैसाकि सीरम इंस्टीट्यूट ने भी ठीक ही बताया है, सभी कारकों पर संचयी रूप से विचार करना होगा ।

15. चला देने की कार्रवाई का आधार गुडविल का विद्यमान होना है । इसके अतिरिक्त यह भी सुसंगत है कि किसने पहले चिह्न की कल्पना की और उसे अपनाया है । क्यूटिस बायोटेक ने वादपत्र और अंतरिम आवेदन में अपने पक्षकथन में व्यापार चिह्न की गुडविल और उसका पूर्विक उपयोग किए जाने का अभिवाक् किया है । जैसाकि अभिवाक् किया गया है, क्यूटिस बायोटेक का मामला गुडविल और पूर्विक उपयोग से संबंधित इस प्रकार है कि क्यूटिस बायोटेक औषधीय उत्पादों का विक्रय कर रहा है और इसने अपना कारबार 2013 में प्रारंभ किया था । तारीख 25 अप्रैल, 2020 को क्यूटिस बायोटेक ने शब्द 'कोविशील्ड' को गढ़ा और इसका औषधीय तथा अन्य संबंधित उत्पादों में उपयोग करने का विनिश्चय किया । ऐसा कोई रजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न न मिलने पर क्यूटिस बायोटेक ने तारीख 29 अप्रैल, 2020 को इस व्यापार चिह्न के रजिस्ट्रीकरण के लिए वर्ग-5 में पशु चिकित्सा, आयुर्वेदिक, एलोपैथिक ओषधि तथा औषधीय निर्मित सामग्री, मनुष्यों तथा जानवरों के लिए विटामिन और खाद्य आहार संपूरक के लिए आवेदन फाइल किया । तारीख 30 मई, 2020 से क्यूटिस बायोटेक को अपने विनिर्माताओं से एंटीसेप्टिक और तरल विसंक्रामक, सैनिटाइजर

जैसे उत्पादों पर 'कोविशील्ड' ब्रांड लगे हुए प्राप्त हो रहे थे । क्यूटिस बायोटेक ने भारत के विभिन्न राज्यों में उत्पादों का विक्रय किया । व्यापारिक समुदाय और औसत उपभोक्ताओं द्वारा इसके उत्पादों को क्रय किया गया और ये उत्पाद विज्ञापन के माध्यम से लोकप्रिय होते हैं । व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' क्यूटिस बायोटेक का एक सुभिन्न उत्पाद और कारबार बन गया है । तारीख 30 मई, 2020 से 31 दिसंबर, 2020 तक सात माह के लिए क्यूटिस बायोटेक का व्यापारवर्त 16,00,152/- रुपए था और इसने उत्पादों के विज्ञापन पर 1,22,500/- रुपए व्यय किए हैं ।

16. हमने पूर्विक उपयोगकर्ता के संबंध में क्यूटिस बायोटेक के अभिवाकों पर विचार किया है । वादपत्र में यह प्रकथन किया गया है कि तारीख 30 मई, 2020 से क्यूटिस बायोटेक को उसके विनिर्माताओं से 'कोविशील्ड' ब्रांड धारक उत्पाद प्राप्त हो रहे थे, यह सिद्ध नहीं हुआ है । किसी भी विवरण को प्रगणित नहीं किया गया है । विवरण आवश्यक है क्योंकि क्यूटिस बायोटेक के मामले का आधार यह है कि वह एक पूर्विक उपयोगकर्ता है और उसने गुडविल अर्जित कर ली है । माल और सेवा कर के अधीन तारीख 30 मई, 2020 तक के कुछ बीजकों को अभिलेख पर दिया गया है । उसमें से एक हिमाचल के मैसर्स समरवीर बायोटेक प्राइवेट लिमिटेड से संबंधित था । यह बीजक छह उत्पादों को निर्दिष्ट करता है । उनमें से पांच हस्त वन ओषधि सैनिटाइजर हैं और एक प्रिविष्टि 'कोविशील्ड' की है, लेकिन इसमें कोई विवरण नहीं दिया गया है । सितंबर, 2020 के पश्चात् के कुछ माल और सेवा कर बीजक अभिलेख पर हैं । इन बीजकों को स्वयं क्यूटिस बायोटेक द्वारा श्री वारु ओषधि और गौरव मेडिकल्स जैसे केवल नामों को निर्दिष्ट करते हुए बनाया गया था । कुछ बीजकों का कोई नाम नहीं है । अभिलेख पर दिया गया एक दस्तावेज अनंतिम रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र है । यहां परिसर के परिवर्तन विषयक एक दस्तावेज और चार्टर्ड एकाउंटेंट द्वारा कर की संपरीक्षा रिपोर्ट विषयक एक दस्तावेज प्रस्तुत किया गया है । क्यूटिस बायोटेक ने इन साक्ष्यों को अभिलेख पर यह प्रदर्शित करने के लिए प्रस्तुत किया है कि उसने सीरम इंस्टीट्यूट के आवेदन तारीख 6 जून, 2020 के पूर्व में ही व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' का प्रयोग किया था ।

हमें मामले को प्रथमदृष्ट्या सिद्ध करने के लिए पर्याप्त ब्यौरे नहीं मिले हैं ।

17. दूसरी ओर, सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा एक विस्तृत उत्तर फाइल किया गया है, जिसमें पूर्विक उपयोगकर्ता और सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा चिह्न को अपनाए जाने के तथ्य को अभिलेख पर यह कैसे कहा जा सकता है कि क्यूटिस बायोटेक का यह दावा गलत है कि वह पूर्विक उपयोगकर्ता है । सीरम इंस्टीट्यूट का मामला यह है कि उसने मार्च, 2020 में ही 'कोविशील्ड' चिह्न अपना लिया था । उस उद्देश्य के लिए 'कोविशील्ड' वैक्सीन के लिए पैकेजिंग सामग्री को अभिप्राप्त करने के लिए क्रय विभाग के बीच एक अंतर-कार्यालय संसूचना अभिलेख पर है । तारीख 25 मई, 2020 को अनूप प्रिंटर को 'कोविशील्ड' विषयक पैकेजिंग सामग्री का नमूना वितरित किया गया । इसके अतिरिक्त व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के अंतर्गत पैकेजिंग सामग्री को उपाप्त करने के लिए सीरम इंस्टीट्यूट के क्रय विभाग का तारीख 26 मार्च, 2020 का अंतर-कार्यालय संसूचना अभिलेख पर है, जिसमें तारीख 27 मार्च, 2020 का अनूप प्रिंटर्स का पृष्ठांकन किया गया है । सीरम इंस्टीट्यूट ने मार्च, 2020 में एक वक्तव्य जारी किया था कि वे कोविड-19 वैक्सीन पर लगभग सौ मिलियन अमरीकी डालर का विनिधान कर रहे हैं । अप्रैल, 2020 में एक अन्य वक्तव्य जारी किया था कि सीरम इंस्टीट्यूट ने एस्ट्रा जेनेका के सहयोग से कोरोनावायरस वैक्सीन का उत्पादन करने की योजना बनाई है । ऑक्सफोर्ड कोरोनावायरस वैक्सीन का परीक्षण तारीख 23 अप्रैल, 2020 के आस-पास प्रारंभ हुआ था । इसके पश्चात् सीरम इंस्टीट्यूट के परीक्षण के संबंध में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री ने तारीख 25 अप्रैल, 2020 को आगे वक्तव्य दिया था । तारीख 3 मई, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट को वायरस बीज और कोशिका अधिकोश ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से प्राप्त हुए और भारत के औषधीय महानियंत्रक द्वारा इसकी अनुज्ञा दी गई थी । इसलिए जब तारीख 6 जून, 2020 को सीरम इंस्टीट्यूट ने 'कोविशील्ड' के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन किया तो मीडिया में इसकी व्यापक जानकारी हुई । सीरम इंस्टीट्यूट के इन दस्तावेजों पर

क्यूटिस बायोटेक का उत्तर यह है कि ये दस्तावेज गढ़े हुए हैं । इस प्रकार के एकागी प्रतिविरोध को स्वीकार करना संभव नहीं है क्योंकि आगे के वर्णन से प्रदर्शित होता है कि कोई भी दस्तावेज अलग से प्रस्तुत नहीं किया गया था ।

18. पूर्व में सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा इस व्यापार चिह्न को अपनाए जाने तथा उपयोग किए जाने का न केवल पर्याप्त साक्ष्य है बल्कि यह भी साक्ष्य है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने बिना व्यवधान के अपने इस उपयोग को जारी रखा । यह अभिलेख पर है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने प्रति माह 'कोविशील्ड' वैक्सीन की 60 मिलियन खुराक का उत्पादन किया है और भारत सरकार को 98 मिलियन खुराक की आपूर्ति भी की है । सीरम इंस्टीट्यूट ने व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के अंतर्गत वैक्सीन के विनिर्माण के लिए आवश्यक विभिन्न अनुज्ञाओं और अनुज्ञप्तियों को अभिप्राप्त किया है । अभिप्राप्त की गई अनुज्ञाओं और अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का ब्यौरा सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा फाइल किए गए कथन में दिया गया है । ये ब्यौरे इस प्रकार हैं – व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के साथ वैक्सीन के विनिर्माण में आवश्यक प्रक्रिया के अनुरूप में ओषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 नियम 1945 और नवीन ओषधि और नैदानिक परीक्षण नियम 2019 का अनुपालन करना सम्मिलित है । विनिर्माण की विन्यास योजना की स्वीकृति को मंजूर करना ; विशेषज्ञों और ओषधि निरीक्षक के समूह द्वारा परिसर का संयुक्त निरीक्षण करना ; ओषधि और प्रसाधन सामग्री नियम की अनुसूची एम और अनुसूची एल-I ; अधिकथित जीएमपी/जीएलपी अपेक्षाओं का अनुपालन करने वाले परिसर की स्थापना करना ; वैक्सीन के विनिर्माण और गुणवत्ता नियंत्रक के लिए अर्हित तकनीकी कर्मचारियों को लगाना ; मास्टर सूत्र निर्मित करना ; मानक संक्रिया प्रक्रियाओं को विरचित करना ; सक्षम तकनीकी कर्मचारिवृंद के पर्यवेक्षण में विस्तृत बैच विनिर्माण प्रोटोकॉल के अनुसार बैचों का विनिर्माण करना ; मानकों के साथ उत्पादित वैक्सीन के प्रत्येक बैच के नमूने को राष्ट्रीय नियंत्रण प्रयोगशाला में प्रत्येक बैच के परीक्षण और प्रमाणन के लिए भेजना और

बैच को सीधे बाजार में या सरकारी स्वास्थ्य प्राधिकारियों के माध्यम से अंतिम उपयोगकर्ताओं को वितरित करना । यह कथन किया गया है कि 'कोविशील्ड' वैक्सीन का परिवर्धन करने के लिए विभिन्न आज्ञापक नैदानिक प्रक्रमों को पूर्ण किया गया था । इसमें पूर्व नैदानिक (जीव परीक्षण) अध्ययन, पूर्व नैदानिक डेटा का संकलन और चरण-1 के लिए मनुष्यों पर इसका अनुप्रयोजन करना सम्मिलित है । कई विनियामक उपायों/प्रक्रियाओं का अनुपालन करते हुए वैक्सीन की सुरक्षा की जांच के लिए 2 हज़ार स्वस्थ सेवकों पर आगे का नैदानिक परीक्षण चरण-1 किया गया । वैक्सीन का नैदानिक परीक्षण चरण-II कई विनियामक उपायों/प्रक्रियाओं का अनुपालन करते हुए उसकी विस्तारित सुरक्षा और प्रभावकारिता की जांच के लिए लगभग पांच सौ स्वस्थ स्वयं सेवकों पर किया गया । एक हजार से अधिक स्वसेवकों पर वैक्सीन का नैदानिक परीक्षण चरण-III उसकी सुरक्षा और प्रभावकारिता की पुष्टि करने के लिए किया गया तथा इस प्रकार से उत्पन्न/संकलित विशाल डेटा को प्रस्तुत और विशेषज्ञ समिति/भारत के ओषधि महानियंत्रक द्वारा इसका पुनर्विलोकन करने और अनुमोदन करने के लिए इसे उन्हें सुपुर्द किया गया । ये घटनाएं चिह्न का उपयोग करते हुए वैक्सीन को विकसित करने में सीवनहीन गतिविधि की एक श्रृंखला बनाती है । इसलिए यह स्पष्ट है कि मार्च, 2020 से ही सीरम इंस्टीट्यूट 'कोविशील्ड' चिह्न का उपयोग करने की दिशा में कदम उठा रहा था । अंतर-विभागीय पत्राचार के अलावा सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा वैक्सीन को विकसित करने की बात मीडिया में होने से इनकार नहीं किया जा रहा है । अभिलेख पर उपस्थित साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि सीरम इंस्टीट्यूट ने 'कोविशील्ड' शब्द को चुना था और इसके विकास और विनिर्माण की दिशा में पर्याप्त कदम उठाए थे । इस प्रकार से सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा चिह्न को पूर्व में अपनाए जाने को प्रदर्शित करने के लिए अभिलेख पर यथोचित और विश्वसनीय सामग्री उपस्थित है । इस निष्कर्ष में कोई विकृति नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक 'कोविशील्ड' शब्द का पूर्विक उपयोगकर्ता होने का दावा नहीं कर सकता है ।

19. गुडविल सिद्ध करने के लिए क्यूटिस बायोटेक ने यह दावा किया है कि तारीख 30 मई, 2020 से तारीख 31 दिसंबर, 2020 तक उसका आवर्तन 16 लाख रुपए था और उसने विज्ञापनों पर 1.2 लाख रुपए व्यय किए थे । यदि इसे सात माह में विभाजित किया जाए तो यह रकम करीब 2 लाख रुपए प्रति माह से कम आएगी । गुडविल बनाने के लिए आवर्तन का बहुत अधिक होना आवश्यक नहीं है । यदि आवेदक का छोटा कारबार है, तो इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि चूंकि उसके कारबार का पर्याप्त आवर्तन नहीं है इसलिए उसने गुडविल अर्जित नहीं की है । लेकिन जैसाकि सीरम इंस्टीट्यूट ने ठीक दलील दी है कि क्यूटिस बायोटेक ने हस्त सैनिटाइजर्स और विसंक्रामकों का विक्रय उस समय से किया है, जब महामारी के दौरान इन उत्पादों की उच्च मांग थी तो इसलिए सात माह में 16 लाख रुपए का आवर्तन महत्वपूर्ण नहीं है । वर्तमान मामले में यदि आवर्तन के पहलू को अन्य कारकों के साथ संचयी रूप से लिया जाता है, तो यह सुसंगत हो जाता है । आवर्तन की इस छोटी-सी रकम को क्यूटिस बायोटेक के पूर्विक उपयोगकर्ता के दावे के साथ देखा जाना चाहिए । जैसाकि पूर्व में अभिनिर्धारित किया गया था । अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से पूर्विक उपयोग और चिह्न को अपनाया जाना प्रदर्शित नहीं होता है । हमारे अनुसार अभिलेख पर यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक ने व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के संबंध में पर्याप्त गुडविल बना ली थी । अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए इस साक्ष्य से, क्यूटिस बायोटेक द्वारा अपने इस प्राख्यान कि वह चिह्न का पूर्विक उपयोगकर्ता था और उसने गुडविल अर्जित कर ली थी, सिद्ध करने में स्पष्ट रूप से विफल हो गया । जिला न्यायालय के इस निष्कर्ष में कोई विकृति नहीं है कि क्यूटिस बायोटेक ने व्यादेश को प्रदान किए जाने के लिए इस परीक्षण को सिद्ध नहीं किया था ।

20. अगला पहलू प्रवंचना की संभाव्यता है, और क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पाद एक ही क्षेत्र से हैं । यह ग्राहकों के मन में दुर्व्यपदेशन और भ्रम के संदर्भ में सुसंगत है । यदि किसी प्रवंचना की कोई अधिसंभाव्यता नहीं है, तो यह व्यादेश को प्रदान करने से इनकार

करने का एक कारक होगा । औसत बुद्धिमत्ता और अपूर्ण स्मरण वाले ग्राहक के मन में भ्रम उत्पन्न होना चाहिए । वास्तविक भ्रम को स्थापित करना आपेक्षित नहीं है और भ्रम की संभाव्यता चला देने के अवयवों को स्थापित करने के लिए पर्याप्त है । यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी के कार्य से प्रवंचना या भ्रम होने की संभावना है, जो चला देने के लिए प्रेरित करता है तो इसे विशिष्ट तथ्यों पर निर्भर होना होगा । यह पता लगाने के लिए एक सामान्य विवेक के दृष्टिकोण को अपनाना होगा कि क्या सीरम इंस्टीट्यूट का आचरण क्यूटिस बायोटेक के माल को अपने माल के रूप में चला देने में प्रकल्पित होता है या कम से कम ग्राहकों के मन में ऐसा भ्रम उत्पन्न करता हो जो क्यूटिस बायोटेक के व्यय पर सीरम इंस्टीट्यूट को लाभ पहुंचाता हो ।

21. जिला न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उपभोक्ता भिन्न-भिन्न हैं और उनकी व्यापार प्रणाली भी भिन्न है । क्यूटिस बायोटेक के अनुसार यह निष्कर्ष इसलिए गलत है क्योंकि उत्पादों के बीच व्यापार संबंध, पक्षकारों के औषधीय उत्पाद भ्रम को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त हैं और यदि व्यापार प्रणाली भिन्न भी है तो जब तक कि चिह्न इतना समरूप है कि जिससे भ्रम हो सके तो चला देने का मामला बनता है । यह प्रतिवाद किया गया कि जब अंतरिम प्रक्रम के व्यादेश की ईप्सा की जाती है, तो वास्तविक भ्रम को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होता है । सर्वप्रथम यह ध्यान में रखना होगा कि चला देने की क्रिया को स्थापित करने के लिए आवश्यक सामग्री को संचयी रूप से और परिस्थितियों की समग्रता में लिया जाना है । दूसरा, औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम के विवाद्यक पर विचार इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए ही करना होगा। क्यूटिस बायोटेक ने यह स्थापित नहीं किया है कि वह चिह्न का एक पूर्विक उपयोगकर्ता है या उसने गुडविल अर्जित कर ली है ।

22. हम क्यूटिस बायोटेक के इस प्रतिवाद से सहमत नहीं हैं कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पादों के बीच भ्रम होने की संभावना है । सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा विनिर्मित वैक्सीन 'कोविशील्ड'

काउंटर पर उपलब्ध नहीं है । वैक्सीन को सरकारी अभिकरणों के माध्यम से प्रशासित किया जाएगा । सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पाद 'कोविशील्ड' का क्रेता भारत सरकार है । वैक्सीन का संचालन एक इंजेक्शन के माध्यम से होता है । विसंक्रामक या हस्त सैनिटाइजर की बिक्री, यद्यपि यह उसी क्षेत्र से संबंधित हो सकती है जो कि स्वास्थ्य देखभाल उत्पाद से है लेकिन इसे औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम उत्पन्न करने वाला नहीं कहा जा सकता है । इंजेक्शन के माध्यम से वैक्सीन को संचालित किया जाना सुविख्यात है । यह अभिनिर्धारित करना बहुत असुगम होगा कि अभिहित स्थानों पर सरकार द्वारा प्रशासित वैक्सीन पर तथा सैनिटाइजर उत्पादों पर व्यापार चिह्न का उपयोग करना औसत उपभोक्ताओं के मन में भ्रम उत्पन्न करेगा । दृश्य रूप से भी उत्पाद भिन्न हैं । जिला न्यायालय का यह अभिनिर्धारित करना सही था कि क्यूटिस बायोटेक और सीरम इंस्टीट्यूट के उत्पादों में कोई प्रवंचना या भ्रम की संभाव्यता नहीं होगी ।

23. वास्तव में, हमारे समक्ष क्यूटिस बायोटेक का तर्क यह संभाषण करता है कि लोग 'कोविशील्ड' चिह्न का उपयोग किए जाने से उसके उत्पादों को यह सोचकर क्रय करेंगे कि वे कोरोना वायरस से सुरक्षित हैं । क्यूटिस बायोटेक के अनुसार इसका अर्थ यह होगा कि लोग भ्रम के परिणामस्वरूप उसके उत्पादों को क्रय करेंगे । यह तर्क चला देने की धारणा के विपरीत है । यदि इस प्रकार से उत्पादों को क्रय किया जाता है, तो यह सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा उसके चिह्न 'कोविशील्ड' को लेकर उत्पन्न की गई गुडविल के कारण होगा । सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा चला देने को सिद्ध करने के लिए क्यूटिस बायोटेक को यह दिखाना होगा कि सीरम इंस्टीट्यूट क्यूटिस बायोटेक की गुडविल के आधार पर अपने माल को क्यूटिस बायोटेक के माल की तरह चला रहा है । इसलिए क्यूटिस बायोटेक द्वारा दिया गया यह तर्क आत्म-नाशक है ।

24. क्यूटिस बायोटेक ने तब प्रतिवाद की ईप्सा की क्योंकि सीरम इंस्टीट्यूट अपनी वैक्सीन के लिए 'कोविशील्ड' वैक्सीन का उपयोग कर रहा है, क्यूटिस बायोटेक के पूर्तिकारों ने क्यूटिस बायोटेक के माल की

पूर्ति रोक दी जो न केवल क्यूटिस बायोटेक के कारबार में नुकसान कारित कर रहा है बल्कि यह क्यूटिस बायोटेक के विकास को भी निर्बल करेगा । यहां पर **एलोरा इंडस्ट्रीज** बनाम **बनारसी दास गोयल और अन्य**[1] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के विनिश्चय का अवलंब लिया है । इस प्रकार के आधार का समर्थन करने के लिए ऐसे प्राख्यान के लिए एक तथ्यात्मक आधार विद्यमान होना चाहिए । उसके लिए हम अंतरिम आवेदन और वादपत्र में किए गए अभिवाक् पर विचार करते हैं । भविष्य के नुकसान और विकास की हानि का यह मामला इस प्राख्यान पर आधारित है कि तारीख 7 दिसंबर, 2020 को क्यूटिस बायोटेक के व्यापार भागीदारों में से एक ने उत्पन्न होने वाले भ्रम का हवाला देते हुए मल्टीविटामिन इंजेक्शन के विनिर्माण के लिए तारीख 15 अगस्त, 2020 की मांग की पूर्ति करने से इनकार कर दिया । यह ईमेल तारीख 19 अगस्त, 2020 को गीता जैन द्वारा भेजे गए एक ईमेल को निर्दिष्ट करता है और इसका उत्तर तारीख 7 दिसंबर, 2020 को दिया गया, जिसमें कहा गया कि माल की पूर्ति करना संभव नहीं है क्योंकि लोगों को लग सकता है कि इंजेक्शन नकली है । ईमेलों का विनिमय लगभग छह माह के अंतराल में हुआ था । ईमेलों के एकल विनिमय की अधिप्रमाणिकता शंकास्पद है ।

25. सर्वप्रथम क्यूटिस बायोटेक का भविष्य में नुकसान का मामला वास्तव में सिद्ध नहीं होता है । दूसरा चूंकि सीरम इंस्टीट्यूट चिह्न का पूर्विक उपयोगकर्ता है और उसने गुडविल अर्जित कर ली है और इस कारण से उपभोक्ता अनभिज्ञता से क्यूटिस बायोटेक के माल को क्रय नहीं कर रहे हैं तो इसे सीरम इंस्टीट्यूट द्वारा चला देने का मामला नहीं माना जा सकता है । **एलोरा इंडस्ट्रीज** (उपरोक्त) वाले मामले में किया गया विनिश्चय जिसका अवलंब लिया गया है वह भिन्न तथ्यों और परिस्थितियों में दिया गया है । उक्त विनिश्चय में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने चला देने के दावे को आधार

[1] आई. एल. आर. (1979) II दिल्ली 481 = ए. आई. आर. 1980 दिल्ली 254.

बनाने के लिए एक बुनियाद के रूप में गुडविल को सिद्ध करने की आवश्यकता पर बल दिया है । प्रथमत: गुडविल और पूर्विक उपयोगकर्ता को दिखाए बिना, भावी विक्रय की हानि या संभावित क्षति को इस मामले में एक अकेला कारक इस आधार पर नहीं माना जा सकता है कि यह विधि में उपलब्ध एक कारक है ।

26. क्यूटिस बायोटेक ने वर्ग-5 में तारीख 29 अप्रैल, 2020 को रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन किया गया था और उसके उत्पाद सैनिटाइजर तरल रोगाणुरोधक विसंक्रामक आदि थे । स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा सीरम इंस्टीट्यूट की वैक्सीन 'कोविशील्ड' को निर्दिष्ट करते हुए तारीख 10 दिसंबर, 2020 को कोविड-19 प्रक्रिया प्रकाशित किए जाने के पश्चात् क्यूटिस बायोटेक द्वारा तारीख 12 दिसंबर, 2020 को एक अन्य आवेदन व्यापार चिह्न 'कोविशील्ड' के रजिस्ट्रीकरण के लिए वर्ग-5 में वैक्सीन के लिए फाइल किया गया । इस प्रकार इसकी अनुभूति होने पर कि तारीख 11 दिसंबर, 2020 चला देने के लिए जो वाद फाइल किया गया है उसके साथ वैक्सीन रजिस्ट्रीकरण का आवेदन फाइल नहीं किया गया है । क्यूटिस बायोटेक ने बाद में व्यापार चिह्न के रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन फाइल कर दिया । हमारे अनुसार क्यूटिस बायोटेक का यह आचरण सद्भावपूर्वक प्रतीत नहीं होता है । हमें व्यादेश के उनके दावे पर विचार करते समय इस कारक पर भी विचार करना होगा ।

27. क्यूटिस बायोटेक के इन सुसंगत तर्कों को ध्यान में रखते हुए कि सीरम इंस्टीट्यूट को क्यूटिस बायोटेक के आवेदन का ज्ञान था और उसने चिह्न के विभिन्न रूपों के लिए आवेदन किया था तथा उसने उससे संबंधित प्रतिकूल कथन किया जो चला देने की कार्रवाई अर्थात् पूर्विक उपयोग और गुडविल के अर्जन को की बुनियाद के लिए ज्यादा महत्व नहीं रखते हैं क्यूटिस बायोटेक द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है । दूसरी ओर, सीरम इंस्टीट्यूट ने इन संघटकों पर दावा किया है किन्तु अभी तक सीरम इंस्टीट्यूट ने चला देने की कार्रवाई से क्यूटिस बायोटेक को अवरुद्ध करने के लिए कोई भी कार्यवाही नहीं की है ।

28. चूंकि क्यूटिस बायोटेक के पक्ष में प्रथमदृष्ट्या कोई मामला

नहीं है, इसलिए सीरम इंस्टीट्यूट को खातों के अनुरक्षण का निदेश देने सम्बन्धी उसकी प्रार्थना को मंजूर नहीं किया जा सकता है । खातों के अनुरक्षण का निदेश देना नैत्यिक आदेश नहीं है और जब क्यूटिस बायोटेक द्वारा प्रथमदृष्ट्या कोई मामला सिद्ध नहीं किया गया है तो इस आदेश को जारी नहीं किया जा सकता है ।

29. सीरम इंस्टीट्यूट ने अपने लिखित निवेदन के माध्यम से कुछ तथ्यों को प्रस्तुत किया है, जो विवादग्रस्त नहीं हैं । तारीख 4 जनवरी, 2021 को वर्तमान वाद को फाइल किए जाने के पश्चात् तारीख 16 जनवरी, 2021 से सीरम इंस्टीट्यूट की वैक्सीन 'कोविशील्ड' का प्रशासन आरंभ हो गया । भारत सरकार ने एक व्यापक वैक्सीन का प्रशासन कार्यक्रम आरंभ किया है । भारत सरकार ने प्रथम चरण में वैक्सीन के लिए तीन सौ मिलियन लोगों की पहचान की और 'कोविशील्ड' वैक्सीन के लिए ग्यारह मिलियन खुराक का पहला आदेश दिया है । नियत सप्ताह के पश्चात् दूसरी खुराक दी जाएगी । तारीख 1 मार्च, 2021 को सह-रुग्णता वाले साठ वर्ष से अधिक आयु और पैंतालीस वर्ष की आयु वाले लोगों के लिए टीकाकरण अभियान आरंभ किया गया है । सीरम इंस्टीट्यूट की 'कोविशील्ड' वैक्सीन की पूर्ति राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के माध्यम से की गई है । तारीख 16 मार्च, 2021 तक भारत सरकार को 'कोविशील्ड' की 6 करोड़ 60 लाख खुराक की पूर्ति की जा चुकी है । इसके अलावा 72 से अधिक देशों को लगभग 5 करोड़ 90 लाख खुराक की पूर्ति की गई है । भारत सरकार ने सीरम इंस्टीट्यूट की 'कोविशील्ड' वैक्सीन की 10 करोड़ खुराक के लिए एक और क्रय आदेश दिया है । सीरम इंस्टीट्यूट ने अभी तक 37 हज़ार 507 लाख रुपए का विक्रय 'कोविशील्ड' की वैक्सीन से प्राप्त किया है । सीरम इंस्टीट्यूट ने अभिलेख पर यह भी प्रस्तुत किया है कि उसने विकास, अनुसंधान पर 28 करोड़ रुपए व्यय किए हैं और आगे 20 करोड़ रुपए व्यय करने की प्रत्याशंका है । इस तथ्यों के साथ, सुविधा का संतुलन क्यूटिस बायोटेक के पक्ष में नहीं है । सीरम इंस्टीट्यूट के विरुद्ध व्यादेश को प्रदान करने पर उसके कारबार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा ।

30. सुविधा की दृष्टि को निश्चित करने के लिए एक और पहलू पर विचार किया जाना है । कोराना वायरस का प्रतिकार करने के लिए 'कोविशील्ड' एक टीका है और यह व्यापक रूप से ज्ञात है । सीरम इंस्टीट्यूट को उसके टीके 'कोविशील्ड' चिह्न के उपयोग को बंद करने का निदेश देने वाला अस्थायी व्यादेश राज्य के वैक्सीन प्रशासन कार्यक्रम में भ्रम और भंग कारित करेगा । इस प्रकार इस मामले में व्यादेश प्रदान करने से वाद के पक्षकारों से परे बड़े पैमाने पर अनुचित प्रभाव पड़ेगा ।

31. वैवेकिक आदेश के विरुद्ध अपील का विस्तार अब सुस्थापित हो गया है । अपील न्यायालय, विचारण न्यायालय के विवेकाधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करेगा और इसे तब तक प्रतिस्थापित नहीं करेगा जब तक कि विचारण न्यायालय का विवेकाधिकार मनमाना या अनुचित न हो या जहां विचारण न्यायालय ने व्यादेश को नियंत्रित करने वाले विधि के सुस्थापित सिद्धांतों के विपरीत आदेश पारित न किया हो । अपील न्यायालय साधारणत: हस्तक्षेप नहीं करेगा यदि विचारण न्यायालय के द्वारा निकाला गया निष्कर्ष युक्तियुक्त रूप से संभव है । केवल इसलिए कि यदि वह विचारण के प्रक्रम पर मामले पर विचार करता तो वह एक विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचता तो यह अपीली न्यायालय के लिए हस्तक्षेप करने का आधार नहीं है । यदि आदेश मनमाना या अनुचित है तो निचले न्यायालय के विवेकाधिकार से पूर्ण अनुवर्तन करना अपेक्षित नहीं है । लेकिन जैसाकि हमारी उपरोक्त चर्चा से प्रदर्शित होता है कि व्यादेश प्रदान करने से इनकार करने में विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा उपयोग किया गया विवेकाधिकार मनमाना या अनुचित नहीं है । यहां तक कि यदि प्रथमत: साक्ष्य को भी देखा जाए तो अनुतोष प्रदान करने के लिए कोई मामला सिद्ध नहीं होता है ।

32. अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अम./अस.

भारती आर्य

बनाम

राकेश आर्य

(2021 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 390)

तारीख 12 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति जी. एस. अहलूवालिया

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13 ख(2) – पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद – शीतलन (प्रतीक्षा) अवधि का अधित्याग – शीतलन अवधि को तब तक अधित्यजित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि पक्षकारों के पुनर्वास की दृढ़ संभावना हो ।

इस मामले में याची के काउंसेल द्वारा यह निवेदन किया गया है कि याची और प्रत्यर्थी के बीच विवाह तारीख 21 अप्रैल, 2007 को हुआ था और वे पारस्परिक मतभेद के कारण, पिछले तीन वर्षों से अलग रह रहे हैं और तद्नुसार, उन्होंने पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद के लिए तारीख 11 अगस्त, 2020 को हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(ख) के अधीन आवेदन फाइल किया । तारीख 18 दिसंबर, 2020 को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18 के नियम 4 के अधीन शपथपत्र फाइल किए गए थे । उसी दिन, पक्षकारों द्वारा यह प्रार्थना की गई थी कि उनके आवेदन पर अंतिम रूप से निर्णय लिया जा सकता है, यद्यपि विचारण न्यायालय ने उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया और उनके द्वितीय कथन अभिलिखित किए जाने के लिए मामले को तारीख 30 जून, 2021 के लिए स्थगित कर दिया । याची के काउंसेल ने निवेदन किया कि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(ख) का उपबंध आज्ञापक नहीं है अपितु यह निर्देशात्मक प्रकृति का है, इसलिए, निचले न्यायालय को छह महीनों के लिए मामले को स्थगित नहीं करना चाहिए था और यह कि पारस्परिक सहमति से डिक्री मंजूर करनी चाहिए थी । यह भी निवेदन किया गया है कि चूंकि पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद मंजूर करने के लिए आवेदन तारीख 11 अगस्त, 2020 को फाइल किया गया था इसलिए, छह माह की अवधि पहले ही पूरी हो

चुकी है । निचले न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर याची ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यदि याची द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर (जिसे हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन फाइल किया जाना चाहिए था) विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि पक्षकारों की एक 12 वर्ष की पुत्री है । इसके अतिरिक्त, आवेदन में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पक्षकारों से आनुकल्पिक पुनर्वास की संभावना की जा सके । हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के उपबंधों का मूल उद्देश्य प्रतिवाद करने वाले पक्षकारों को अपने पृथक्करण के निर्णय पर और अधिक विचार करने का अवसर देना है । हालांकि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के उपबंध आज्ञापक नहीं हैं अपितु निदेशात्मक प्रकृति के हैं, फिर भी शीतलन अवधि (प्रतीक्षा अवधि) को तब तक अधित्यजित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि पक्षकारों के पुनर्वास की दृढ़ संभावना न हो । वैवाहिक जीवन को बचाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए । आगे आवेदन में ऐसा कुछ भी नहीं है कि यदि शीतलन अवधि का अधित्यजन कर नहीं दिया जाता है, तो यह पक्षकारों की पीड़ा को लंबे समय तक बढ़ा देगा । इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का यह विचार है कि याची हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन प्रदत्त की गई छह महीनों की शीतलन अवधि में अधित्यजन करने के लिए एक दृढ़ मामला बनाने में विफल रहा है । तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज करके कोई भूल नहीं की । (पैरा 5)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] (2017) 3 एस. एस. सी. 746 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 4417 :
अमरदीप सिंह बनाम **हरवीन कौर** । 4

सिविल रिट अधिकारिता : 2021 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 390.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सुश्री यशोधरा पुनिया

प्रत्यर्थी की ओर से –

आदेश

याची की एडवोकेट सुश्री यशोधरा पुनिया है ।

2. यह याचिका भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन कुटुम्ब न्यायालय (लिंक) ग्वालियर द्वारा मामला सं. 125 ए/220 (एच.एम.ए.) में पारित तारीख 20 जनवरी, 2021 के उस आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा याची की ओर से हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख)2 के अधीन फाइल आवेदन को खारिज कर दिया गया था ।

3. याची के काउंसेल द्वारा यह निवेदन किया गया है कि याची और प्रत्यर्थी के बीच विवाह तारीख 21 अप्रैल, 2007 को हुआ था और वे पारस्परिक मतभेद के कारण, पिछले तीन वर्षों से अलग रह रहे हैं और तद्नुसार, उन्होंने पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद के लिए तारीख 11 अगस्त, 2020 को हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(ख) के अधीन को आवेदन फाइल किया । तारीख 18 दिसंबर, 2020 को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18 के नियम 4 के अधीन शपथपत्र फाइल किए गए थे । उसी दिन, पक्षकारों द्वारा यह प्रार्थना की गई थी कि उनके आवेदन पर अंतिम रूप से निर्णय लिया जा सकता है, यद्यपि विचारण न्यायालय ने उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया और उनके द्वितीय कथन अभिलिखित किए जाने के लिए मामले को तारीख 30 जून, 2021 के लिए स्थगित कर दिया । याची के काउंसेल ने निवेदन किया कि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(ख)2 का उपबंध आज्ञापक नहीं है अपितु यह निर्देशात्मक प्रकृति का है, इसलिए, निचले न्यायालय को छह महीनों के लिए मामले को स्थगित नहीं करना चाहिए था और यह कि पारस्परिक सहमति से डिक्री मंजूर करनी चाहिए थी । यह भी निवेदन किया गया है कि चूंकि पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद मंजूर करने के लिए आवेदन तारीख 11 अगस्त, 2020 को फाइल किया गया था इसलिए, छह माह की अवधि पहले ही पूरी हो चुकी है ।

3क. याची के विद्वान् काउंसेल को सुना गया है ।

4. उच्चतम न्यायालय ने **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर**[1] वाले मामले में, निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया है कि :–

"19. वर्तमान परिस्थिति में भी उपर्युक्त को लागू करते हुए हमारा यह मत है कि यदि ऐसे मामले को विचारण करने वाले न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मामले में धारा 13(ख)2 के अधीन कानूनी अवधि का अधित्यजन किया जा सकता है तब वह निम्नलिखित पर विचार करने के पश्चात् ही ऐसा कर सकता है –

(i) धारा 13ख (1) के अधीन पक्षकारों के पृथक रहने की एक वर्ष की कानूनी अवधि सहित धारा 13ख(2) के अधीन विनिर्दिष्ट छह मास की कानूनी अवधि प्रथम समवेदन के पहले ही समाप्त हो चुकी है ;

(ii) सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 32-क के नियम 3/ हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 23(2)/कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 9 के निबंधनों में पक्षकारों के पुनर्मिलन के लिए किए गए प्रयासों सहित मध्यस्थता/सुलह के सभी प्रयास विफल हो गए हैं और अब किसी भी प्रयास से इस दिशा में सफलता की कोई भी संभावना नहीं है ;

(iii) पक्षकारों ने निर्वाहिका, बच्चे की अभिरक्षा और अन्य लंबित विवाद्यकों सहित अपने विवादों का परिनिर्धारण वास्तविक रूप से कर लिया है ;

(iv) इस प्रकार प्रतीक्षा अवधि केवल पक्षकारों की पीड़ा को बढ़ाएगी ।

अधित्यजन का आवेदन प्रथम समावेदन के एक सप्ताह के बाद अधित्यजन की प्रार्थना का कारण बताते हुए फाइल किया जा सकता है । यदि उपरोक्त शर्तों को पूरा किया जाता है तो विद्वतीय समावेदन के लिए प्रतीक्षा अवधि का अधित्यजन करना संबंधित न्यायालय के विवेक पर होगा ।

20. चूंकि हमारा विचार यह है कि धारा 13ख(2) में उल्लिखित अवधि आज्ञापक नहीं है बल्कि निदेशात्मक है इसलिए

[1] (2017) 3 एस. एस. सी. 746 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 4417.

न्यायालय इस बात के लिए स्वतंत्र है कि वह प्रत्येक मामले के तथ्य और परिस्थितियों के अनुसार अपने विवेक का प्रक्षेप वहां करे जहां पर पक्षकारों के फिर से एक साथ रहने की नहीं अपितु आनुकल्पिक पुनर्वास की संभावना हो ।"

5. यदि याची द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर (जिसे हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन फाइल किया जाना चाहिए था) विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि पक्षकारों की एक 12 वर्ष की पुत्री है । इसके अतिरिक्त, आवेदन में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पक्षकारों से आनुकल्पिक पुनर्वास की संभावना की जा सके । हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के उपबंधों का मूल उद्देश्य प्रतिवाद करने वाले पक्षकारों को अपने पृथक्करण के निर्णय पर और अधिक विचार करने का अवसर देना है । हालांकि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के उपबंध आज्ञापक नहीं हैं अपितु निदेशात्मक प्रकृति के हैं, फिर भी शीतलन अवधि (प्रतीक्षा अवधि) को तब तक अधित्यजित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि पक्षकारों के पुनर्वास की दृढ़ संभावना न हो । वैवाहिक जीवन को बचाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए । आगे आवेदन में ऐसा कुछ भी नहीं है कि यदि शीतलन अवधि का अधित्यजन कर नहीं दिया जाता है, तो यह पक्षकारों की पीड़ा को लंबे समय तक बढ़ा देगा । इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का यह विचार है कि याची हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन प्रदत्त की गई छह महीनों की शीतलन अवधि में अधित्यजन करने के लिए एक दृढ़ मामला बनाने में विफल रहा है । तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को खारिज करके कोई भूल नहीं की ।

6. परिणामस्वरूप, यह याचिका असफल रहती है और एतद्द्वारा खारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

अम./अस.

संसद् के अधिनियम

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007

(2007 का अधिनियम संख्यांक 56)

[29 दिसम्बर, 2007]

संविधान के अधीन गारंटीकृत और मान्यताप्राप्त माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के भरणपोषण तथा कल्याण के लिए अधिक प्रभावी उपबंधों का और उनसे संबंधित या उनके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के अठावनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार, लागू होना और प्रारंभ** – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 है ।

(2) इसका विस्तार, जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है और यह भारत के बाहर भारत के नागरिकों को भी लागू होगा ।

(3) यह किसी राज्य में, उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "बालक" के अंतर्गत पुत्र, पुत्री, पौत्र और पौत्री हैं, किन्तु इसमें कोई अवयस्क सम्मिलित नहीं है ;

(ख) "भरणपोषण" में आहार, वस्त्र, निवास और चिकित्सीय परिचर्या और उपचार उपलब्ध कराना सम्मिलित है ;

(ग) "अवयस्क" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसके बारे में भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) के उपबंधों के अधीन यह समझा जाता है कि उसने वयस्कता की आयु प्राप्त नहीं की है ;

(घ) "माता-पिता" से पिता या माता अभिप्रेत है, चाहे वह, यथास्थिति, जैविक, दत्तक या सौतेला पिता या सौतेली माता है, चाहे माता या पिता कोई वरिष्ठ नागरिक है या नहीं ;

(ङ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(च) "संपत्ति" से किसी प्रकार की संपत्ति अभिप्रेत है, चाहे वह जंगम या स्थावर, पैतृक या स्वयं अर्जित, मूर्त या अमूर्त हो और जिसमें ऐसी संपत्ति में अधिकार या हित सम्मिलित हैं ;

(छ) "नातेदार" से नि:संतान वरिष्ठ नागरिक का कोई विधिक वारिस अभिप्रेत है, जो अवयस्क नहीं है तथा उसकी मृत्यु के पश्चात् उसकी संपत्ति उसके कब्जे में है या विरासत में प्राप्त करेगा ;

(ज) "वरिष्ठ नागरिक" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जो भारत का नागरिक है और जिसने साठ वर्ष या अधिक आयु प्राप्त कर ली है ;

(झ) किसी संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में "राज्य सरकार" से संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त उसका प्रशासक अभिप्रेत है ;

(ञ) "अधिकरण" से धारा 7 के अधीन गठित भरणपोषण अधिकरण अभिप्रेत है ;

(ट) "कल्याण" से वरिष्ठ नागरिकों के लिए आवश्यक आहार, स्वास्थ्य देखरेख, आमोद-प्रमोद केन्द्रों और अन्य सुख-सुविधाओं की व्यवस्था करना अभिप्रेत है ।

3. **अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होना** – इस अधिनियम के

उपबंधों का, इस अधिनियम से भिन्न किसी अधिनियमिति में या इस अधिनियम से भिन्न किसी अधिनियमिति के कारण प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में अंतर्विष्ट उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभाव होगा ।

अध्याय 2

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण

4. **माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण** – (1) कोई वरिष्ठ नागरिक, जिसके अंतर्गत माता-पिता हैं, जो स्वयं के अर्जन से या उसके स्वामित्वाधीन संपत्ति में से स्वयं का भरणपोषण करने में असमर्थ है, –

(i) माता-पिता या पितामह-पितामही की दशा में, अपने एक या अधिक बालकों के विरुद्ध, जो अवयस्क नहीं हैं ;

(ii) किसी नि:संतान वरिष्ठ नागरिक की दशा में, अपने ऐसे नातेदार के विरुद्ध, जो धारा 2 के खंड (छ) में निर्दिष्ट है,

धारा 5 के अधीन कोई आवेदन करने का हकदार होगा ।

(2) किसी वरिष्ठ नागरिक का भरणपोषण करने के लिए, यथास्थिति, बालक या नातेदार की बाध्यता ऐसे नागरिक की आवश्यकताओं तक विस्तारित होती है, जिससे कि वरिष्ठ नागरिक एक सामान्य जीवन व्यतीत कर सके ।

(3) अपने माता-पिता का भरणपोषण करने की बालक की बाध्यता, यथास्थिति, ऐसे माता-पिता अथवा पिता या माता या दोनों की आवश्यकता तक विस्तारित होती है, जिससे कि ऐसे माता-पिता, सामान्य जीवन व्यतीत कर सकें ।

(4) कोई व्यक्ति, जो किसी वरिष्ठ नागरिक का नातेदार है और जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, ऐसे वरिष्ठ नागरिक का भरणपोषण करेगा, परन्तु यह तब जब कि ऐसे वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति उसके कब्जे में है या वह ऐसे वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति को विरासत में प्राप्त करेगा :

परन्तु जहां किसी वरिष्ठ नागरिक की संपत्ति को एक से अधिक नातेदार विरासत में प्राप्त करने के हकदार हैं, वहां भरणपोषण, ऐसे नातेदारों द्वारा उस अनुपात में संदेय होगा, जिसमें वे उसकी संपत्ति को विरासत में प्राप्त करेंगे ।

5. **भरणपोषण के लिए आवेदन** – (1) धारा 4 के अधीन भरणपोषण के लिए कोई आवेदन, –

(क) यथास्थिति, किसी वरिष्ठ नागरिक या किसी माता-पिता द्वारा किया जा सकेगा ; या

(ख) यदि वह अशक्त है तो उसके द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति या संगठन द्वारा किया जा सकेगा ; या

(ग) अधिकरण स्वप्रेरणा से संज्ञान ले सकेगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए "संगठन" से सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन रजिस्ट्रीकृत कोई स्वैच्छिक संगम अभिप्रेत है ।

(2) अधिकरण, इस धारा के अधीन भरणपोषण के लिए मासिक भत्ते की बाबत कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, ऐसे बालक या नातेदार को ऐसे वरिष्ठ नागरिक के जिसके अन्तर्गत माता-पिता भी हैं, अन्तरिम भऱणपोषण के लिए मासिक भत्ता देने और उसका ऐसे वरिष्ठ नागरिक को, जिसके अंतर्गत माता-पिता भी हैं, संदाय करने का आदेश कर सकेगा, जो अधिकरण समय-समय पर निदेशित करे ।

(3) उपधारा (1) के अधीन भरणपोषण के लिए आवेदन की प्राप्ति पर, बालक या नातेदार को आवेदन की सूचना देने के पश्चात् और पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, भरणपोषण की रकम का अवधारण करने के लिए कोई जांच कर सकेगा ।

(4) भरणपोषण के लिए मासिक भत्ते हेतु और कार्यवाही के खर्चे के लिए उपधारा (2) के अधीन फाइल किए गए किसी आवेदन का, ऐसे व्यक्ति को आवेदन की सूचना की तामील की तारीख से नब्बे दिन के भीतर निपटान किया जाएगा :

परन्तु अधिकरण, आपवादिक परिस्थितियों में उक्त अवधि को, कारणों को लेखबद्ध करते हुए एक बार में तीस दिन की अधिकतम अवधि के लिए, विस्तारित कर सकेगा ।

(5) उपधारा (1) के अधीन भरणपोषण के लिए कोई आवेदन एक या अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध फाइल किया जा सकेगा :

परन्तु ऐसे बालक या नातेदार भरणपोषण के लिए आवेदन में माता-पिता का भरणपोषण करने के लिए दायी अन्य व्यक्ति को पक्षकार बना सकेंगे ।

(6) जहां भरणपोषण का आदेश एक या अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध किया गया था, वहां उनमें से एक व्यक्ति की मृत्यु से भरणपोषण का संदाय जारी रखने के अन्य व्यक्तियों के दायित्व पर प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(7) भरणपोषण के लिए कोई ऐसा भत्ता और कार्यवाही के खर्चे आदेश की तारीख से या यदि ऐसा आदेश किया जाता है, यथास्थिति, भरणपोषण या कार्यवाही के खर्चे, आवेदन की तारीख से संदेय होंगे ।

(8) यदि ऐसे बालक या नातेदार, जिन्हें ऐसा आदेश दिया जाता है, पर्याप्त हेतुक के बिना आदेश का पालन करने में असफल रहते हैं, तो कोई ऐसा अधिकरण, आदेश के प्रत्येक भंग के लिए, जुर्माने का उद्ग्रहण करने के लिए उपबंधित रीति में देय रकम के उद्ग्रहण का वारंट जारी कर सकेगा और ऐसे व्यक्ति को, यथास्थिति, प्रत्येक मास के संपूर्ण भरणपोषण भत्ते या उसके किसी भाग के लिए और कार्यवाही के खर्चे के लिए ऐसे वारंट के निष्पादन के पश्चात् असंदत्त शेष भाग के लिए कारावास से, जो एक मास तक का हो सकेगा या यदि संदाय शीघ्र किया जाता है तो संदाय करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, दंडादिष्ट कर सकेगा :

परन्तु इस धारा के अधीन शोध्य किसी रकम की वसूली के लिए कोई वारंट तब तक जारी नहीं किया जाएगा, जब तक उस तारीख से, जिसको यह रकम शोध्य हो जाती है, तीन मास की अवधि के भीतर उस रकम के उद्ग्रहण के लिए अधिकरण को आवेदन नहीं किया जाएगा ।

6. **अधिकारिता और प्रक्रिया** – (1) धारा 5 के अधीन बालकों या

नातेदारों के विरुद्ध किसी जिले में कार्यवाही शुरू की जा सकेगी, –

(क) जहां वह निवास करता है या उसने अंतिम बार निवास किया है ; या

(ख) जहां बालक या नातेदार निवास करता है ।

(2) धारा 5 के अधीन आवेदन की प्राप्ति पर, अधिकरण, उस बालक या नातेदार, जिसके विरुद्ध आवेदन फाइल किया गया है, की उपस्थिति उपाप्त करने के लिए आदेशिका जारी करेगा ।

(3) बालक या नातेदार की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए अधिकरण को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अधीन यथाउपबंधित प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट की शक्तियां होंगी ।

(4) ऐसी कार्यवाहियों के सभी साक्ष्य उस बालक या नातेदार की, जिसके विरुद्ध भरणपोषण के संदाय के लिए आदेश किया जाना प्रस्तावित है, उपस्थिति में लिए जाएंगे और समन मामलों के लिए विहित रीति में अभिलिखित किए जाएंगे :

परन्तु यदि अधिकरण का यह समाधान हो जाता है कि वह बालक या नातेदार जिसके विरुद्ध भरणपोषण के संदाय के लिए आदेश किया जाना प्रस्तावित है, जानबूझकर तामील से बच रहा है, या जानबूझकर अधिकरण में उपस्थित होने की उपेक्षा कर रहा है, तो अधिकरण मामले की एक पक्षीय रूप से सुनवाई करने और अवधारित करने के लिए कार्यवाही कर सकेगा ।

(5) जहां बालक या नातेदार भारत से बाहर निवास कर रहा है, वहां अधिकरण द्वारा समन ऐसे प्राधिकारी के माध्यम से तामील किए जाएंगे, जिसे केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ।

(6) अधिकरण धारा 5 के अधीन आवेदन की सुनवाई करने से पूर्व उसे सुलह अधिकारी को निर्दिष्ट कर सकेगा और ऐसा सुलह अधिकारी अपने निष्कर्षों को एक मास के भीतर प्रस्तुत करेगा और यदि सौहार्द्रपूर्ण सुलह हो गई है तो अधिकरण उस आशय का आदेश पारित करेगा ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए "सुलह अधिकारी" से धारा 5 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट कोई व्यक्ति या संगठन का प्रतिनिधि या धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अभिहित भरणपोषण अधिकारी या इस प्रयोजन के लिए अधिकरण द्वारा नामनिर्दिष्ट कोई अन्य व्यक्ति अभिप्रेत है ।

7. **भरणपोषण अधिकरण का गठन** – (1) राज्य सरकार, इस अधिनियम में प्रारंभ की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, प्रत्येक उपखंड के लिए एक या अधिक अधिकरणों का, जो वह धारा 5 के अधीन भरणपोषण के आदेश के न्यायनिर्णयन और उसका विनिश्चय करने के लिए आवश्यक समझे, गठन करेगी ।

(2) अधिकरण की अध्यक्षता राज्य के उपखंड अधिकारी से अन्यून पंक्ति के अधिकारी द्वारा की जाएगी ।

(3) जहां, किसी क्षेत्र के लिए दो या अधिक अधिकरण गठित किए जाते हैं, वहां राज्य सरकार, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, उनके बीच कारबार के वितरण को विनियमित कर सकेगी ।

8. **जांच की दशा में संक्षिप्त प्रक्रिया** – (1) अधिकरण, धारा 5 के अधीन कोई जांच करने में, ऐसे किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए, जो इस निमित्त राज्य सरकार द्वारा विहित किए जाएं, ऐसी संक्षिप्त प्रक्रिया का अनुसरण करेगा, जो वह ठीक समझे ।

(2) अधिकरण को शपथ पर साक्ष्य लेने और साक्षियों को हाजिर कराने तथा दस्तावेजों और भौतिक पदार्थों को प्रकट करने का पता कराने और उनको पेश करने के लिए बाध्य करने के प्रयोजन के लिए तथा ऐसे अन्य प्रयोजनों के लिए, जो विहित किए जाएं, सिविल न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी और अधिकरण दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 195 और अध्याय 26 के सभी प्रयोजनों के लिए सिविल न्यायालय समझा जाएगा ।

(3) इस निमित्त बनाए जाने वाले किसी नियम के अधीन रहते हुए, अधिकरण भरणपोषण के लिए किसी दावे का न्यायनिर्णयन करने

और उसका विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए, जांच करने में उसकी सहायता करने के लिए ऐसे किसी एक या अधिक व्यक्तियों को चुन सकेगा, जिनके पास जांच से सुसंगत किसी विषय का विशेष ज्ञान हो ।

9. **भरणपोषण का आदेश** – (1) यदि, यथास्थिति, बालक या नातेदार ऐसे वरिष्ठ नागरिक का, जो स्वयं अपना भरणपोषण करने में असमर्थ हैं, भरणपोषण करने से उपेक्षा या इनकार करते हैं तो अधिकरण, ऐसी उपेक्षा या इनकार के बारे में समाधान हो जाने पर, ऐसे बालकों या नातेदारों को ऐसे वरिष्ठ नागरिक के भरणपोषण के लिए ऐसी मासिक दर पर मासिक भत्ता देने का, जो अधिकरण ठीक समझे और ऐसे वरिष्ठ नागरिक को उस भत्ते का संदाय करने का आदेश दे सकेगा जो अधिकरण समय-समय पर निदेश दे ।

(2) ऐसा अधिकतम भरणपोषण भत्ता, जिसका ऐसे अधिकरण द्वारा आदेश दिया जाए, वह होगा, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए और जो दस हजार रुपए प्रति मास से अधिक नहीं होगा ।

10. **भत्ते में परिवर्तन** – (1) भरणपोषण के लिए किसी तथ्य के दुर्व्यपदेशन या भूल के या धारा 5 के अधीन मासिक भत्ता प्राप्त करने वाले किसी व्यक्ति की अथवा भरणपोषण के लिए मासिक भत्ते का संदाय करने के लिए उस धारा के अधीन आदेशित व्यक्ति की परिस्थितियों में परिवर्तन पर, अधिकरण भरणपोषण के भत्ते में ऐसा परिवर्तन कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

(2) जहां, अधिकरण को यह प्रतीत होता है कि किसी सक्षम सिविल न्यायालय के किसी विनिश्चय के परिणामस्वरूप धारा 9 के अधीन किए गए किसी आदेश को रद्द या परिवर्तित किया जाना चाहिए तो वह तद्नुसार, यथास्थिति, उस आदेश को रद्द या परिवर्तित कर सकेगा ।

11. **भरणपोषण के आदेश का प्रवर्तन** – (1) भरणपोषण के आदेश और कार्यवाहियों के व्ययों के संबंध में आदेश की प्रति, यथास्थिति, उस वरिष्ठ नागरिक या माता-पिता को, जिसके पक्ष में वह आदेश किया गया है किसी फीस के संदाय के बिना दी जाएगी और ऐसा आदेश किसी

अधिकरण द्वारा ऐसे किसी स्थान पर, जहां वह व्यक्ति है, जिसके विरुद्ध वह आदेश किया गया है, पक्षकारों की पहचान और, यथास्थिति, शोध्य भत्ते, या व्यय के असंदाय के बारे में उस अधिकरण का समाधान हो जाने पर प्रवृत्त किया जाएगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन किए गए भरणपोषण के आदेश का वही बल और प्रभाव होगा जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 9 के अधीन पारित आदेश का होता है और वह उस संहिता द्वारा ऐसे आदेश के निष्पादन के लिए विहित रीति में निष्पादित किया जाएगा ।

12. **कतिपय मामलों में भरणपोषण के संबंध में विकल्प** – दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 9 में किसी बात के होते हुए भी, जहां कोई वरिष्ठ नागरिक या माता-पिता उक्त अध्याय के अधीन भरणपोषण के लिए हकदार हैं और इस अधिनियम के अधीन भरणपोषण के लिए भी हकदार हैं, वहां, वह उक्त संहिता के अध्याय 9 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उन दोनों अधिनियमों में से किसी के अधीन ऐसे भरणपोषण का दावा कर सकेगा, किन्तु दोनों के अधीन नहीं ।

13. **भरणपोषण की रकम का जमा किया जाना** – जब इस अध्याय के अधीन कोई आदेश किया जाता है तब ऐसा बालक या नातेदार, जिससे ऐसे आदेश के निबंधनों के अनुसार किसी रकम का संदाय करना अपेक्षित है, अधिकरण द्वारा आदेश सुनाए जाने की तारीख से तीस दिन के भीतर आदेशित संपूर्ण रकम ऐसी रीति में जमा करेगा, जो अधिकरण निदेश दे ।

14. **जहां कोई दावा अनुज्ञात किया जाता है वहां ब्याज का अधिनिर्णय** – जहां कोई अधिकरण इस अधिनियम के अधीन भरणपोषण का कोई आदेश करता है, वहां ऐसा अधिकरण यह निदेश दे सकेगा कि भरणपोषण की रकम के अतिरिक्त, ऐसी दर पर और ऐसी तारीख से, जो आवेदन करने की तारीख से पूर्व की तारीख न हो और जो अधिकरण द्वारा अवधारित की जाए, साधारण ब्याज का भी संदाय किया जाएगा जो पांच प्रतिशत से कम और अठारह प्रतिशत से अधिक नहीं होगा :

परंतु जहां दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 9 के अधीन भरणपोषण के लिए कोई आवेदन इस अधिनियम के प्रारंभ पर किसी न्यायालय के समक्ष लंबित है, वहां न्यायालय माता-पिता के अनुरोध पर ऐसे आवेदन को वापस लेने के लिए अनुज्ञात करेगा और ऐसे माता-पिता अधिकरण के समक्ष भरणपोषण के लिए आवेदन फाइल करने के हकदार होंगे ।

15. **अपील अधिकरण का गठन** – (1) राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील की सुनवाई करने के लिए प्रत्येक जिले के लिए एक अपील अधिकरण का गठन कर सकेगी ।

(2) अपील अधिकरण का अध्यक्ष ऐसा अधिकारी होगा, जो जिला मजिस्ट्रेट की पंक्ति से नीचे का न हो ।

16. **अपीलें** – (1) अधिकरण के किसी आदेश द्वारा व्यथित, यथास्थिति, कोई वरिष्ठ नागरिक या कोई माता-पिता आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर अपील अधिकरण को अपील कर सकेगा :

परंतु अपील पर, वह बालक या रिश्तेदार, जिससे ऐसे भरणपोषण के आदेश के निबंधनों के अनुसार किसी रकम का संदाय किए जाने की अपेक्षा की गई है, ऐसे माता-पिता को इस प्रकार आदेशित रकम का संदाय अपील अधिकरण द्वारा निदेशित रीति से करता रहेगा :

परंतु यह और कि अपील अधिकरण, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी समय के भीतर अपील करने से पर्याप्त कारण से निवारित हुआ था, साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात् अपील ग्रहण कर सकेगा ।

(2) अपील अधिकरण, अपील की प्राप्ति पर, प्रत्यर्थी पर सूचना की तामील करवाएगा ।

(3) अपील अधिकरण उस अधिकरण से, जिसके आदेश के विरुद्ध अपील की जाती है, कार्यवाहियों का अभिलेख मंगा सकेगा ।

(4) अपील अधिकरण, अपील और मंगाए गए अभिलेख की परीक्षा करने के पश्चात् या तो अपील को मंजूर कर सकेगा या खारिज कर सकेगा ।

(5) अपील अधिकरण, अधिकरण के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई अपील का न्यायनिर्णयन और विनिश्चय करेगा तथा अपील अधिकरण का आदेश अंतिम होगा :

परंतु कोई अपील तब तक खारिज नहीं की जाएगी, जब तक कि दोनों पक्षकारों को वैयक्तिक रूप से या सम्यक् रूप से प्राधिकृत प्रतिनिधि के माध्यम से सुने जाने का अवसर न दे दिया गया हो ।

(6) अपील अधिकरण अपना आदेश अपील की प्राप्ति के एक मास के भीतर लिखित में सुनाने का प्रयास करेगा ।

(7) उपधारा (5) के अधीन किए गए प्रत्येक आदेश की एक-एक प्रति दोनों पक्षकारों को नि:शुल्क भेजी जाएगी ।

17. **विधिक अभ्यावेदन का अधिकार** – किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, अधिकरण या अपील अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के किसी पक्षकार का प्रतिनिधित्व किसी विधि व्यवसायी द्वारा नहीं किया जाएगा ।

18. **भरणपोषण अधिकारी** – (1) राज्य सरकार, जिला समाज कल्याण अधिकारी या जिला समाज कल्याण अधिकारी की पंक्ति से अन्यून पंक्ति के किसी अधिकारी को, चाहे वह किसी नाम से ज्ञात हो, भरणपोषण अधिकारी के रूप में पदाभिहित करेगी ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट भरणपोषण अधिकारी, यदि कोई माता-पिता ऐसी वांछा करे, उसका, यथास्थिति, अधिकरण या अपील अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के दौरान प्रतिनिधित्व करेगा ।

अध्याय 3

वृद्धाश्रमों की स्थापना

19. **वृद्धाश्रमों की स्थापना** – (1) राज्य सरकार, ऐसी पहुंच के भीतर के स्थानों पर, चरणबद्ध रीति में, उतने वृद्धाश्रम स्थापित करेगी और उनका अनुरक्षण करेगी, जितने वह आवश्यक समझे और आरंभ में प्रत्येक जिले में कम-से-कम एक ऐसे वृद्धाश्रम की स्थापना करेगी, जिसमें न्यूनतम एक सौ पचास ऐसे वरिष्ठ नागरिकों को आवास सुविधा दी जा सके, जो निर्धन हैं ।

(2) राज्य सरकार, वृद्धाश्रमों के प्रबंध की एक स्कीम विहित करेगी, जिसके अंतर्गत उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के मानदंड और विभिन्न प्रकार की सेवाएं भी हैं, जो ऐसे आश्रमों के निवासियों को चिकित्सीय देख-रेख और मनोरंजन के साधनों के लिए आवश्यक हैं ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "निर्धन" से कोई ऐसा वरिष्ठ नागरिक अभिप्रेत है, जिसके पास स्वयं के भरणपोषण करने के लिए उतने पर्याप्त साधन नहीं हैं, जो राज्य सरकार द्वारा, समय-समय पर अवधारित किए जाएं ।

अध्याय 4

वरिष्ठ नागरिकों की चिकित्सीय देख-रेख के लिए उपबंध

20. **वरिष्ठ नागरिकों के लिए चिकित्सा सहायता** – राज्य सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि, –

(i) सरकारी अस्पताल या सरकार द्वारा पूर्णत: या भागत: वित्तपोषित अस्पताल, सभी वरिष्ठ नागरिकों को, यथासंभव, बिस्तर प्रदान करेंगे ;

(ii) वरिष्ठ नागरिकों के लिए पृथक् पंक्तियों की व्यवस्था की जाएगी ;

(iii) चिरकारी, जानलेवा और ह्रासी रोगों के उपचार के लिए सुविधाएं वरिष्ठ नागरिकों तक विस्तारित की जाएं ;

(iv) चिरकारी वृद्धावस्था के रोगों और वृद्धावस्था के संबंध में अनुसंधान क्रियाकलापों का विस्तार किया जाए ;

(v) जराचिकित्सीय देख-रेख में अनुभव रखने वाले चिकित्सा अधिकारी की अध्यक्षता वाले प्रत्येक जिला अस्पताल में जराचिकित्सा के रोगियों के लिए निर्दिष्ट सुविधाएं नि:शुल्क दी जाएं ।

अध्याय 5

वरिष्ठ नागरिकों के जीवन और संपत्ति की संरक्षा

21. **वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण के लिए प्रचार, जागरूकता, आदि के उपाय** – राज्य सरकार, यह सुनिश्चित करने के लिए सभी उपाय

करेगी कि, –

(i) इस अधिनियम के उपबंधों का जनमाध्यम, जिसके अंतर्गत टेलीविजन, रेडियो और मुद्रण माध्यम भी है, से नियमित अंतरालों पर व्यापक प्रचार किया जाए ;

(ii) केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार के अधिकारियों को, जिसके अंतर्गत पुलिस अधिकारी और न्यायिक सेवा के सदस्य भी हैं, इस अधिनियम से संबंधित मुद्दों पर समय-समय पर सुग्राही और जागरूक होने का प्रशिक्षण दिया जाए ;

(iii) वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण से संबंधित मुद्दों का समाधान करने के लिए विधि, गृह, स्वास्थ्य और कल्याण से संबद्ध मंत्रालयों या विभागों द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के बीच प्रभावी समन्वय और उनका कालिक पुनर्विलोकन किया जाए ।

22. **प्राधिकारी, जिन्हें इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए विनिर्दिष्ट किया जा सकेगा** – (1) राज्य सरकार, किसी जिला मजिस्ट्रेट को ऐसी शक्तियां प्रदत्त कर सकेगी और उस पर ऐसे कर्तव्य अधिरोपित कर सकेगी, जो इस अधिनियम के उपबंधों का उचित रूप से पालन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो, और जिला मजिस्ट्रेट, अपने अधीनस्थ ऐसे अधिकारी को, जो इस प्रकार प्रदत्त या किसी शक्ति का प्रयोग और अधिरोपित सभी या किसी कर्तव्य का पालन करेगा और वे स्थानीय सीमाएं विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिनके भीतर ऐसी शक्तियों या कर्तव्यों का, जो विहित किए जाएं, उस अधिकारी द्वारा पालन किया जाएगा ।

(2) राज्य सरकार, वरिष्ठ नागरिकों के जीवन और संपत्ति को सुरक्षा प्रदान करने के लिए एक व्यापक कार्य योजना विहित करेगी ।

23. **कतिपय परिस्थितियों में संपत्ति के अंतरण का शून्य होना** – (1) जहां कोई वरिष्ठ नागरिक, जिसने इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् अपनी संपत्ति का दान के रूप में या अन्यथा अंतरण इस शर्त के अधीन रहते हुए किया है कि अंतरिती, अंतरक को बुनियादी सुख-सुविधाएं और बुनियादी भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करेगा और ऐसा

अंतरिती ऐसी सुख-सुविधाओं तथा भौतिक आवश्यकताएं प्रदान करने से इनकार करेगा या असफल रहेगा तो संपत्ति का उक्त अंतरण कपट या प्रपीड़न या अनावश्यक प्रभाव के अधीन किया गया समझा जाएगा और अंतरक के विकल्प पर अधिकरण द्वारा शून्य घोषित किया जाएगा ।

(2) जहां किसी वरिष्ठ नागरिक को किसी संपदा से भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार है और ऐसी संपदा या उसका भाग अंतरित कर दिया जाता है, यदि अंतरिती को उस अधिकार की जानकारी है या, यदि अंतरण बिना प्रतिफल के है तो भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकार अंतरिती के विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकेगा ; न कि उस अंतरिती के विरुद्ध जो प्रतिफल के लिए है और जिसके पास अधिकार की सूचना नहीं है ।

(3) यदि कोई वरिष्ठ नागरिक उपधारा (1) और उपधारा (2) के अधीन अधिकार को प्रवर्तित कराने में असमर्थ है तो धारा 5 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट किसी संगठन द्वारा उसकी ओर से कार्रवाई की जा सकेगी ।

अध्याय 6

अपराध और विचारण के लिए प्रक्रिया

24. **वरिष्ठ नागरिकों को आरक्षित छोड़ना और उनका परित्याग** – जो कोई, जिसके पास वरिष्ठ नागरिक की देख-रेख या सुरक्षा है, ऐसे वरिष्ठ नागरिक को, किसी स्थान में, ऐसे वरिष्ठ नागरिक का पूर्णतया परित्याग करने के आशय से छोड़ेगा, वह ऐसी अवधि के किसी कारावास से, जो तीन मास तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो पांच हजार रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडनीय होगा ।

25. **अपराधों का संज्ञान** – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक अपराध संज्ञेय और जमानतीय होगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का किसी मजिस्ट्रेट द्वारा संक्षिप्त विचारण किया जाएगा ।

अध्याय 7

प्रकीर्ण

26. **अधिकारियों का लोक सेवक होना** – इस अधिनियम के अधीन कृत्यों को प्रयोग करने के लिए नियुक्त किए गए प्रत्येक अधिकारी या कर्मचारिवृन्द को, भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थान्तर्गत लोक सेवक समझा जाएगा ।

27. **सिविल न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन** – किसी सिविल न्यायालय को ऐसे किसी मामले में अधिकारिता नहीं होगी, जिसे इस अधिनियम का कोई उपबंध लागू होता है और किसी सिविल न्यायालय द्वारा ऐसी किसी बात की बाबत, जो इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन की गई है या किए जाने के लिए आशयित है, कोई व्यादेश नहीं दिया जाएगा ।

28. **सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण** – इस अधिनियम या तद्धीन बनाए गए किन्हीं नियमों या आदेशों के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के संबंध में कोई भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों या स्थानीय प्राधिकारी या उस सरकार के किसी अधिकारी के विरुद्ध न होगी ।

29. **कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति** – यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो राज्य सरकार राजपत्र में प्रकाशित ऐसे आदेश द्वारा, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हो, ऐसे उपबंध बना सकेगी, जो उस कठिनाई को दूर करने के लिए उसे आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों :

परंतु ऐसा कोई आदेश इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

30. **निदेश देने की केन्द्रीय सरकार की शक्ति** – केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों का निष्पादन करने के बारे में किसी राज्य सरकार को निदेश दे सकेगी ।

31. **केन्द्रीय सरकार की पुनर्विलोकन की शक्ति** – केन्द्रीय सरकार,

राज्य सरकारों द्वारा इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन की प्रगति का कालिक पुनर्विलोकन और निगरानी कर सकेगी ।

32. **नियम बनाने की राज्य सरकार की शक्ति** – (1) राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बना सकेगी ।

(2) पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित के लिए उपबंध कर सकेंगे –

(क) ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जो धारा 8 की उपधारा (1) के अधीन विहित किए जाएं, धारा 5 के अधीन जांच करने की रीति ;

(ख) धारा 8 की उपधारा (2) के अधीन अन्य प्रयोजनों के लिए अधिकरण की शक्ति और प्रक्रिया ;

(ग) अधिकतम भरणपोषण भत्ता, जो धारा 9 की उपधारा (2) के अधीन अधिकरण द्वारा आदेशित किया जाए ;

(घ) धारा 19 की उपधारा (2) के अधीन वृद्धाश्रम के प्रबंध के लिए स्कीम, जिसके अंतर्गत उनके द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं के मानक और विभिन्न प्रकार की सेवाएं भी हैं, जो ऐसे आश्रमों के निवासियों की चिकित्सीय देख-रेख और मनोरंजन के साधनों के लिए आवश्यक हों ;

(ङ) धारा 22 की उपधारा (1) के अधीन, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए प्राधिकारियों की शक्तियां और कर्तव्य ;

(च) धारा 22 की उपधारा (2) के अधीन वरिष्ठ नागरिकों के जीवन और संपत्ति को सुरक्षा प्रदान करने के लिए व्यापक कार्य योजना ;

(छ) कोई अन्य विषय, जो विहित किया जाना है या विहित किया जाए ।

(3) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, विधान-मंडल के प्रत्येक सदन के समक्ष, जहां वह दो सदनों से मिलकर बना है या जहां ऐसे विधान-मंडल में एक सदन है, वहां उस सदन के समक्ष, रखा जाएगा ।

———

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
5.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
6.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in